ISSN (P) : 0976-5255
(e) : 2454-339X
Impact Factor : 8.783 (SJIF)

कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ

द्वारा

शोध मंथन

A Peer Reviewed & Refereed International Journal

Vol. - XIV | Special Issue | Jan.2023

JOURNAL ANU BOOKS
Delhi • Meerut • Glasgow (U.K.)
www.anubooks.com

शोधमंथन
हिन्दी जर्नल (पत्रिका)

शोधमंथन में समाज, साहित्य, कला, राजनीति, अर्थ, मनोविज्ञान, गृहविज्ञान, पुस्तकालयविज्ञान, पत्रकारिता शिक्षा, कानून, इतिहास, दर्शन, महिला शिक्षा, महिला जगत, पुरूष, बाल जगत आदि के जुड़े विषय पर उत्कृष्ट, मौलिक, तरूपरक, वैज्ञानिक पद्धति से युक्त व प्रासंगिक उच्चस्तरीय शोधपत्रों को प्रकाशित किया जाता है।

एडवाइजरी कमेटीः

प्रोफेसर गौरी मॉडवाल, *डायरेक्टर, एन०डी०आई०टी०, नई दिल्ली*

प्रोफेसर शैलेंद्र सिंह गौरव, *डीन एवं विभागाध्यक्ष, कृषि संकाय, चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ*

प्रोफेसर विग्नेश त्यागी, *प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ*

प्रोफेसर सीमा पंवार, *प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, मेरठ कॉलिज, मेरठ*

डॉ0 किरण प्रदीप, *सह–आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, कला विभाग, कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ*

डॉ0 अंशु उज्जवल, *सहायक आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, अंग्रेजी विभाग, दिगम्बर जैन कॉलिज, बड़ौत*

संपादक मंडलः

प्रोफेसर (डॉ0) अलका चौधरी

प्राचार्या एवं संरक्षिका

कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ

मुख्य अतिथि सम्पादकः

डॉ0 पूनम सिंह,

सह–आचार्य, हिंदी विभाग

कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ

सहायक अतिथि संपादकः

डॉ0 सोनिका नागर, *सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग, कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ*

श्रीमती विनीता पुंडीर, *सहायक आचार्य, अर्थशास्त्र विभाग, कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ*

डॉ0 प्रीति सिंह, *सहायक आचार्य, अंग्रेजी विभाग, कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ*

सुश्री पूजा राय, *सहायक आचार्य, समाजशास्त्र विभाग, कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ*

Managing Editor : Vishal Mithal

- शोधमंथन त्रै–मासिक जर्नल है, यह विशेष अंक है।
- शोधमंथन में पूर्व प्रकाशित लेख व पत्र प्रकाशित नहीं किये जाते।
- शोधमंथन के प्रबन्ध सम्पादक पूर्व निर्धारित हैं। यथा समय अतिथि सम्पादक चयनित किये जाते हैं।
- प्रकाशित सामग्री का कॉपी राइट जर्नल अनु बुक्स, मेरठ का है।
- अपना शोध पत्र प्रकाशित करवाने के लिये ई–मेल के द्वारा अपने पूर्ण पते के साथ भेजे।
- सम्पादकीय समिति का निर्णय अन्तिम होगा।
- **Authors are responsible for the cases of plagiarism.**

Published by Mithal K., Journal Anu Books, Meerut
Printed by D.K. Fine Art Printers Pvt. Ltd., New Delhi

Introduction

The Kanohar Lal Trust Society established Kanohar Lal Mahila Mahavidyalaya in 1969 to provide educational facilities to children and women in and around the city of Meerut. On 22 November 1968, the foundation stone of the college was laid by the Governor of Uttar Pradesh, B. Gopal Rai and the dream of Late Shri Seth Kanohar Lal ji, to open a women's degree college, came true. In a brief span of seven months, a huge two-storey building was constructed, providing all the basic amenities.

On 5th July 1969, the Chief Minister of Uttar Pradesh, Shri Chandra Bhanu Gupta inaugurated the college. Established in the year of Gandhi's birth centenary, this college is imbued with the thoughts of Mahatma Gandhi and Ba Kasturba, "Simple living, high thoughts" and the great message of Lord Buddha "Appa Deepo Bhava". The admission of 250 girl students in the very first session clearly validated the importance of building this college. Presently, more than 2500 girl students are studying in the institution. In September 1969, the college was included under the UGC Act 1956, 2(4).

Message

Prof. (Dr.) Alka Chaudhary
Principal
Kanohar Lal Snatkottar Mahila Mahavidyalaya
Meerut

I am happy that the special issue of the journal **'Shodhmanthan'** is being published with the support of the editorial team of our college to achieve and promote excellence in Publication and applied research, this inter-disciplinary research journal bears testimony to the budding research culture of our college.

With the implementation of NEP, every higher education institution needs to focus on empowering students and faculties with sound knowledge and stimulate innovation by inspiring ideas with different perceptiveness, creative thinking and strong conviction to achieve true success.

This journal considers contribution from the faculties of Arts, Commerce, Education, law and Science. It covers various topics from Hindi, English, Sanskrit, Sociology, History, Education, Drawing and Painting, Music, Law and Psychology.

'Shodhmanthan' also welcomes high quality contribution from academia, research organizations and industry. I would like to thanks the contributors and the reviewers and congratulate the editorial board on the successful publication of this edition.

सम्पादकीय

डॉ0 पूनम सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर
विभागाध्यक्षा, हिंदी विभाग,
समन्वयक – शोध एवं अनुसन्धान प्रकोष्ट
कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ

शोधमंथन पत्रिका आपको समर्पित करते हुए हार्दिक प्रसन्नता की अनुभूति हो रही है। शोध एक ऐसी प्रक्रिया है जो निरंतर नवीन तथ्यों की खोज करती है। यह पत्रिका विभिन्न विषयों पर शोधपरक तथ्यों से युक्त संकलित दस्तावेज है। शोधमंथन पत्रिका को प्रकाशित करने की प्रेरणा प्राचार्या आदरणीया प्रो0 (डॉ0) अलका चौधरी जी के पूर्ण सहयोग एवं सानिध्य से प्राप्त हुई। उसी क्षण ऐसा लगा मानो कि मेरे मन के पक्षी को आसमान मिल गया हो। मैं समस्त सम्पादक मंडल (डॉ0 प्रीति सिंह, डॉ0 सोनिका नागर, सुश्री पूजा राय, श्रीमती विनीता पुंडीर) के प्रति हार्दिक धन्यवाद व्यक्त करती हूँ जिनकी कर्मठता एवं कार्यकुशलता से अल्प समय में ही पत्रिका को सम्पूर्ण आकार और कलेवर देने का प्रशंसनीय प्रयास किया गया। पत्रिका को पठनीय एवं शोधपरक बनाने में शोध आलेख के लेखक एवं लेखिकाओं का विशेष योगदान हैं, जिनके सम्पूर्ण सहयोग से यह पत्रिका पाठक वर्ग के बीच ज्ञानवृद्धि एवं शोध की दिशा को मार्गदर्शित करेगी। मैं परामर्श समिति (प्रो0 गौरी मॉडवाल, प्रो0 शैलेन्द्र गौरव, प्रो0 विग्नेश त्यागी, प्रो0 सीमा पंवार, डॉ0 किरण प्रदीप, डॉ0 अंशू उज्ज्वल) के प्रति भी आभार व्यक्त करती हूँ जिनके परामर्श से पत्रिका प्रकाशित करने की सफल योजना बनाई गयी। अनु बुक्स के प्रबंध सम्पादक श्रीमान विशाल मित्थल जी के प्रति भी हार्दिक आभार व्यक्त करती हूँ, जिनके सद्प्रयास से पत्रिका का मुद्रित रूप आप सभी के समक्ष प्रस्तुत है। अंत में मैं महाविद्यालय परिवार के समस्त सदस्यों के प्रति हार्दिक आभारी हूँ जिनके प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सहयोग से यह कार्य सम्पूर्ण रूप से पूर्ण हुआ। विभिन्न विषयों पर आधारित यह शोध पत्रिका हमारी समिति का प्रथम प्रयास है और यह आशा करती हूँ कि हमारे महाविद्यालय के शोध एवं अनुसंधान प्रकोष्ट के द्वारा भविष्य में भी इस प्रकार की शोध पत्रिकाओं का प्रकाशन होता रहेगा। यह पत्रिका शिक्षाविदों के गुणवत्तापूर्ण शोध कार्य प्रकाशित करने के लिए प्रतिबद्ध रहेगी, साथ ही शोधार्थियों एवं विद्यार्थियों के लिए बहुमूल्य एवं उपयोगी सिद्ध होगी, ऐसी मैं आशा करती हूँ।

ISSN: (P) 0976-5255 (e): 2454-339X
Impact Factor: 8.783 (SJIF)

शोधमंथन

हिन्दी शोध पत्रिका

A PEER REVIEWED & REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL IN HINDI

Vol. XIV **Special Issue** **Jan. 2023**

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan

अनुक्रमणिका

1. साठोत्तरी हिन्दी काव्य में दलितगत चेतना का निरूपण 1
प्रो0 स्वर्ण लताकदम
2. कला का अदभुत संसार 5
डॉ ज्योत्सना, के एम पिंकेश
3. अवध के नवाब और संगीत 10
डॉ0 रामशंकर, अशोक कुमार
4. भ्रष्टाचार के विरुद्ध संघर्ष : 'दिल्ली ऊंचा सुनती' है व 'सुनो शेफाली' नाटकों के संदर्भ में 15
डॉ० पूनम सिंह, श्रीमती राधा सैनी
5. अवनद्ध वाद्य तबला एवं उसका विकास 19
डॉ. वेणु वनिता, श्री आदित्य नाथ तिवारी
6. मुग़लकालीन आखेट चित्र 23
डॉ शुभा मालवीय
7. हिंदी की विदेशी नव भाषिक शैली सरनामी हिंदी के स्वरुप एवं साहित्य का विवेचनात्मक अध्ययन 26
सिद्धी गुप्ता
8. अनसुनी सिसकियों की दास्तान : व्यथ–व्यथा 31
ममता चावड़ा, डॉ0 स्वर्णलता कदम
9. लोक धर्म, देव : अवधारणा 36
डॉ० अपर्णा वत्स, प्रीति गुप्ता
10. सांस्कृतिक विविधता में एकता संगीत के विशेष संदर्भ में 39
निशा
11. स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ 43
डॉ0 अर्चना प्रिय आर्य
12. रवीन्द्र संगीत का व्यवहारिक पक्ष 48
निशा
13. संगीत का व्यावसायिक महत्व 51
डॉ0 अल्पना
14. प्रवासी महिला श्रमिकों का सामाजिक बहिष्करण 54
प्रतिमा चौरसिया

15. गुणवत्ता बढ़ाने के लिए शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सर्वोत्तम अभ्यास 58

डॉ० कृति अग्रवाल

16. स्वाधीनता आन्दोलन और भारतीय शिक्षा व्यवस्था 62

मिस ऋतु शर्मा

17. India is A Global Knowledge Superpower 65

Dr. Kiran Pradeep

18. Four R: Re-Awakening, Realisation, Returning and Reunion in The Novel Possession 70

Dr. Apeksha Tiwari

19. Immigration and Exile in The Select Fiction of Samuel Selvon 73

Dr. Preeti Singh

20. Rights of Women and Their Offspring Under Live-in Relationship 77

Urmila Devi, Prof. Dr. Amit Singh

21. Encouraging Women Entrepreneurship- Current Policies and Programmes 88

Dr. Parul Malik, Himanshu Sirohi

22. Role of Stakeholders in HEIs 93

Neetu Gupta

23. Right To Health in India: Constitutional and Judicial Perspective 98

Saroj Saini

24. Role of Mother Tongue in Cognitive and Personality Development of Children 102

Dr. Mamta Agarwal, Mrs. Seema Verma

25. The Role of Music in Managing Stress and Depression 105

Dr. Baby Dalal

26. Mobile: As A Risk Factor For Today's Children 109

Dr. Monika Garg

27. Effect of Environment on Loneliness in Boys and Girls of Divorced Parents 112

Dr. Vinita Gupta, Dr. Kavita Gupta

1

साठोत्तरी हिन्दी काव्य में दलितगत चेतना का निरूपण

प्रो0 स्वर्णलता कदम

प्रोफेसर, हिन्दी विभाग

शहीद मंगल पाण्डे राजकीय

महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मेरठ

ईमेलः swrankadam@gmail.com

सारांश

हम भारत के लोग आजादी के 75वीं वर्षगांठ काफी धूमधाम से मना रहे है, इन 75 वर्षों में हमने क्या खोया, क्या पाया? इसका आंकलन भी कर रहे है। क्योंकि हम आज भी सामाजिक कुरीतियों एवं धार्मिक आडम्बरों में जी रहे है। समाज और राजनीति क्षेत्र में उठी हुयी हर हलचल साहित्य की कोई न कोई विधा में प्रत्यक्ष या परोक्ष अभिव्यक्ति अवश्य पाती है। बदली हुई परिस्थितियाँ हमारी भावसत्ता और विचार में बदलाव पैदा करती हैं पिछले वर्षों में दलित चेतना, दलित आन्दोलन, दलित साहित्य ने साहित्य के आलोचकों, पाठकों, साहित्यकारों और सामाजिक चिन्तकों का ध्यान सबसे अधिक आकृष्ट किया है। इतना ही नही दलित चेतना एक प्रतिबद्ध लेखन और सशक्त आंदोलन का साक्ष्य प्रस्तुत कर रही है। जिस प्रकार बाबा साहेब के विषय में कहा गया है कि ''एक अछूत के हाथ में कलम आयी और उसने देश का 'संविधान' देकर अंधेरी बस्ती तक ज्ञान का उजाला फैलाया। जो आज तक गूँगे थे वे बोलने लगे, जो लूले लंगड़े थे वे चलने लगे। जिनके हाथ में झाडू था उनके हाथ में 'खड्ग' 'कलम' आया।' इस कलम के सहारे अपने दर्द को दलित साहित्य ने सहनशील बनाया है।

मुख्य बिन्दु

दलित चेतना, रीति रिवाज, मनुवादी व्यवस्था, दलितसाहित्य, भेदभाव की नीति, दलित आन्दोलन, बुद्धिजीवि वर्ग, साठोत्तरी हिन्दी।

''भारतीय साहित्य के लिए जो अनुभव आज तक अछूते थे, उनको पहली बार अछूत कहे गये साहित्यकारों की कलम ने स्पर्श किया और साहित्य में अम्बेडकरी विचारों की क्रान्तिधारा बहने लगी। जहाँ इन्सानियत का अकाल पड़ा था, वही इन्सानियत का झरना बहने लगा। जाति के जेल में हजारों साल जिस प्रतिभा और प्रतिभावानओ को कैद करके रखा गया था, वही गाँव के बाहर की प्रतिभा और प्रज्ञा मूल्यों की रोशनी लेकर आयी। अपनी साहित्यिक दृष्टि की अलग पहचान उसने बनायी।''[1]

''दलित कविता में, अपने भोगे हुए दुःखों, पीड़ाओं, अपमानों की चुभन, अभाव में पले जीवन की प्रति क्रियात्मक चोटों, अकारण भोगने की बाध्यता से उत्पन्न कटुताओं का जिक्र हैं 'मनुवाद' से प्रभावित हिन्दू रीति–रिवाजों और परंपराओं के प्रति तीखी विद्रोह की भावना है मनुष्य और मनुष्य के बीच खड़ी की गई कृत्रिम दीवारों के प्रति जुझारू आक्रोश है।''[2]

इस प्रकार समझा जा सकता है कि दलित काव्य लोगों में चेतना पैदा करने वाला साहित्य है अन्याय, अत्याचार और शोषण के विरोध में खड़ा होने वाला काव्य है। साठोत्तरी हिन्दी काव्य में दलित आन्दोलन के फलस्वरूप प्रस्फुटित दलित चेतना साठोत्तरी सभी कवियों की रचनाओं में व्यक्त हुई है। जहाँ यह दलित चेतना दलित कवियों में सहज थी वह दलितेतर साहित्यकारों के सायास भी व्यक्त हुई है। साठोत्तरी हिन्दी कवियों में ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, पुरूषोत्तम 'सत्यप्रेमी', डॉ0 कंवल भारती, सुदामा पाण्डेय 'धूमिल', राजकमल चौधरी, सौमित्र मोहन जयप्रकाश, नवेन्दु, डॉ0 एन सिंह आदि के नाम उल्लेखनीय है।

''इन सभी रचनाकारो की रचनाओं में दलित वर्ग के प्रति बढ़ती जा रही भेदभाव की नीति, अपने विकास के लिए छटपटाहट और उसके मार्ग में अवरोध उत्पन्न करने वाली व्यवस्था के प्रति सतत् आक्रोश दिखाई देता है। धार्मिक और सामाजिक रूढ़ियों के प्रति विद्रोह ही इन कवियों की कविता का मुख्यस्वर है।''[3]

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

दलित साहित्य भारतीय समाज में पूर्ण परिवर्तन की माँग को रखता है। उसका लक्ष्य ही है, 'पूर्ण सामाजिक परिवर्तन'। यहाँ मैं यह बताना चाहती हूँ कि हिन्दी ही नही सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में जब यह साहित्य उभरा तब विभिन्न क्षेत्रों में व्यंग्य कसे जाने लगे इन्हीं व्यग्यों को कवि डॉ0 शत्रुध्न कुमार ने अपनी एक कविता में इस प्रकार रखाः–

''हँसे थे वे यह सुनकर
कि दलित लेखक और कवि
झुलझुलाए थे वे यह जानकर
कि चमार लेखक और कहानीकार
गुस्साये थे वे यह पढ़कर
कि अछूत लेखक और उपन्यासकार
हकलाये थे वे यह देखकर
कि भंगी पत्रकार और संस्मरणकार
अचंभित है वे,
कि यह कैसा विप्लव, यह कैसा भूचाल
जानते है, वे, समझ गए है वें
कि अब रोकना मुश्किल है इस सैलाब को
इसलिए षड्यंत्र बुन रहे है'
चक्रव्यूह रच रहे है वे,
दलित साहित्य में घुसपैठ करने को
हाथ बढ़ा रहे है, वे इस पर नेतृत्व को
सावधान''।[4]

दलित चेतना ये दो शब्द अब किसी के लिए अपरिचित नही है। दलित शब्द अब भारतीय समाज के उस वर्ग के लिए रूढ़ होता जा रहा है। जो व्यवस्था की भार से दबा–कुचला प्रासंगिक ही नही बल्कि अवश्यक हो गया है। दलित चेतना के कारण दलितों में जो आत्म सम्मान का बोध उभरा उससे संघर्श की स्थिति भी पैदा हुई। गॉव, शहर, एवं महानगरों में दलितों पर हुए अत्याचार इस बात की गवाही देते है कि दलितों ने मनुवादी व्यवस्था को ठुकराना शुरू कर दिया है। वे भी मनुष्य है तथा बिना भेदभाव के समान रूप से देश की संपत्ति में उनका भी उतना ही हिस्सा है, जितना सामान्य वर्ग के लोगों का यह भावना आज प्रत्येक दलित के ह्रदय में भर चुकी है।

डॉ0 सुखवीर सिंह की कविता ''बयान बाहर''; गाँव से अलग–अलग रहकर अलगाँव के दुःखों को भोगते हुए दलितजनों की पीड़ा को इस प्रकार स्वर देती है।

''और मेरे गाँव तेरी जमीन पर
घुटी–घुटी सांसो के साथ
पलना पड़ता है अलग–अलग
लड़खड़ाते कदमों से
चलना पड़ता है अलग–अलग
भरने के बाद भी
जलना पड़ता है अलग–अलग''[5]

भारत में कुछ दलितों की स्थिति में आंशिक सुधार देखा जा सकता है, किन्तु हजारों वर्षो से चली आ रही परम्परा इतने कम समय में पूरी तरह से कैसे बदल सकती है? अतः आज भी परम्परागत शिक्षा से वंचित इस वर्ग के छात्रों के साथ विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में भेदभाव किया जाता है। डॉ0 दयानंद 'बटोही' की कविता 'द्रोणाचार्य' की कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य है।

''अब दान में अंगूठा मांगने का साहस कोई नही करता
प्रैक्टिकल में फेल करता है
प्रथम अगर आता है तो छठाँ, सातवाँ स्थान देता है

जाति ग्रन्थ टाइटल में खोजता है।
वह आत्मा को बेमेल करता है।''[6]

ऐसी स्थिति में प्रेम, स्वतंत्रता, समानता, बन्धुत्व और न्याय को तरसता व्यक्ति विद्रोही हो जाए तो कोई आश्चर्य की बात न होनी चाहिए।

डॉ0 चन्द्रकुमार 'इन्कलाब लिखता हूँ' शीर्षक कविता में भूख को वाणी देते है–

''इक गुमनामी का सवाल है
जिनकी आँखों में
मैं
उन बच्चों के लिए
ढूँढकर जवाब लिखता हूँ
वो लड़ता रहा
उम्रभर रोटी के लिए
उसकी भूख और प्यास भी
हिसाब लिखता हूँ।''[7]

जाति व्यवस्था पर चोट करते हुये कवि लक्ष्मी नारायण सुधाकर लिखते है–

''अस्पृष्यता का देश पर ऐसा लगा अभिशाप है
धर्म जिसको मान बैठे वह सरासर पाप है
परतंत्र सदियों तक रहा अब भी बुराहाल है
पर जन्मना कुल जाति का अभिमान बेमिसाल है'' 8

मोहनदास नैमिशराय क्रांति के हथौड़े को सदा चलायमान होने पर जोर देते है–

''क्रांति का हथौड़ा रूकने ना पाये
राजमहलों की दीवारों के आसपास
जहाँ का राजा बहरा है
या फिर शायद गूँगा।''[9]

हिन्दी की दलित कविता अपने दर्द भरे अतीत को आज के समय व संदर्भ में रखकर विश्लेषित कर रही है, जो भविष्य की राह को प्रकाशमय बनाने का सफल प्रयास है।''[10]

अब दलित जनता और कवि डॉ0 अम्बेडकर के बताये हुये मार्ग पर चलकर स्वतन्त्रता, समानता बन्धुत्व व न्याय के लिए पढ़ने लगे है संगठित होने लगे है और अपने अधिकारों के लिए संघर्ष भी करने लगे है। अब वह जान गया है कि हमारी स्थिति केवल राजनीति शक्ति ही बदल सकती है, डॉ0 अम्बेड़कर ने कहा था ''हम अनुभव करते है, कि कोई दूसरा आकर हमारे दुःख दर्द दूर नही कर सकता और जब तक हमारे हाथों में राजनीतिक शक्ति नही आ सकती, हमारे दुःख दर्द दूर नही हो सकतें।'' 11

डॉ0 चन्द्र कुमार वारथी, 'अधूरी चिट्ठी रोशनी की भूमिका' में कहते हैः–

''और कविता
इस बेजुबान आदमी की आवाज है
इसे रोका नही जा सकता
खोखले शांति प्रयासों से
और इसीलिए अब भूखे पेट भी कराहे
खाली हाथ तक आकर
पत्थर में बदल गई है
जो सीधे तना
अव्यवस्था के शीशमहल की तरफ'[12]

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

निष्कर्षत

कहा जा सकता है कि साठोत्तरी हिन्दी कविता में दलित चेतना के विविध स्वर अभिव्यक्त हुए है साथ ही कविता के इस आन्दोलन ने दलित चेतना से, दलित बुद्विजीवियों के मन मस्तिष्क को भी झकझोरा है। दलित प्रतिबद्धता की यह कविता समाज परिवर्तन के मुख्य स्वर के साथ क्रांतिका उद्घोष करती है और हिन्दी काव्यधारा में अपनी विशेष उपस्थिति दर्ज करती है।

दलित रचनाकारों के द्वारा काव्य रचनाएँ साठोत्तर समय से विपुल मात्रा में लिखी जा रही है और अस्सी के दशक के बाद हिन्दी साहित्य की हर एक विद्या में दलित साहित्य लेखन होने लगा है दलित कविता आज हिन्दी कविता में अपना एक अलग और विशेष स्थान बना चुकी है और अब वह और किसी की भाषा की मोहताज नही है।

सन्दर्भ सूची

1. माकडिया, डा0 जयंती लाल. (2009). हिन्दी कविता में दलित चेतना एक अनुशीलन. पृष्ठ 34.
2. मोरे, प्रो0 दामोदर. 'सदियों के बहते जख्म. चन्द्रकान्त वांडिबडेकर का कथन. पृष्ठ 9.
3. भारती, डॉ0 कंवल. तब तुम्हारी निष्ठा क्या होती. भूमिका.
4. पु0, शत्रुध्न कुमार. हिन्दी में दलित साहित्य. पृष्ठ 163.
5. सिंह, डा0 सुखबीर. दीर्घा. पृष्ठ 13.
6. सिंह, डॉ0 एन0. दर्द के दस्तावेज. बटोही की कविता का अंश. पृष्ठ 10.
7. बरने, डॉ0 चन्द्र कुमार. अधूरी चिट्ठी रोशनी की. पृष्ठ 14.
8. सिंह, डॉ0 एन. हिन्दी में दलित साहित्य, सुश्री मायावती और दलित चिंतन. पृष्ठ 176.
9. वही पृष्ठ 176.
10. कीर्ति, विमल. (1993). अंगुत्तर, दलित लेखक साहित्य सम्मेलन. के सी मेश्राम का लेख. अंक, अक्टूबर. पृष्ठ 64.
11. तेजसिंह. (2001). अपेक्षा, अंक नवे डिसे. पृष्ठ 4. के उद्धृत.
12. सिंह, डॉ0 एन0. दर्द के दस्तावेज. एन0सिंह0 के काव्य का अंश. पृष्ठ 12.

2

कला का अदभुत संसार

डॉ० ज्योत्सना
एसोसिएट प्रोफेसर, चित्रकला विभाग
कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ
ईमेलः jyotsna9412@gmail.com

के० एम० पिंकेश
शोधार्थी, चित्रकला विभाग
कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालयए मेरठ

ईश्वर ने सृष्टि का निर्माण करने में सूरज, चॉद, तारे पौधे, फूल, पशु—पक्षी तथा मनुष्य बनाये और सभी को सुंदर रूप प्रदान किया। मनुष्य ने भी अपनी शारीरिक, मानसिक एंव सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये खाना, कपडा,मकान, संगीत और धर्म की उत्पत्ति की तथा यह प्रयास किया कि ये सभी वस्तुएँ ईश्वर की बनाई हुई वस्तुओं की भांति सुंदर हो। अब यह मनुष्य की प्रकृति बन गई हैं कि वह सतत इसी प्रयास में लगा रहता हैं कि प्रकृति की भांति ही सुंदर वस्तुओं का निर्माण करे। मनुष्य के इस प्रयास की क्रिया और कृति को ही कला कहते हैं।

कला शब्द का अर्थ व्यापक हैं यह मनुष्य के हर कार्य का पर्यायवाची है। सभी कार्य—कलाप, चेष्टायें जिनसे बाहय जगत की वस्तुओं को नया रूप मिल जाता हैं वह कला हैं अर्थात प्रकृति से प्राप्त वस्तुओं को अपने भावों एंव कल्पना के अनुसार ढालना ही कला हैं।

"कला किसी भी माध्यम द्वारा भाव, आकांक्षाओं और प्रेरणाओं के ऐसे व्यक्तिकरण को कहते हैं जो व्यक्ति को आनन्द प्रदान करे।"

कला की इस उक्ति में प्रयुक्त शब्दों, भाव एंव माध्यम पर विशेष ध्यान देना होगा तभी हम कला के ठीक अर्थ को समझ पायेंगे। भाव व्यक्त करने की क्रिया किसी भी माध्यम द्वारा की जा सकती हैं। लिखकर व्यक्त किये गये भाव साहित्य एंव कविता कहलाते हैं, जिव्हां द्वारा गायन, शरीर के अंगों की भाव भंगिमा द्वारा नृत्यकला एंव अभिनय, रंग और तूलिका द्वारा चित्रकला तथा मिट्टी एंव पत्थर द्वारा व्यक्त किये गये भाव मूर्तिकला, स्थापत्य एंव वास्तुकला कहलाते है। कला में जो भाव व्यक्त किये जाये वे अपने होने चाहिये। दूसरे के भाव व्यक्त करना अनुकृति कहला सकती हैं कलाकृति नहीं। इस प्रकार अपने भावों का पूर्ण स्वतंत्र रूप से स्वतः व्यक्तिकरण ही कला है।

सृजन की कोई सीमायें नहीं होती। प्रागैतिहासिक काल से ही मानव ने अपने आस पास के वातावरण से प्रभावित होकर पत्थरों, चट्टानों, गुफाओं की भित्तियों पर रेखाओं, आकृतियों द्वारा अपने भावों की अभिव्यक्ति की। यही कला का प्रारंभिक रूप था। जैसे—जैसे सभ्यता का विकास होता गया कला भी नये स्वरूपों मे सामने आती रही और नये—नये मानदण्ड स्थापित होते रहे तथा कला ने गुफाचित्रों, चिन्हों, शिल्पकारी, भित्तिचित्रों आदि विभिन्न चरणों से गुजरते हुये आधुनिक रूप धारण किया।

"विश्व इतिहास में भारतीय कला एंव संस्कृति का वही स्थान एंव महत्व हैं जो असंख्य दीपों के सम्मुख सूर्य का हैं।"

यह उक्ति आज हमें सार्थक दिखाई देती हैं जब हम अपनी कला को निरंतर विकसित एंव समृद्व होते हुये देखते हैं।

प्रारंभ से लेकर आज तक विभिन्न कलाकारों ने सारी कलाओं का समय समय पर सही मूल्यांकन कर कला को नितान्त नया रूप दिया हैं और यह निरंतर जारी हैं। संवेदनाओं की अत्यंत स्वाभाविक एंव प्रभावशाली रूप से मौलिक अभिव्यक्ति करना ही कला एंव कलाकार का मूल उद्वेश्य रहा है। नित नये उभरते युवा कलाकारों ने कलाकारिता के अनेक आयामों कों परखने की , सार्थक करने की एंव कलात्मक उपलब्धि प्राप्त करने की निष्पक्ष कोशिश की हैं और इसमे सफल भी हुये हैं।

कलाकार सदैव प्रयोगधर्मी रहा हैं। कला मानवीय भावों की अभिव्यक्ति हैं इसमें कल्पना की सौन्दर्यात्मक अभिव्यक्ति को व्यक्त करने के लिये माध्यमों एंव तकनीको का प्रयोग अनिवार्य हैं। और यह प्रक्रिया प्राचीन समय से लेकर आधुनिक समय में भी अनवरत रूप से जारी हैं। कला का विकास सामान्यतः प्रयोंगधर्मिता पर विशेष रूप से केन्द्रित रहा हैं। कलाकारों के पास संसाधनों

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.02

की कमी नहीं रहती हैं, वे अपनी अभिव्यक्ति के लिये सदैव नूतन प्रयोग करते रहते हैं। आज चित्रों की परिभाषाएँ बदल गयी हैं। चित्र द्विआयामी से त्रिआयामी बनने लगे। चित्र डिजिटल युग में आ गये। चित्रों की रचना मे कलाकारों के हाथ की जगह मशीनों एंव कंप्युटर ने ले ली तथा कला शिलाओं से चलकर कम्प्यूटर स्क्रीन तक पहुंच गयी।

वस्तुतः अभिव्यक्ति के लिये कलाकार सुलभ माध्यमों का प्रयोग करता हैं। चाहे जिस भी समय की कला हो, कलाकारों ने अपने आस पास के संसाधनों से कला रचना की। जैसे–जैसे मानव परिष्कृत होता गया वैसे–वैसे उसके कलात्मक माध्यम भी परिष्कृत एंव परिमार्जित होते गये। चित्रों के धरातल, दीवार, ताड, कपडा, कागज, कैनवास, प्लाई बोर्ड, मेसोनाइट बोर्ड, जूट, कांच, संगमरमर, मेटल आदि बदलते गये। चित्रों की मौलिकता बदल गयी । इन पर रिलीफ तथा त्रिआयामी प्रयोग भी हो रहे हैं। नवीनता की खोज में कलाकारों ने माध्यमों को भी पीछे छोड दिया। समस्त परम्पराओं को विदाई देने के लिये कलाकार सदैव तत्पर दिखे।

सौन्दर्य के लिये भी मानव सदैव पिपासु रहा हैं और कलाए सौन्दर्य का स्त्रोत रही हैं। भारतीय कलाओं की पृष्ठभूमि आधिदैविक एंव आध्यात्मिक रही हैं इसके आदर्श भाव प्रधान, कोमल एंव सत्य शिव सुंदरम की भावना से अभिभूत रहे है। आज आधुनिक जगत के सौन्दर्य भी आधुनिक हैं। सौन्दर्य को नये सिरे से देखने एंव गढने का प्रयास कलाकारों ने किया। कला के मूलभूत तत्वों को उजागर कर केवल उन्हीं तत्वों में निहित सौन्दर्य को उभारने का प्रयास भी किया गया। आजकल आधुनिकता का प्रचार तेजी से पोषित हुआ हैं। महानगरों, कला निकायो, कला संस्थानों, विश्वविधालयो एंव उपनगरों में भी सांस्कृतिक गतिविधियां तेज हुयी है। कला के संस्थान भी बढे हैं।

आधुनिक कला में कुछ अधिक प्रयोग किये गये। कला को व्यापकता प्रदान की गयी इसमें चित्र, मूर्ति अथवा मूर्तियां कोलाज न होकर कलाकृति होती हैं। एक साथ अनेक माध्यमों का प्रयोग भी हुआ। अनेक नवीन सफल प्रयोग किये गये जो अधिक प्रभावशाली एंव ज्वलंत हैं जैसे बाडी आर्ट, कान्सेप्चुअल आर्ट, इन्सटालेशन आर्ट, फोटो रियलिस्टिक आर्ट, अर्थवर्क, कंप्यूटर कला, एक्शन पेंटिग, एरियल पर्सपेक्टिव, कामेइयू एनम ओरफोसिस, केसियन पेंटिग, ईजल पेंटिग, एनकास्टिक पेंटिग, चियारोस्कूरों, डिविजनीशम, फोरेसफोरटेनिंग, फ्रेस्कों पेंटिंग, गाउचे ग्राफिटी, ग्रीसाइली, इम्पास्टो, मिनिएचर पेंटिग, म्युरल, आइल एंव वाटर कलर पेंटिग, पर्सपेक्टिव प्लेन एयर पेंटिग, सैण्ड पेंटिग, स्फूमाटों, साटो इन एसयू, ग्राफिटो, टैकीजम, टेम्पेरा, टेनेब्रीज्म, अल्कोहल इन्क पेन्टिंग इत्यादि।

इनमें से मैं नई उभरती एंव बहुत आर्कषक तकनीक अल्कोहल इंक पेंटिग पर प्रकाश डालकर आपको इससे रूबरू कराना चाहूंगी।

अल्कोहल इंक पेंटिग एक बहुत की आर्कषक माध्यम हैं जो सभी प्रकार एंव स्तर के आर्टिस्टों को अपने भावों की अभिव्यक्ति करने का सुअवसर प्रदान करता हैं। यह माध्यम एसिड फ्री होता हैं, जल्दी सूख जाता हैं, इसकी रंगते तेज, प्रखर आर्कषक एंव चटकीली होती हैं। और ये सरफेस पर बहुत दूरी तक आसानी से फैल जाती हैं। इन्हे पतला करने के लिये इन रंगों में रेन्जर एडिरोन्डेक माध्यम मिलाया जाता हैं और इसी से पेंटिग उपकरणों को भी आसानी से साफ किया जा सकता हैं।

इस तकनीक में प्रयुक्त सरफेस झीना नहीं होना चाहिये अन्यथा यह रंग सोंख लेगा और धुंधला होना शुरू हो जायेगा।

इसके धरातल के रूप मे हम ग्लोसी कार्ड, स्ट्रोक, श्रिंक फिल्म, ग्लॉज पेपर, ग्लास, मारबल, मेटल शीट प्रयोग कर सकते हैं। पेपर के रूप में भी एक अच्छा विकल्प मार्केट में आया हैं– पॉली प्रोपेलीन यह पेपर रीसाइक्लेबल, वाटरप्रुफ,मजबूत एंव टिकाउ हैं तथा इस पर दाग धब्बे भी नहीं लगते हैं। अमेरिका में बना यह पेपर मार्केटिंग, डिजाइन, पैकिंग एंव लेबल्स बनाने में भी प्रयुक्त होता हैं।

अल्कोहल इंक पेंटिग बनाने के लिये निम्नलिखित उपकरण प्रयोग करते हैं–

- रेंजर टीम होल्टज – इसमें फैल्ट पैड और मिनी पैडस लगें होते हैं इन्हें रिफिल करके दोबारा भी प्रयोग कर सकते हैं।
- अल्कोहल इंक एप्लीकेटर हैंण्डल – इसकी सहायता से सरफेस पर विभिन्न रंगतो को बिना मिश्रित किये एक साथ लगा सकते हैं।
- मिनी रेंजर इंक ब्लैंडर – बडे स्तर पर कोई प्रोजेक्ट तैयार करने के लिये रंगों को मिश्रित करने के लिये इसका प्रयोग करते हैं।

अल्कोहल इंक पेंटिग तकनीक प्रयोग करने के कुछ तरीके निम्नलिखित हैं जो नये कलाकारों के लिये इस क्षेत्र में आगे बढने के लिये बहुत सहायक सिद्व होंगे–

1. सबसे पहले फैल्ट एप्लीकेटर से धरातल पर एक अच्छा टैक्सचर बनाये ताकि पैटर्न का अच्छा प्रभाव आयें।
2. सीधे धरातल पर डिजाइन बनाने से पहले मार्कर से एक खाका बना ले इससे बाद मे अच्छा डिजाइन उभरकर आयेगा।
3. ग्लास पर पेंटिग बनाते समय अच्छे सीलर की दो तीन पतली परते लगा लेनी चाहिये ताकि रंग धुंधले ना पडे और अनावश्यक रंग बहकर ना निकल जाये।
4. किसी भी बिंदु पर रंग मिश्रित करने हो या कई रंगो का प्रभाव एक साथ दिखाना हो तो एप्लीकेटर टूल्स प्रयुक्त कर सकते हैं।
5. सरफेस पर बिना डिजाइन बनाये सीधे ही इंक डाल सकते हैं और फिर इसे अपने तरीके से नियत्रिंत करके या अनियत्रिंत तरीके से भी डिजाइन बना सकते हैं।
6. पानी में इंक डाले फिर सरफेस भी पानी में रख दें अपने आप ही एक आर्कषक डिजाईन बनकर उभरेगा।
7. स्ट्रा से या एयर डस्टर से धरातल पर इंक फैलाकर भी क्रियेटिव डिजाइन बना सकते हैं।
8. इस इंक को स्टाम्पिंग, कार्ड, कांच, मेटल, टाईल्स आदि के सुंदर धरातल बनाने में बहुत आकर्षक तरीके से प्रयुक्त कर सकते हैं।
9. प्रोजेक्ट में अल्कोहल ब्लेंडिंग सोल्यूशन डालकर इसे और भी आकर्षक एंव प्रभावी बना सकते हैं।
10. अगर कोई डिजाइन अच्छा नहीं बना हो तो यह तकनीक आपको आजादी देती हैं कि आप उसे ब्लेंडिग सोल्यूशन से साफ करके दोबारा डिजाइन बना सकते हैं और अपने तरीके से बीच बीच में मिटाकर भी नया आकार दे सकते हैं।

- अल्कोहल इंक के साथ काम करने के लिये किन आपूर्तियों की आवश्यकता होती हैं?
- अल्कोहल स्याही के साथ काम करने की प्रक्रिया क्या हैं?
- अल्कोहल इंक आर्ट को सुरक्षित कैसे रखें?

अल्कोहल स्याही तेजी से सूखने वाली, जलरोधक, अत्यधिक रंजित, अल्कोहल–आधारित स्याही हैं जो विभिन्न प्रकार की सतहों पर उपयोग करने के लिए बहुत अच्छी हैं। ये डाई–आधारित रंग हैं (वर्णक– आधारित के विपरीत) जो बहने वाले और पारदर्शी होते हैं। इस प्रकृति के कारण, उपयोगकर्ता अद्धितीय और बहुमुखी प्रभाव पैदा करने में सक्षम हैं जो ऐक्रेलिक पेंट जैसे पानी आधारित उत्पादों से प्राप्त नहीं किया जा सकता हैं। एक बार एक सतह पर लगाने और सूख जाने के बाद अल्कोहल स्याही को अल्कोहल के साथ फिर से सक्रिय किया जा सकता हैं और फिर से स्थानांतरित किया जा सकता हैं (जैसे पानी के रंगों को पानी जोडकर फिर से सक्रिय किया जा सकता हैं)।

अल्कोहल स्याही कला अभी भी भारत में अपेक्षाकृत नई है, विशेष रूप से जयपुर जैसे टियर टू शहरों में, इस कला को सीखने के लिये आपूर्ति के साथ–साथ कार्यशालाएँ भी मिलना मुश्किल हैं।

मध्यम और चमकीले रंगों की बहुमुखी प्रकृति के कारण शराब की स्याही दुनिया भर में लोकप्रियता प्राप्त कर रही हैं, जिसका उपयोग अद्धितीय प्रभाव और पारदर्शिता बनाने के लिये किया जा सकता हैं जो कोई अन्य माध्यम प्रदान नहीं करता हैं। वे उपयोग करने मे अपेक्षाकृत आसान हैं और पूर्व कला ज्ञान की आवश्यकता के बिना, शुरूआती भी ऐसे डिजाइन बना सकते हैं जो देखने में

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.02

सुंदर हों। एक और पहलू जो इसकी अपील में जोडता हैं वह यह हैं कि शराब की स्याही के साथ काम करना बेहद चिकित्सकीय और मजेदार हैं।

यद्यपि आप किसी भी सतह पर अल्कोहल स्याही का उपयोग कर सकते हैं, सबसे अच्छा प्रभाव कठोर गैर–छिद्रपूर्ण सतहों पर प्राप्त होता हैं जहां स्याही अवशोषित नहीं होती हैं और स्वतंत्र रूप से घूमने का मौका मिलता हैं। अल्कोहल स्याही के साथ अभ्यास करने के लिये सबसे अच्छी सतह में शामिल हैंः

- यूपो पेपर
- सिंथेटिक पेपर (नारा/स्याही से परे)
- सिरेमिक (टाइट/बर्तन/प्लेट)
- कॉच
- धातु
- एक्रिलिक चादरें
- प्लास्टिक शीट

एक अन्य लोकप्रिय सतह एक कैनवास है जिसे गेसो की तीन या चार परतों के साथ तैयार किया जाता हैं ताकि यह लगभग गैर–छिद्रपूर्ण हो जाए। आपको मिलने वाले प्रभाव और स्याही के काम करने का तरीका प्रत्येक सतह के लिये अलग होगा।

यूपो पेपर एक सिंथेटिक, प्लास्टिक पेपर है जो रिसाइकिल करने योग्य, वाटरप्रूफ और गैर–छिद्रपूर्ण है, जो इसे अल्कोहल स्याही के लिये एक शानदार सतह बनाता है। इसमें प्लास्टिक जैसा अहसास होता हैं और यह टिकाउ, न फाडने योग्य फिर भी लचीला होता हैं। यूपो पेपर पर कला को फ्रेम किया जा सकता हैं या लकडी के पैनल जैसी अन्य सतहों पर लगाया जा सकता हैं। सीलबंद कला बनाने के लिये यूपो पेपर के ऊपर रेजिन किया जा सकता हैं। यूपो पेपर के कई राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय ब्रांड भारत में उपलब्ध हैं। बियॉन्ड इंक्स भारतीय ब्रांड है जो यूपो पेपर भी उपलब्ध कराता हैं।

नारा पेपर्स द्वारा प्रदान की गई एक और बडी सतह हैं। यह एक सिंथेटिक, गैर–झरझरा और दाग–प्रतिरोधी आर्ट पेपर है जो विभिन्न प्रकार के आकार, आकार और घनत्व में आता हैं। हाल ही में लॉन्च किया गया नारा ब्लैक पेपर मैटेलिक्स और पेस्टल रंगों के लिये बेहतरीन हैं।

अल्कोहल स्याही तरल होती हैं और काम करने का तरीका स्याही को अपनी चुनी हुई सतह पर गिराना हैं, मुक्त गति को सक्षम करने और स्याही की तीव्रता को कम करने के लिये कुछ अल्कोहल या सम्मिश्रण घोल डालना हैं और फिर वांछित प्रभाव प्राप्त करने के लिये इसे विभिन्न तकनीकों के माध्यम से ले जाना और सुखाना हैं। आप ब्रश के साथ स्याही का उपयोग भी कर सकते हैं और उनके साथ ठीक वैसे ही काम कर सकते हैं जैसे आप वाटर कलर लगाते हैं।

एक बार स्याही लगाने के बाद, आप इसे फैलाने, इसे स्थानांतरित करने और इसे सुखाने के लिये कई तरह के तरीकों का उपयोग कर सकते हैं। कुछ ही पलों में, शराब वाष्पित हो जाएगी और डाई को पीछे छोड देगी। एक बार अल्कोहल स्याही सूख जाने के बाद, इसे पुनः सक्रिय किया जा सकता हैं और आइसोप्रोपिल अल्कोहल के साथ फिर से स्थानांतरित किया जा सकता हैं। याद रखें, यदि आप पहले से सूख चुकी स्याही के उपर अल्कोहल डालते हैं, तो यह उस क्षेत्र से डाई को हटा देगा और इसे फिर से सफेद कर देगा।

पारदर्शी होने के गुण के कारण हम लेयरिंग के साथ खिलवाड कर सकते हैं। एक बार जब एक परत सूख जाती हैं तो अद्वितीय आयाम और रंग मिश्रण बनाने के लिए शीर्ष पर अन्य रंगों के साथ इसे बार–बार सक्रिय किया जा सकता हैं।

ऐसी कई तकनीकें और उपकरण हैं जिनका उपयोग दुनिया भर के कलाकार कागज के चारों ओर स्याही घुमाने के लिए करते हैं। अपने मुंह से फूंक मारना, स्ट्रॉ, हेयर ड्रायर, हीट टूल्स, एयर ब्रश और ऐसे कई अन्य उपकरणों का उपयोग किया जाता हैं, लेकिन सबसे लोकप्रिय एक साधारण हेयर ड्रायर हैं। यह सब प्रयोग और उस तरह के प्रभावों के बारे में हैं जो आप स्याही से प्राप्त करना चाहते हैं।

अल्कोहल स्याही डाई–आधारित होती हैं और सीधे सूर्य के प्रकाश के संपर्क में आने पर समय के साथ फीकी पड जाती हैं। लुप्त होने की किसी भी संभावना से बचने के लिये अपनी कला को सीधे यूवी प्रकाश से दूर प्रदर्शित करना सबसे अच्छा हैं। किसी भी सतह पर अपनी कला की रक्षा करने के लिये, आपको इसे वार्निश और फिर एक यूवी सुरक्षा स्प्रे के साथ स्प्रे करना होगा।

बाजार में ऐसे कोई वार्निश नहीं हैं जो विशेष रूप से अल्कोहल स्याही के लिये डिजाइन किए गए हों। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर, अधिकांश अल्कोहल इंक कलाकार Krylon कमर और Krylon UV प्रतिरोधी स्प्रे का उपयोग करते हैं।

इस प्रकार कहा जा सकता हैं कि यह एक सस्ता, टिकाऊ एंव आकर्षक माध्यम हैं सभी के लिये एक अच्छा विकल्प हैं जो कलाकारों को यह स्वतत्रंता देता हैं कि वह नियंत्रित एंव अनियत्रिंत किसी भी प्रवाह के साथ अपने मनोभावों की सशक्त अभिव्यक्ति कर सकते हैं।

मानव प्रत्येक क्षेत्र एंव समय में प्रयोगधर्मी रहा हैं। उसे प्रत्येक चीज में नवीनता एंव रचनात्मकता चाहिये। यह आवश्यकता भी हो सकती हैं तथा मात्र नवीनता की खोज भी। रचनात्मक प्रक्रिया में भी यही हुआ आज भी नित नवीन प्रयोग हो रहे हैं और भविष्य में भी होते रहेंगे। प्रयोग सदैव कला के लिये अपरिहार्य बने रहेंगे। साथ ही प्रयोगो पर अध्ययन भी अनवरत रूप से जारी रहेगा। यह सतत चलने वाली प्रक्रिया हैं। नित नई–नई उदित होती विधियां, माध्यम एंव तकनीके मिलकर कला एंव कलाकार को सृजन का एक नया उर्वर धरातल हमेशा उपलब्ध कराती रहेगी।

संदर्भ सूची

1. वर्मा, डॉ. वन्दना. भारतीय लोककला एंव हस्तशिल्प वैभव. अकादमिक प्रतिभाः 42, एकता अपार्टमेंट, गीता कॉलोनी, दिल्ली–110031 (भारत). पृष्ठ **4,5.** *https://www.ademicpratibha.com.*
2. विरंजन, डॉ.राम. समकालीन भारतीय कला. निर्मल बुक एजेन्सीः विश्वविघालय परिसर, कुरूक्षेत्र 13119. पृष्ठ **108,109,114,115.**
3. मिश्र, डॉ. अवधेश. (2009). कला दीर्घा. दृश्य कला की छमाही पत्रिका. अप्रैल. 9 वर्ष. अंक 18. पृष्ठ **5.** वेबसाईट : *https://www.kaladirgha.com.*
4. अग्रवाल, अनुजा. मेरी कला का टुकडा. *https://www.pieceofmyart.in.*

3

अवध के नवाब और संगीत

डॉ0 रामशंकर
असिस्टेंट प्रोफेसर, गायन विभाग,
संगीत एवं मंचकला संकाय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
ईमेलः ramshankarsingh7@gmail.com

अशोक कुमार
शोधार्थी, गायन विभाग,
संगीत एवं मंचकला संकाय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

सारांश

अवध के सभ्यता व संस्कृति के उच्च शिखर पर आसीन लखनऊ महानगर, आज भी अपनी नजाकत, नफासत और तहजीब के लिये प्रसिद्ध है। जहाँ के कुशल आचार–विचार, रहन–सहन, निवासियों की सरस व नम्र व्यवहारिकता सर्वविदित है। लखनऊ की मधुर सम्मान पूर्ण बोली व मृदु भाषा निराली है। पारम्परिक वार्तालाप व अतिथि सत्कार की शैली न प्रत्येक व्यक्ति का मन मोह लिया है। ''पहले आप पहले आप'' की इस सभ्यता से सभी परिचित हैं। वस्तुतः हमारे देश की राजनैतिक दिल्ली है तो लखनऊ इसकी सांस्कृतिक राजधानी है।[1] विशेष रूप से गायन, वादन, नृत्य नवाबों (शासक) का संगीत में भी योगदान रहा है।

लखनऊ अवध की राजधानी ही नहीं, बल्कि पूरे हिन्दुस्तान (भारत) का दिल था, जिसका रूतबा उस समय दिल्ली से भी बड़ा था, वैसे यह दोनों शहर बहुत पुराने थे। मगर दिल्ली विदेशी आक्रमणों से जर्जर होकर अपना असलीपन खोकर सहमा हुआ शहर बन गया था। वहीं लखनऊ बहुत आगे बढ़कर अपनी नज़ाकत नफासत और शराफत के लिए दुनिया भर में प्रसिद्ध हो गया था। यहाँ की तहजीब और तमीज़ 'पहले आप पहले आप' बेमिसाल थी, जो दुनिया के किसी शहर में नहीं पायी जाती थी।

भूमिका

लखनऊ की सभ्यता बहुत प्राचीन है मोहन लालगंज तहसील के हुलासखेड़ा और भाटपट, टिकेरिया, ऐना और मदोई नामक स्थानों पर हुये उत्खनन से प्राप्त अवषेशों से कुशाण, शुंग व गुप्त आदि राजवंशों के समय हुये सभ्यता संस्कृति के विकास व समृद्धता पर प्रकाश पड़ता है। उपर्युक्त स्थानों पर ही मोखरियों, गुर्जर प्रतिहारों आदि के सिक्के व अवशेष प्राप्त हुये हैं।

लखनऊ का बुद्धेश्वर महादेव मन्दिर भी बौद्ध मठ का परिवर्तित रूप माना जाता है। इसी जनपद में मोहनलालगंज के निकट उल्हासखेड़ा नाम गाँव में जो उत्खनन कार्य हुआ है उसने तो लखनऊ की प्राचीनता को पूर्णतः सिद्ध कर दिया है। इस क्षेत्र में खुदाई से पुराने भवनों के अवशेष, बर्तनों के टुकड़े, मृण्मूर्तियों तथा अन्य सामग्री उपलब्ध हुयी है जिसे यहाँ के ईसापूर्व के इतिहास पर प्रकाश पड़ता है। लखनऊ में दादूपुर का टीला पुरातात्त्विक सम्पदा से भरा हुआ है जो कि अमौसी के पास है मथुरा में कटरा केशव के निकट यश विहार और शक विहार बौद्ध मठ रहे हैं। साथ ही उन अमोहसी विहार का अनुमान लगाया जाता है। बौद्धकाल में अमोहसी का क्षेत्र आज अमौसी के नाम से जाना जाता है।[3] इससे यह सिद्ध होता है कि बौद्ध काल साकेत, मध्यकाल में अवध, आज अयोध्या के नाम से प्रसिद्ध है।

अवध के नवाब (शासक) उत्तरमध्य काल

अवध के नवाबों के नाम निम्नलिखित हैं–

1. नवाब सआदत खाँ बुरहान–उल–मुल्क (1722–1739)
2. नवाब सफदरजंग (1739–1754)
3. नवाब शुजाउद्दौला (1754–1775)

4. नवाब आसफुद्दौला (1775—1797)
5. नवाब वज़ीर अली (1797—1798)
6. नवाब सआदत अली खाँ (1798—1814)
7. नवाब बादशाह ग़ाजीउद्दीन हैदर (1814—1879—1827)
8. बादशाह नसीरूद्दीन हैदर (1827—1837)
9. मिर्ज़ा रफ़ीउद्दीन हैदर मुन्नाजान (1837)
10. बादशाह मुहम्मद अलीशाह (1837—1842)
11. बादशाह अमजद अलीशाह (1842—1847)
12. बादशाह वाजिद अलीशाह (1847—1856)
13. बादशाह बिरजीस कदर (1857—1858)

नवाबों के शासन काल में सम्पूर्ण राज्य पाँच स्थाई निजामतों (1) खैराबाद, (2) गोण्डा, बहराइच, (3) सुल्तानपुर (4) बैसवारा और (5) सलोन में विभाजित था शासन की सुविधा हेतु उपर्युक्त निजामतें 12 उपमण्डलों में विभक्त थे। (1) बारी बिसंवा, (2) दरियाबाद रूदोली, (3) देवां कुर्सी (4) नवाबगंज (5) गोसाईगंज, (6) मोहान, (7) रसूलाबाद, (8) सफीपुर, (9) बांगरमऊ मोइलवान, (10) सान्डी पाली, (11) मोहम्दी, (12) मियागंज शासन की इन इकाइयों में नवाब देशी अधिकारियों की सहायता से शासन संचालित करता था।[4] बिरजीस कदर की ताजपोशी अंग्रेज़ों के कलेजे में काँटा बनकर चुभ गयी जनरल इनस ने इस गर्मागर्म खबर को नमक—मिर्च लगाकर कलकत्ते गवर्नर जनरल तक पहुँचा दिया। सिर्फ ने फ़िरंगियों को यह बात नागवार लगी हो ऐसा भी नहीं है, कैसरबाग की तमाम बेगमों ने भी खूब उधम मचाया। उस वक्त बेगम ने हाथ जोड़कर सबसे यहाँ ''ये लड़का तुम्हारा ही है और जैसा तुम मुनासिब समझो, करो।''

फिर बिरजीस क़दर के नाम का सिक्का जारी हुआ। दिल्ली के बादशाह बहादुर शाह जफर ने बिरजीस क़दर के नाम की शाही मुहर भेजी। फ़ौज में तेरह नयी पलटनों के भरती किये जाने का हुक्म हुआ। बेगम ने सिपाहियों की रसद के लिए हज़ारों मन गल्ला कैसरबाग बारादरी के तहखाने में जमा कर दिया।

कैसरबाग की बेगमों में यास्मीन महल ही हज़रत महल की हिमायती थीं जो लखनऊ की एक—एक नब्ज कलकत्ते में बसे पिया जाने आलम को भेजती रहती थीं। उस समय खतों में गद्य भी पद्य की तरह मसनवी ढंग से लिखा जाता था। नमूना पेश है—

''हम हैं और ग़मे दिलदार हैं,
सोना है और आहे शररबार है।
महलात से बिरजीस क़दर को
देख लेती हूँ दिल शाद कर लेती हूँ
तुम्हारी कबन इसमें पूरी है।
सूरत भी बाप की सी गोरी है।
अल्लाह हज़रत महल की कोख को
ठंडी रखे मुझ पर वह मेहरबान है
मुझको भी वह प्यारा दिलोजान है
कल उसकी ग्यारहवीं सालगिरह थी
यह तो सुन ही लिया होगा कि वह तख़्तनशी है।
तमाम लोग उसके फिदाकार हैं।
शबमें खसोपुरन् की महफिल थी।

एक तवायफ ने ग़ज़ल पढ़ी... एक शेर याद है—

गौहरे महताब है बिरजीस क़दर
खुदा नज़रेबद से लाड़ले को बचाए,
दुश्मन का मुँह काला हो जाय..'' [5]

इन तमाम नवाबों के अवध दरबार में विभिन्न प्रकार का संगीत, विभिन्न भाषाओं में संगीत हुआ करता था। जैसे—ग़ज़ल,

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.03

भजन, शेरो–शायरी, अवधी लोकगीत, शास्त्रीय संगीत, लोकसंगीत वैसे अवध में शास्त्रीय संगीत का प्रचार–प्रसार खूब हुआ। साथ ही साथ अवधी लोकगीतों का प्रचार–प्रसार भी हुआ है।

संगीत

मुस्लिम संप्रदाय के गीत

अवध में मुस्लिम (नवाबों) में संस्कृति पर हिन्दू लोक संस्कृति का विशेष प्रभाव है। ग्रामीण मुस्लिम समाज में इसका जीवंत रूप परिलक्षित होता है। मुस्लिम गीतों पर हिन्दू ग्राम्य गीतों में भी अधिकांश हुआ है।

कुछ ग्रामीण मुसलमान प्रायः कहते हैं कि हमारे मजहब (धर्म) में गाने की धार्मिक मनाही है किन्तु उनके यहाँ भी संस्कारों के अवसर पर गीत गाए जाते हैं। इनके गीतों को दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है–1. हर्षदायक अवसर के गीत, 2. दाह रोने के गीत (शोक गीत)।

मुसलमानों में जन्म के अवसर पर प्रसन्नता की अभिव्यक्ति हेतु गीत जाए जाते हैं। मुसलमानों के यहाँ भी हिन्दुओं में प्रचलित सोहर का उलारा गाने की परम्परा है। केवल भाषा में कुछ अन्तर यत्र–तत्र तिहाई देता है, वह उर्दू शब्दों के अधिक प्रयोग की प्रवृत्ति। एक सोहर (उलारा) प्रस्तुत है–

''अल्ला ने करिली दुआ कबूल
हमारे घर बच्चा पैदा हुआ।
बच्चा कै दादी खुशी भई हैं,

जच्चा ने किया कमाल हमारे घर बच्चा पैदा हुआ। मौला ने करिली हुआ कबूल, हमारे बच्चा पैदा हुआ। बच्चा कै अम्मी खुसी भई है,

जच्चा ने किया कमाल हमारे घर बच्चा पैदा हुआ।
खुदा ने करिली दुआ कबूल, हमारे घर बच्चा पैदा हुआ।
बच्चा कै फूफी खुसी भई हैं,
जच्चा ने किया कमाल हमारे घर बच्चा पैदा हुआ।''
(इसी प्रकार से सभी परिजनों के लिए)।

खतना–खतना

मुस्लिम परिवारों में बालक के स्वास्थ्य की मंगल–कामला हेतु ईश्वर से प्रार्थना की गई है–

''अल्ला सन्नल से बोझी हमरी नाव,
नाजी मियाँ पार लगावा।
लोहे कै छुरिया गढ़ावै कौन मियां,
(बाबा, अब्बा, चाचा, फूफा का नाम)
कौनी बेगम अल्ला मनावैं
(दादी, अममी, चाची आदि का नाम)
गाजी मियाँ पर लगावा।''

अल्लाह! संकट से भरी मेरी नाव है, हे गाजी मिया! पार लगाना। अमुक मियाँ (बच्चे बाब आदि) ने लोहे की छुरी गढ़वाई है। अमुक बेगम (दादी, माँ आदि)।[6]

ठुमरी के रंग, बेगम अख़्तर के संग
रस भीगी चांदनी–ठुमरी

ठुमरी शास्त्रीय संगीत की सरगम को सरल बोलों के अर्थशास्त्रीय विद्या में जनमानस तक पहुँचाने को अत्यन्त कलात्मक प्रक्रिया है। मन से उठते हुए कोमल भाव शब्दों की डोर पकड़ कर जब सुरों की मोहिनी लेकर साकार होने लगते हैं तो शायद ठुमरी होती हैं। ठुमरी शब्द की अभिव्यंजना के लिए कहा गया है कि लय में ठुमक का होना और रीझने का प्रभाव ही ठुमरी को जन्म देता है। राग दर्पण, तोहफ़तुलहिन्द, श्री राधा गोविन्द संगीत सार आदि ऐतिहासिक पुस्तकों में ठुमरी का उल्लेख मिलता है। 17वीं सदी के प्रारंभिक दौर में ठुमरी का प्रभाव अच्छी तरह प्राप्त होता है।[7]

ठुमरी और लखनऊ

उन्नीसवीं सदी के मध्य नवाब वाजिद अली शाह के समय में ठुमरी को अच्छा प्रश्रय मिला और उसकी अच्छी परवरिश हुई। वो न सिर्फ अच्छे ठुमरी गायक थे बल्कि अख्तर पिया नाम से खुद ठुमरियां लिखते थे। उनकी ये सुप्रसिद्ध ठुमरी उनके हुनर की गवाह है।

बाबुल मोरा नैहर छूटोहि जाय
अंगना तो परबत भयो, देहरी भई बिदेस,
ले बाबुल घर आपना, मैं चली पिया के देस
मेरा आपना बेगाना छूटोहि जाय।[8]

अवध में ठुमरी गायन एक संस्थान रहा है, बड़ा प्रबल सिलसिला रहा है। कथक आचार्य महाराज बिन्दादीन की ठुमरियां इस बात की सुन्दर दलील है। उस परम्परा में चौलक्खी वाले वज़ीर मिर्जा फरूखाबादी क़दर पिया से लेकर पिया की एक ठुमरी यहाँ प्रस्तुत है–

ए री गुइया में कैसे भेजूं पाती
क़दर पिया को कैसे भेजूं पाती
एक तो रैन अंधेरी पापिन
दूजे सूनी सेज नागिन
तीजे मोरा बाला जोबन, हाय लजाती
कैसे भेजूं पाती

जाने आलम के परीखाने में ठुमरी उनकी परियों के साथ–साथ थीं क्योंकि सब की सब ठुमरी गायन में पारंगत थीं। शाही स्टेज के अलावा जनमंच पर भी ठुमरी खूब गायी जाती थी जहाँ उसको समझने वोल मौजूद होते थे। मिर्जा अमानत की इन्दर सभा (पब्लिक स्टेज की एक नृत्य नाटिका) में लाल परी की इस ठुमरी को कौन भूलेगा–

'बिना पिया घर नहीं भावे'

नवाब वाजिद अली शाह के दरबार के मशहूर सितार वादक गुलाम रजां खाँ पर रजाखानी गत की छाया आज भी मिलती है और इस तरह ठुमरी ने गायकों के साथ–साथ वादकों का दिल भी छीन लिया।

ठुमरी को अवध के आस–पास अंचल की बोलियों और लोक की तरंगों से नागरी रूप में सजा–संवार कर राज्याश्रय देने का श्रेय अवध के राज घरानों को भी कुछ कम नहीं है।[9]

कथक की कहानी

मानव समाज में नृत्य की परिभाषा है– ताल और लय के साथ अभियन करना। नृत्य को संगीत का एक अंग माना गया है–''गीत वाद्यं च नृत्यं च त्रयं संगीतमुच्यतं''। भारतीय नाट्यशास्त्र के आधार पर नर्तन के तीन भेद हैं–नाट्य, नृत्य और शास्त्रीय नृत्य में वे सब गुण पाये जाते हैं। भारत में शास्त्रीय नृत्यों की बड़ी पुरानी परम्परा है। यहाँ चारों वेदों की सहायता से पंचम वेद 'नाट्यशास्त्र' की सूचना की गई। ऋग्वेद से साहित्य, यजुर्वेद से क्रियात्मकता, अथर्ववेद से रस वैभव और सामवेद से संगीत प्राप्त किया गया।

इस पंचम वेद के प्रणेता भरतमुनि हुए। भारतीय शास्त्रीय नृत्यों में कथक, भरतनाट्यम, मणिपुर, कथकली, मोहनीअट्टमू, कुचीपुड़ी, ओडिसी आदि प्रमुख हैं। कथक नृत्य शैली का क्षेत्र उत्तर भारत है और ये सच है कि कथक ही एक ऐसा नृत्य है जो अपने पांव के नीचे की ज़मीन को आसमान बनाना चाहता है।

शब्द कल्पद्रुम से अयोध्या को ही कथक का प्रथम केन्द्र माना गया है। कथक जन्म मन्दिरों के प्रांगण में आराधना छन्दों के साए में हुआ। अवध धाम के बाद लखनऊ इसका बसेरा बना। कथक गुरु विक्रम सिंह ने कथक को लखनऊ का गौरव कहते हैं।[10]

अवध की इस आंतरिक लय से जुड़ने में आम आदमी अपनी महान–परम्पराओं शानदार विरासत और अमूल्य धरोहरों के प्रति जागृत हो और अवध संस्कृति को जान–समझकर वह भी ''आनन्द–भाव'' की तरफ कदम बढ़ाये। अवध से परिचय होने का अर्थ है जीवन का अधिक सुखद हो जाना, जीवन को एक नया अर्थ मिल जाना और जीवन का सार्थक हो जाना।

सबसे जुड़ने का भाव इसी भूमि पर पुष्ट सबको हुआ है। सनातन संस्कृति खंड़–खंड़ नहीं बल्कि पूर्णता में थी। जहाँ अवध में पूरी भारतीय संस्कृति की झंकार सुनी जा सकती है। अवध की सांस्कृतिक उपलब्धियाँ किसी भी राष्ट्र के लिए गर्व का विषय हो सकती हैं। अवध हमारी बहुलतावादी संस्कृति का बिम्ब तो है ही, यह जीवात्मा के परम–चरम लक्ष्य 'आनन्द प्राप्ति' की भी भूमि है।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.03

ऐसे अवध को जानना–समझना हमारे जीन में नया अर्थ भरेगा ओर हमें नये जीवन–मूल्य प्राप्त हो सकेंगे। आज सबसे बड़ी समस्या सांस्कृत की जड़ों से कट जाने की है। हजारों घाव लेकर हमारी संस्कृति क्षत–विक्षत तो हुई है लेकिन वह मरी नहीं है। वह अब भी तमाम आख्यानों, प्रसंगों, संदर्भों और कथाओं में धड़क है।[11]

आगरा और देहली के क़िलों में शाही हम्माम और (स्नानगृह) गुस्लखाने हुआ करते थे। इसका एक नमूना किला आगरा में भी मौजूद है। दिल्ली के लाल किले में जो हम्मा था उसमें तीन कक्ष थे। पहला जामाकुन (नहाने के पहले कपड़ा उतारने और नहाने के बाद कपड़ा पहनने का स्थान) दूसरा सर्प खाना और तीसरा गर्म खाना कहलाता था।

श्रृंगार और नहाने के लिए गुस्लखाने में जौनपुरी खली, खुशबू का बेसन, चंबेली, शब्बू, मोतियों, बेला और जूही के तेल बोतलों में भरे हुए सुसज्जित रखे रहते।

महिलाओं और मलिका के लिए सिर धोने के लिए जंगी हड़, आँवला और संदल को भिगोकर रखा जाता था। इसके अतिरिक्त गरीब महिलाएं मुल्तानी मिट्टी से सिर धोती थीं।[12]

इस प्रकार से अवध में नवाबों का शासन रहा है इनकी मुख्य भाषा उर्दू, फारसी अवधी थी और साथ ही साथ संगीत गायन, वादन, नृत्य की विशेष महत्त्व रहा है।

निष्कर्ष

अवध के नवाबों में संगीत एक मुख्य मनोरंजन का साधन रहा है। अवध के नवाब और संगीत से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अवध के नवाबों में गायन, वादन, नृत्य शास्त्रीय व उपशास्त्रीय, लोकगायन, अवध संगीत, ग़ज़ल, कव्वाली, भजन आदि। संगीत अवध शासकों के दरबार में हुआ करता था इस उदाहरण के अनेक प्रमाण रहे हैं। वैसे तो अवध के ठुमरी, प्रचारक व गायक कथक के महान विद्वान रहे हैं। अवध के नवाबों के यहाँ बड़ी–बड़ महफिल हुआ करती थी। संगीत के बड़े–बड़े विद्वान भाग लेते थे। इस प्रकार से यह निष्कर्ष निकलता है, कि अवध अपने समय में बड़ा प्रान्त रहा है।

संदर्भ सूची

1. बिसारिया, डॉ0 राकेश कुमार. लखनऊ मण्डल में 1857 का स्वतंत्रता संग्राम. पृष्ठ 1.
2. सूर्यवंशी, सरनाम सिंह. गदर की अनकही कहानी अवध के अन्तिम बादशाह विरजिस कदर. पृष्ठ 7.
3. प्रवीन, डॉ0 योगेश. ताजदारे अवध. पृष्ठ 5.
4. बिसारिया, डॉ0 राकेश कुमार. लखनऊ मण्डल में 1857 का स्वतंत्रता संग्राम. पृष्ठ 10.
5. प्रवीन, डॉ0 योगेश. बहारे अवध. पृष्ठ 134–135.
6. सिंह, डॉ0 विद्या विंदू. अवधी लोकगीत विरासत. पृष्ठ 118, 119.
7. प्रवीन, डॉ0 योगेश. आपका लखनऊ. पृष्ठ 99.
8. प्रवीन, डॉ0 योगेश. आपका लखनऊ. पृष्ठ 100.
9. प्रवीन, डॉ0 योगेश. आपका लखनऊ. पृष्ठ 101.
10. प्रवीन, डॉ0 योगेश. आपका लखनऊ. पृष्ठ 117.
11. टंडन, लालजी. अनकहा लखनऊ. पृष्ठ 14.
12. नाहीद, नुसरत. लखनऊ संस्कृति के रंग. पृष्ठ 67.

4

भ्रष्टाचार के विरुद्ध संघर्षः 'दिल्ली ऊंचा सुनती' है व 'सुनो शेफाली' नाटकों के संदर्भ में

डॉ० पूनम सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ
ईमेलः poonamsinghklsmm@gmail.com

श्रीमती राधा सैनी
शोधार्थी, हिंदी विभाग
कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ

सारांश

भ्रष्टाचार अर्थात 'भ्रष्ट आवरण'। इसके अंतर्गत वह स्थिति आती है जिसमें उच्च व निम्न श्रेणी के अधिकारी तथा कर्मचारी अपने कर्तव्यों का पालन निष्ठापूर्वक अथवा ईमानदारी के साथ समय पर नहीं करते, बल्कि मनमाने ढंग से तथा विलंब के साथ अनुचित रूप में करते हैं। इनके इस अनुचित कार्यों से आमजन को जो असुविधा व समस्याएं आती हैं वह निश्चित रूप से उनके संपूर्ण जीवन में उथल–पुथल मचाने के लिए पर्याप्त है। भ्रष्टाचार के सभी कार्य नैतिकता के विरुद्ध होते हैं अर्थात कोई भी ऐसा व्यवहार जो सदाचार के विपरीत होता है वही भ्रष्टाचार है। आज समाज में व्यक्ति के मन में धन को ज्यादा से ज्यादा एकत्रित करने की भावना या धनलिप्सा इतनी बलवती हो गई है कि वह इस भावना के समक्ष यह मानने लगता है कि कैसे साम, दाम, दंड, भेद सभी प्रकार के उपायों से दूसरे के धन को भी अपना बनाया जाए। इसी धनलिप्सा के कारण वह हर तरह के अनुचित कार्य करने को तैयार रहता है। कम समय में ज्यादा धन संग्रह की इच्छा व्यक्ति के मन में विद्यमान सकारात्मकता (मानव सेवा) के स्थान पर नकारात्मकता (झूठ, धोखेबाजी, रिश्वतखोरी, पक्षपात, पाखंड, मिथ्याचार, दुराचार, विश्वासघात व देशद्रोह) को जन्म देती है। भ्रष्टाचाररूपी आवरण की खाई में गिरकर व्यक्ति स्वयं के साथ–साथ देश व समाज की उन्नति अवरुद्ध करते हैं। नैतिक विचारों के अनुसार धन के विषय में यह माना जाता है प्रत्येक व्यक्ति को हमेशा दूसरे के धन को मिट्टी के ढेले के समान समझना चाहिए अर्थात स्वयं के धन को छोड़कर किसी दूसरे के धन का लोग कभी नहीं करना चाहिए। लेकिन आज धनलिप्सा की इस वृद्धि ने इन नैतिक विचारों को कब का पीछे छोड़ दिया है।

कुसुम कुमार के नाटक 'दिल्ली ऊंचा सुनती है' में नायक माधोसिंह (सरकारी रिटायर्ड कर्मचारी) जो दिल्ली जैसे बड़े शहर से आकर छोटे से गांव में रहने लगता है। उसके लिए दिल्ली जैसे बड़े शहर से निकलने का एकमात्र कारण केवल यही है कि केवल पेंशन के सहारे वह इतने बड़े शहर में रहकर परिवार का भरण–पोषण नहीं कर सकता। इस पेंशन प्राप्त करने की राह में उसे जो परेशानियां होती है उन सारी परेशानी की जड़ यही भ्रष्टाचार है। एक आम आदमी की तरह इस भ्रष्टाचार से लड़ते माधोसिंह व उसका परिवार यही इस नाटक में उल्लेखित है। 'सुनो शेफाली' में मुख्य नायिका शेफाली भी स्वयं के साथ हो रहे राजनीतिक व सामाजिक भ्रष्टाचार के खिलाफ जिस निडरता व स्वाभिमान की शक्ति के बल पर आवाज उठाती है वह प्रशंसनीय है।

मुख्य बिन्दु

भ्रष्ट आचरण, निष्ठापूर्वक, विलंब, अनुचित, नैतिकता, लोकाचार, धनलिप्सा, झूठ, धोखेबाजी, रिश्वतखोरी, पक्षपात, पाखंड, देशद्रोह, विश्वासघात, मिथ्याचार, लोभ, निडरता, स्वाभिमान, दुर्विचार, दुर्गुण, सद्‌गति, असत्य, दुष्कर, समाधान, अलर्ट, आघात, ईमानदार, व्यर्थता, अकर्तव्य, कामचोरी, पदलोलुप, विद्रोही, पुरजोर, दलदल, परिश्रम, कटाक्ष, षड्यंत्र, राक्षस, सर्वस्व।

संसार की उन्नति का मूलमंत्र– 'सत्यमेव जयते' अर्थात सत्य की विजय होती है असत्य की नहीं। जहां सत्य मार्ग पर चलने से ही मनुष्य के सभी कार्य सिद्ध हो सकते हैं वही असत्य मार्ग मनुष्य को प्रारंभ में सीधा व सरल लगता है लेकिन परिणामस्वरूप वह कदापि सदाचारी नहीं हो सकता। धीरे–धीरे मनुष्य को ज्ञात होने लगता है कि प्रारंभ में सत्य का मार्ग भले ही लंबा व कठिन

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.04

हो, पर बाद में वही मार्ग हमें सच्चरित्र भी बनाता है। इसके विपरीत असत्य का मार्ग प्रारंभ में सरल व बाद में दुष्कर सिद्ध होता है जिस पर चलकर मनुष्य कभी सद्गति प्राप्त नहीं कर सकता। इससे मनुष्य में केवल दुर्गुण, दूर्विचार व दुष्टवृत्तियाँ ही बढ़ती हैं। यही सारे अवगुण मिलकर समाज में भ्रष्टाचार जैसी कुव्यवस्था को जन्म देते हैं। समाज में इस भ्रष्टाचार को अनेक रूपों में देखा जा सकता है जैसे राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक इत्यादि। भ्रष्टाचार के ये तीनो रूप आज से सक्रिय नहीं है बल्कि यह मुगलकाल व अंग्रेजों के समय से चले आ रहे हैं। ''.. भ्रष्टाचार एक ऐसी पूंजीवादी अर्थव्यवस्था को जन्म देती है कि जिससे मानव मानव का शोषण करने लगता है भ्रष्टाचार में मानव स्वार्थी हो जाता है। छोटे और बड़े सभी में काम न करने की प्रवृत्ति पैदा हो जाती है।.. शासनतंत्र में, सरकारी कार्यालयों में, क्लर्क पूरा कार्य नहीं करते। अधिकतर धन संबंधी आदेश की समस्याओं को लंबा कर देते हैं।.''[१] आर्थिक भ्रष्टाचार से जुड़ा नाटक 'दिल्ली ऊंचा सुनती है' में माधोसिंह नामक पात्र पेंशन प्राप्त करने हेतु दिल्ली के दफ्तरों के अनगिनत चक्कर काटने को मजबूर है। उसकी इस मजबूरी को अनदेखा कर 'पे एंड एकाउंट्स' के क्लर्क मिस्टर ए. (जो आलस्य व कामचोरी से अपना व दूसरों का समय बर्बाद करता है) दफ्तर के कामों में ध्यान न लगाकर केवल चाय पीने, अखबार पढ़ने, व इधर–उधर की बातों में समय बर्बाद करता रहता है। उसकी इन्हीं आदतों से परेशान होकर डी.आर (दयाराम) बार–बार माधोसिंह को बुलाने के लिए कहता रहता है। इस पर मिस्टर ए. डी.आर को गलत बोलकर – ''चलो भेज दो! इतनी हिमायत करते हो लोगों की कि लगता है, उनसे रिश्वत लेते हो..''[२] ईमानदार डी.आर उसकी ऐसी बातों का विरोध 'सांच को आंच नहीं' वाली कहावत पर गंभीर होकर कहता है–''सहने को हम सब कुछ सह सकते हैं। मगर यह रिश्वत वाला मजाक हम नहीं सह सकते साहब!''[३] माधोसिंह की ऐसी विषम परिस्थिति में 'डूबते को तिनके का सहारा' वाली सहायता नीति की मित्र अलका भी करती है। वह इस पेंशन की समस्या के संबंध में सबको अलर्ट करती है और मिस्टर ए. द्वारा कुछ समाधान न पाकर भड़क उठती है– ''वॉट सॉरी! वाय सॉरी! वे जिंदा है. आपका रिकॉर्ड जाए भाड़ में! ''[४] माधोसिंह ने अपने पूरे सरकारी कार्यकाल में इमानदारी से नौकरी की और बदले में उन्हें पेंशन प्राप्त करने के लिए स्वयं को सरकारी कागजों में जीवित सिद्ध कर पाने की जहोजहद् करना किसी मानसिक आघात से कम नहीं। सरकारी कार्यालयों के इसी भ्रष्टाचार के कारण मेहनती व ईमानदार माधोसिंह के इस कथन से विरोध स्पष्ट झलकता हैः–''. चिट्ठी लिखी भी मैंने सीधे डायेक्टर जनरल के नाम है. वहां पे एंड एकाउंट्स में छोटे अफसरों से तो दरख्वास्त करना ही बेकार हैं. ठीक है, हम तो जिंदगी में क्लर्क की बने. मगर अपनी क्लर्की भी ईमानदारी से करते रहे.''[५] व्यक्ति की अकर्तव्य वाली भावना व केवल दिखावे के लिए कायदे कानून की बात करना भी भ्रष्टाचार का ही एक उदाहरण है जिसका विरोध माधोसिंह अपने इस वाक्य से करते हैं। इस वाक्य में वह उनकी नकल उतारते हैं जो कभी कायदे कानून से चलते ही नहीं – '' 'समझे जेंटलमैन? ' – 'अब आप जाइए।' – 'कायदे–कानून से चलना पड़ता है।''[६]

यह कटुसत्य है कि ऐसे भ्रष्ट आचरण वाले समाज में जेंटलमैन केवल उन्हीं व्यक्तियों को कहा जाता है जो चुपचाप स्वयं के सामने होने वाली समस्याओं को देखकर भी उन समस्याओं के जिम्मेदार व्यक्ति को गलत न समझे और न ही उनका विरोध करें। रहा सवाल कायदे कानून से चलने का, तो नकारात्मक दृष्टि से भ्रष्ट व्यक्तियों के लिए कायदे कानून केवल उनके फायदे के लिए हो और जनता की परेशानी के विषय में न सोचते हो। सकारात्मक दृष्टि के अनुसार,अगर वास्तव में सरकारी तंत्र कायदे कानून से ही चलने लगे तो माधोसिंह जैसे व्यक्ति को इतनी व्यर्थ की परेशानी ही क्यों भुगतनी पड़े। भ्रष्ट व्यक्तियों की लापरवाही के कारण व्यक्ति हमेशा संघर्ष करता ही रह जाता है लेकिन उसे सही प्रमाणित करने के लिए इन सरकारी लापरवाह व्यक्तियों की इन्वेस्टिगेशन कभी खत्म नहीं होती। यह लोग अपनी गलतियों की इन्वेस्टीगेशन न करके हमेशा स्वयं को सही सिद्ध करने की इन्वेस्टिगेशन करते रहते हैं। इसी बातों से चिढ़कर माधोसिंह का मित्र मगन भी कह उठता है – ''(चिढ़कर) इनफस्टीगेशन अफसर की भी नानी मरे.''[७]

आज समाज के भीतर पनपती कमजोरी व लापरवाही आम आदमी की सफलता के मार्ग की मुख्य बाधा बनती जा रही है जिसके कारण समाज में रिश्वतखोरी बढ़ती है और दिन प्रतिदिन यह समस्याएं छोटे से लेकर बड़े–बड़े विभागों में देखने को मिलती है। परिणामस्वरूप गरीब व्यक्ति जिसके पास रिश्वत देने हेतु पर्याप्त धन न होने से वह केवल अपनी समस्याओं को कागज पर लिखकर देने के अतिरिक्त और कुछ नहीं कर सकता। ऐसे आर्थिक भ्रष्टाचार से परेशानी माधोसिंह केवल चिट्ठी पर चिट्ठी लिखने को विवश है। वह अपनी पत्नी कमला से कहता है– ''छह चिट्ठियां पहले लिख चुका हूं, अब क्या सातवीं लिखने से उनकी सोई बला जागेगी? सरकारी मुलाजमत मैंने भी की है. जानता हूं इन दफ्तरों में आम आदमी की सुनवाई कितनी होती है।''[८] इन अधिकारियों की लापरवाही को सुधारने के लिए आम आदमी को ही समझाया जाता है कि गलती उनसे (अधिकारी वर्ग) हुई ही नहीं है जिसके कारण व्यक्ति केवल ऐसी बातचीत के जाल में उलझा रहता है जिसमें समस्याओं का समाधान नहीं बस आरोप–प्रत्यारोप का दौर चलता है। ऐसी समस्याओं से परेशान व्यक्ति माधोसिंह की तरह बस यही कह सकता है– '' जीता–जागता आपके सामने खड़ा हूं, आप अपने रिकार्ड में हुई गलती सुधार लीजिए।''[९]

इस लोकतंत्र में परिश्रम व ईमानदारी से कमाए हुए धन को प्राप्त करने के लिए भी व्यक्ति दर–दर की ठोकरें खाता है। इन ठोकरों से वह समस्याओं के गहरे दलदल में फंसकर यही कहता है – ''.. सब तरफ दलदल है... आजकल के इस दलदल में पड़े आम आदमी के लिए तो सांस लेना भी मुश्किल–''[१०] लोकतंत्र की सेवा करने वाले राजनेता (कुलजीवन लाल) भी आम आदमी की सेवा करने के बजाए उनसे बातों की राजनीति करते हैं– ''तुम लोग बहुत देर से आए हो मेरे पास! महीने भर पहले आए होते तो

दो दिन में तुम्हारा काम हो सकता था। एक जमाना था, पार्लियामेंट में हमारी पार्टी की मैजोरिटी थी. स्याह करें, सफेद करें, सब चलता था!..हम यह काम जरूर कर देते! लेकिन तब, जबकि तुम्हारा केस फ्रॉड होता. ''११ देश में राजनीतिक भ्रष्टाचार इतना बढ़ गया है की कुलजीवन लाल जैसे भ्रष्ट नेता समाजसेवा के बजाय केवल अपनी सेवा(जैसे ज्यादा विश्राम करना, मालिश करवाना) तथा दूसरे की समस्याओं पर ध्यान देने का मात्र दिखावा करके खुद कुछ भी नहीं करते। आज भारत की राजनीति में ऐसे ही राजनीतिज्ञों की भरमार है जो देश की चिंता नहीं करते। चिंता करते हैं तो केवल अपने धन की और अपने पद की। यहां तक कि उनकी पदलोलुपता इतनी बढ़ जाती है कि वह उसके लिए कुछ भी कर गुजरते हैं। 'सुनो शेफाली' नाटक में सत्यमेव दीक्षित भी ऐसे ही पदलोलुप राजनेता है जो इस कार्य में अपने बेटे को शामिल कर लेते हैं। लेकिन शेफाली जो ऐसे भ्रष्ट विचारों की पुरजोर विरोधी है और अंत तक उसका विरोध बकुल से कटाक्ष भरे विद्रोही शब्दों में करती रहती है – ''अपने इंसान होने का सबूत तो दिया होता? तुम क्या समझते हो मैं कुछ जानती नहीं?. मुझे क्या पता था यह पूरा सिलसिला सिर्फ तुम्हारी दया–दृष्टि–वश चल रहा है?. ऐसा मैं पहले जान पाती तो उसी वक्त तुम्हारा धन्यवाद कर देती.,.बकुल! मैं सिर्फ प्यार करना जानती थी. प्यार करती रही. हिसाब तो तुम लगाते रहे. और तुम्हारे घर वाले. ''१२ यह हिसाब, दया–दृष्टि–वश आदि इन सभी शब्दों के पीछे ही छिपा है बकुल व उसके पिता का राजनीतिक षड्यंत्र। जिसमें वह समाज की नजरों में हरिजनों(शेफाली) का भला करके राजनीतिक स्वार्थ को साधना चाहते हैं। इसी षड्यंत्र का पता ज्योतिषी आचार्य मननदेव को भी होता है तो वे सत्यमेव दीक्षित को सचेत करते हुए कहते हैं– ''यह झूठ है!. सरासर झूठ है, दीक्षित जी!. यह फैसला आपने इसीलिए किया है ताकि लोग आपकी समाजसेवा पर फूल बरसा सकें–मैंने मिसाल कायम की है. मुझे उठाओ. मंच पर लाओ. नायक बनाओ,..।. लेकिन अपने अहंकार का झंडा गाड़ने के लिए आपको जिस लड़की के कोमल कंधों की जरूरत है, वह आपको नहीं मिलेगी। वह लड़की भोली हो सकती है, पर बड़े अहं की मालिक है. इस काम में उसका सहयोग आपको कभी नहीं मिलेगा।''१३ अतः राजनीतिज्ञों के लिए समाजसेवा उस आग की तरह है जिसमें स्वार्थसिद्धि रूपी रोटियां आसानी से से की जा सकती है और अज्ञानी व जागरूकता के अभाव में जनता को यह भ्रम रहता है कि उनकी सेवा हो रही है।

निष्कर्ष

आज के समय में समाज के लिए भ्रष्टाचार उस राक्षस के समान है जिसको सच्चरित्र तथा समाजसेवा को अपना सर्वस्व मानने वाला जागरूक व्यक्ति भी कभी समाप्त नहीं कर सकता। अगर वह उसको समाप्त करने की दिशा में आगे बढ़े तो भी यह भ्रष्टाचार रूपी राक्षस नित्यप्रति नए–नए रूप धारण कर न जाने किस–किस प्रकार से आघात या छल पहुंचाने को तैयार बैठा हो। नाटक 'दिल्ली ऊंचा सुनती है' और 'सुनो शेफाली' जैसे नाटकों में भ्रष्टाचार आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक तीनों रूपों में आकर अपना प्रभाव दिखाता है जिसमें माधोसिंह इस भ्रष्टाचार से संघर्ष करते–करते हताश की अवस्था में चले जाते हैं तथा इसी कारण से उनका जीवन भी प्रायः समाप्त हो जाता है। शेफाली भी बाहरी व आंतरिक संघर्षों से लड़ते हुए समाज सेवा का ढोंग रचने वाले स्वार्थी भ्रष्टाचारियों से अपने परिवार को बचाती हुई भी अंततः बचा नहीं पाती। इस प्रकार नाटकों के पात्र माधोसिंह व शेफाली की निजी जिंदगी इसी भ्रष्टाचार रूपी हथियार द्वारा कहीं घायल होती है तो कहीं धीरे–धीरे समाप्त ही हो जाती है।

संदर्भ सूची

1. छावड़ा, गोविंद. (1979). हिंदी निबंध. यूनाइटेड बुक हाउसः 4872 चांदनी चौक, दिल्ली–110006. पृष्ठ ०४१–४२.
2. कुमार, कुसुम. (2018). दिल्ली ऊंचा सुनती है. किताब घर प्रकाशनः 4855–56/24, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002. पृष्ठ २४४.
3. कुमार, कुसुम. (2018). दिल्ली ऊंचा सुनती है. किताब घर प्रकाशनः 4855–56/24, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002. पृष्ठ २४४–४५.
4. कुमार, कुसुम. (2018). दिल्ली ऊंचा सुनती है. किताब घर प्रकाशनः 4855–56/24, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002. पृष्ठ २५६.
5. कुमार, कुसुम. (2018). दिल्ली ऊंचा सुनती है. किताब घर प्रकाशनः 4855–56/24, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002. पृष्ठ २७६.
6. कुमार, कुसुम. (2018). दिल्ली ऊंचा सुनती है. किताब घर प्रकाशनः 4855–56/24, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002. पृष्ठ २८०.
7. कुमार, कुसुम. (2018). दिल्ली ऊंचा सुनती है. किताब घर प्रकाशनः 4855–56/24, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002, पृष्ठ २६२.
8. कुमार, कुसुम. (2018). दिल्ली ऊंचा सुनती है. किताब घर प्रकाशनः 4855–56/24, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002. पृष्ठ २३८.

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.04

9. कुमार, कुसुम. (2018). दिल्ली ऊंचा सुनती है. किताब घर प्रकाशनः 4855–56 / 24, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002. पृष्ठ २५४.
10. कुमार, कुसुम. (2018). दिल्ली ऊंचा सुनती है. किताब घर प्रकाशनः 4855–56 / 24, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002. पृष्ठ २५४.
11. कुमार, कुसुम. (2018). दिल्ली ऊंचा सुनती है. किताब घर प्रकाशनः 4855–56 / 24, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002. पृष्ठ २५४.
12. कुमार, कुसुम. (2018). सुनो शेफाली. किताब घर प्रकाशनः 4855–56 / 24, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002. पृष्ठ ३२०–३२१.
13. कुमार, कुसुम. (2018). सुनो शेफाली. किताब घर प्रकाशनः 4855–56 / 24, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002. पृष्ठ ३३७.

5

अवनद्ध वाद्य तबला एवं उसका विकास

डॉ. वेणु वनिता
असिस्टेंट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्षा, संगीत विभाग
कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ
ईमेलः venuvanita@gmail.com

श्री आदित्य नाथ तिवारी
शोधार्थी, गायन विभाग
संगीत एवं मंच कला संकाय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
ईमेलः adityatiwari1a1@gmail.com

सारांश

भारतीय शास्त्रीय संगीत में विविध कालखंडों में संगीत साधकों तथा श्रोताओं के स्वाद के अनुसार अनेकानेक आविष्कार हुए हैं। विविध आविष्कारों की विशाल सूची में तबला वाद्य का प्रकाश में आना एक अत्यंत सुखद घटना है। दो भागों से मिल कर पूर्णता प्राप्त करने वाला वाद्य तबला भारतीय शास्त्रीय संगीत के साथ ही उपशास्त्रीय, सुगम एवं लोक संगीत में भी अत्यंत लोकप्रिय है। समय के साथ शास्त्रीय संगीत में ख्याल गायन तथा सितार में गत आदि मुलायम तथा कोमल प्रकृति के चीज़ों का सृजन हुआ। उक्त मुलायम चीज़ों के संगत के लिए अवनद्ध वाद्यों में तबला जैसा मुलायम वाद्य उपस्थित हुआ। विविध कोमल प्रकृति के सांगीतिक शैलियों को ताल वाद्य के रूप में तबला ने पूर्णता प्रदान की है। लोकप्रिय ताल वाद्य तबला की यात्रा अत्यंत रोचक रही है। प्रस्तुत शोध पत्र में तबला वाद्य एवं उसके विकास पर चर्चा की गयी है।

मुख्य बिन्दु

तालवाद्य, ठेका, घराना, बोल, प्रचार, लोकप्रियता।

भूमिका

भारतीय संगीत ने वैदिक काल से ही ईश्वर साधना तथा वैदिकोत्तर काल में मनोरंजन के अपने अपेक्षित लक्ष्य को पूर्ण किया है। वर्तमान काल में संगीत से सामान्य मानव के मन तथा आत्मा की तृप्ति तो हो ही रही है साथ ही संगीत के चिकत्सकीय गुणों पर भी विचार किया जा रहा है। संगीत का यह प्रभाव सर्वथा ताल वाद्यों के बिना अधूरा है। वैदिक काल से ही ताल वाद्यों ने संगीत के गायन वादन तथा नृत्य तीनों ही अंगों की प्रस्तुती को पूर्णता प्रदान किया है। वर्तमान काल में भी संगीत के विविध अंगों तथा उपांगों में ताल वाद्यों का समावेश एक अतिआवश्यक अवयव के रूप में है। वर्तमान काल में संगीत के विविध अंगों में संगत तथा स्वतंत्र वादन हेतु विविध ताल वाद्यों में तबला अत्यंत लोकप्रिय वाद्य के रूप में स्थापित हो चुका है।

विषय प्रवेश

वर्तमान काल में उत्तर भारतीय संगीत में प्रयुक्त होने वाले अवनद्ध वाद्यों में तबले का शीर्ष स्थान है। अवनद्ध वाद्य को "तालवाद्य" भी कहा जाता है क्योंकि इन वाद्यों से संगीत में लय धारण होती हैं। तबला वाद्य में दो भाग होते हैं। तबले के इन दोनों भागों को दाहिना तथा बांया (डग्गा) कहा जाता है। वैदिक काल में ही भारत में ताल का ज्ञान उपलब्ध हो चुका था। वैदिक काल से वर्तमान तक अलग–अलग प्रकार के लगभग 360 सम और विषम तालो का उल्लेख विविध संस्कृत ग्रंथों में प्राप्त होता है। काल यह अखंड होने के कारण गणित शास्त्र के आधार पर अलग–अलग संख्याओं के अगणित ताल बन सकते हैं। ऐसी कल्पना है कि समुद्र मंथन के समय जब अमृत का प्राकट्य हुआ तब इस अद्भुत रस के प्राप्त होने कि प्रसन्नता के कारण देवता तथा असुर नृत्य करने लगे। देवताओं के नृत्य से सम तालों का निर्माण हुआ तथा असुरों के नृत्य से विषम तालों का उद्भव हुआ।

तबला वादन के लिए तबले के दोनों अंगों के विविध स्थानों से उत्पन्न होने वाले नादों से विविध बोलों की कल्पना की गयी। इस प्रकार तबला के भाषा की निर्मिती संभाव्य हुई। दाये तथा बाये के संयुक्त तथा एकल अक्षरों से प्रचलित तालों के ठेकों की रचना

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.05

की गई। तालों के ठेके उसके स्वरूपनुसार अलग अलग लय में निश्चित किये गये। प्राचीन ग्रंथों में कहीं भी तालों के निश्चित ठेको का स्पष्ट उल्लेख नहीं है। प्राचीन काल में गायन, वादन एवं नर्तन के वजन के अनुसार वादक को ठेके स्वयं बांधना पड़ते थे। अनुमान है कि ध्रुपद गायकी के प्रचार प्रसार के साथ–साथ 15वीं सदी में तालों के ठेकों का जन्म हुआ होगा। इन ठेकों की रचना छन्दों के आधार पर की गई होगी। इन तालों के ठेकों को बार–बार संगत में प्रयुक्त किये जाने से वे सभी ठेके जो एक बार विकसित हुये परंपरा से अगली पीढ़ी के लिये प्रमाण बन गये। यद्यपि तबले की भाषा का आधार मृदंग की भाषा ही रहा तथापि तबले के दाये तथा बाये से निकलने वाले घुमकदार, स्पष्ट तथा मृदु नाद ध्वनि के कारण तबले की भाषा कालान्तर से मृदंग की अपेक्षा अधिक प्रभावी हुई। तबले की भाषा भिन्न–भिन्न प्रांतों में भिन्न–भिन्न रही तथापि बोलों के निकास में बहुत कुछ साम्यता बनी रही। तबले पर बजने वाले एक ही प्रकार के बोलों का अलग–अलग प्रांतों में अलग–अलग प्रकार से उच्चारण किया जाने लगा। जैसे :

धिनतक –	महाराष्ट्र, बनारस, दिल्ली
धेन तक् –	पूरब, फरूखाबाद, अजराड़ां
धेण तक –	पंजाब, लाहौर, कराची।

तबले से उत्पन्न होने वाले बोल (वर्ण) संख्या का अलग–अलग विद्वानों ने अलग–अलग उल्लेख किया है। उसे यदि हम सूक्ष्म दृष्टि से देखते है तो मुख्य सात वर्ण ही बनते है। वे है– क्, घ अथवा ग, त् द् न, ट, र। तबले की भाषा में तालव्य, कंठ्य और दत्य व्यंजनों का प्रयोग दिखाई देता है। ओष्ठय अथवा उकारांत स्वर का प्रयोग नहीं होता है। तबले के वर्णों को निकालने के अलग ढंग प्रचलित हुए। दाये बायें के गाज और दाब के अनुसार अलग–अलग विद्वानों ने अपनी–अपनी विशेषता के अनुसार बोलों के निकास को प्रचलित किया तथा इसी आधार पर अलग–अलग बाज और घरानों का जन्म हुआ। तबले के सुधारक तथा बोल एवं ठेकों के सुधारक माने जाने जाने वाले सिद्धार खां के वादन शैली को दिल्ली बाज कहा जाने लगा। इस बाज के सिद्धार खां के शिष्यों द्वारा दिल्ली घराने का प्रादुर्भाव हुआ। सिद्धार खां के वंश परम्परा के लोगों द्वारा लखनऊ के नवाब के दरबार में कलाकार बन गये तथा उन्होंने वहां के परिस्थिति के अनुसार अपने वादन शैली में बदलाव लाया। इस शैली के वादक तथा प्रचारक शिष्यों द्वारा लखनऊ घराने का प्रादुर्भाव हुआ। लखनऊ घराने से ही वादन शैली में बदलाव आने से फरुखाबाद घराना प्रादुर्भाव में आया। दिल्ली घराने के दो शिष्य जो मेरठ के समीप अजराडा के रहने वाले थे, उन्होंने अजराडे जाकर अपने वादन शैली की विशेषता के आधार पर शिष्य परंपरा बनाई। इस प्रकार अजराडा घराना प्रादुर्भाव में आया। दिल्ली घराने के शिष्य मोदू खां जो लखनऊ में रहते थे, उनके शिष्य रामसहाय जी बनारस जाकर बस गये। बनारस में मृदंग (पखावज) का महत्व अधिक था अतः रामसहाय जी ने अपनी शैली में खुले बोलों की विशेषता को समाहित किया। इस प्रकार विशेष वादन शैली के आधार पर बनारस घराने का प्रादुर्भाव हुआ। इसी प्रकार पंजाब घराना भी अपनी एक विशेष वादन शैली के आधार पर प्रचार में आया।

19वी सदी से उत्तर भारत में ध्रुपद, धमार आदि गायन शैलियों का प्रचार कम हो गया तथा ख्याल गायन शैली अधिकता से प्रचार में आई। इसी प्रकार तंतु वाद्यों में सितार आदि तंत वाद्यों का प्रचलन भी बढ़ गया। तबला वाद्य को पूर्व में कमर में लटकाकर बजाया जाता था। ख्याल गायन तथा तंत्रीय वाद्यों की संगत में श्रेयस्कर होने के कारण इसको नीचे रखकर तथा नीचे बैठकर बजाया जाने लगा। ख्याल गायन श्रृंगार युक्त गायन प्रकार होने से इसमें पखावज वादन के गांभीर्य युक्त एवं खुले बोल, सौन्दर्य निर्माण करने में सक्षम नहीं हो सके। ख्याल गायन तथा तंत्र वादन के साथ संगत करने का स्थान तबले ने ले लिया।

इस प्रकार सारे उत्तरी भारत के ताल वाद्यों में तबले ने अग्रणी स्थान प्राप्त कर लिया। तबले के विकास के साथ साथ प्रयुक्त होने वाले वादन की विशेषताओं का भी विकास होने लगा। आज विभिन्न प्रकार की रचनाएं कलाकारों द्वारा प्रस्तुत की जाती है तथा उन्हें विशेष नाम दे दिया जाता है। वर्तमान काल में तबला वादन इतना विकसित हो चुका है कि इस में अन्य वाद्यों के अनुसार स्वतंत्र वादन भी होने लगा है तथा स्वतंत्र वादन लोकप्रिय भी हो गया है। वर्तमान में तबला वादन इतना विकसित हो गया है कि उसे पूर्ण रूप से समझना एवं सीखना अत्यंत कठिन हो गया है।

तबले के विकास के कारण

1. तबले की बनावट ऐसी है कि उसके दो भाग और वे भी उर्ध्व मुखी, तथा ऊंचाई भी कम होने से यह मृदंग (पखावज) की अपेक्षा वादन करने में सुविधाजनक रहता है।
2. पखावज (मृदंग) के बाये मुख पर अंगुलियों द्वारा वादन नहीं किया जाता जिस कारण दायें हाथ की तैयारी के साथ बाये हाथ की हथेली का बाये मुख पर उतनी शीघ्र गति से चलना कठिन हो जाता है और इस कारण मृदंग (पखावज) बजाना तबले की अपेक्षा अधिक कठिन होता है। तबले के दाये तथा बाये दोनों मुखों पर दाये बाये दोनों हाथों की अंगुलियों का शीघ्रता से चलना तबले के अधिक उपयोगी होने का कारण बना है।
3. मृदंग (पखावज) के किसी भी मुख पर घुमक निकालने की सुविधा नहीं होती हैं। दाये मुख पर स्याही होती है तथा उस पर हथेली तथा अंगुलियों का उपयोग किया जाता है। बाये मुख पर स्याही के स्थान पर गीला आटा लगाया जाता है जिस कारण बाये मुख पर हथेली के निचले भाग से घुमक निकालना संभव नहीं होता है। इसके विपरित तबले के दाये मुख पर

हथेली तथा उगुलियो दोनों का प्रयोग उसी प्रकार बायें पर भी स्याही लगी होने के कारण अगुलियो तथा हथेली दोनों का प्रयोग होता है। तबले के बाये मुख पर ढोलक के समान घुमक भी निकाली जा सकती है। इस कारण तबले के वादन में सुंदरता बढ़ जाती है।

4. तबले के वादन में आंसदार खुले तथा बिना आंसदार मृदु (सुंदर) दोनों प्रकार के बोलों का वादन संभव होने से उसके वादन में मिठास उत्पन्न होती है।
5. तबला वाद्य ऊर्ध्वमुखी होने के कारण तथा ऊंचाई सीमित होने के कारण इस पर लयकारी में तथा तैयारी के साथ वादन करने में सरलता होती है।
6. तबले पर खुले तथा बंद दोनों प्रकार के बोलों का निकास सरल एवं संभव होने के कारण यह ध्रुपद, धमार आदि गांभीर्य युक्त गायन, ख्याल गायन तथा सुगम संगीत के साथ संगत करने में सक्षम होता है।
7. वर्तमान में ध्रुपद गायन जैसे गंभीर गायन की अपेक्षा ख्याल गायन एवं सुगम–संगीत का अधिक प्रसार होने से पखावज की अपेक्षा तबला वादन अधिक प्रचार में आया है।
8. यह वाद्य (तबला) एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने में सुविधा जनक होता है उसी प्रकार समय आने पर उसे खड़ा होकर कमर में बांधकर बजाना भी संभव है। इस कारण इसका प्रयोग मृदंग (पखावज) को अपेक्षा बढ़ गया है। पखावज (मृदंग) की अपेक्षा तबला वादन का साहित्य वर्तमान में इतना विकसित हुआ है कि इसका वादन सीखने के लिए अनेक ग्रन्थ उपलब्ध है। इसके अलावा तबला सीखने के लिए तबला कलाकार भी मृदंग–कलाकारों की अपेक्षा आसानी से मिल जाते हैं। तबले के एकाकी वादन के प्रचार एवं प्रसार के कारण भी तबले का महत्व दिनोदिन बढ़ता जा रहा है। संचार क्रांति के इस युग में यूट्यूब एवं विभिन्न माध्यमों से भी तबला सीखा जा सकता है।
9. तबले के दाये अंगों का भिन्न भिन्न आकार होना जिससे भिन्न स्वरों के दायें तबले अलग अलग स्वरों में उपलब्ध होने से भी तबला संगत के लिए अधिक उपयुक्त है।
10. रागों की स्वर विशेषताओं के अनुसार तबला वाद्य निश्चित स्वर मध्यम पंचमः निषाद और टीप किसी भी स्वर में प्राप्त हो सकता हैं।
11. आज तो यह भी संभव हो गया है कि 12 स्वरों में से निश्चित 7 स्वरों के दायें लेकर तबला तरंग का वादन होने लगा है। भविष्य में यह वाद्य जल तरंग के अनुसार अलग अलग रागों में तबला तरंग के रूप में बजे तो आश्चर्य की बात नहीं होगी।
12. तबले का विकास वर्तमान युग में निरंतर प्रगति पथ पर बढ़ता जा रहा है संचार क्रांति का यह युग तबला वादक को वैश्विक स्तर पर अत्यधिक लोकप्रियता प्रदान कर रहा है और इसका तकनीकी पक्ष भी निरंतर सुदृढ़ होता जा रहा है।

तबला वाद्य का विकास भारतीय संगीत के लिए एक अत्यंत अनमोल उपहार सिद्ध हुआ। इस वाद्य के विकास से संगीत में नवसृजित मधुर प्रकृति के गायन तथा वादन प्रकारों को पूर्णता प्रदान हुई। इस वाद्य ने शास्त्रीय, उपशास्त्रीय, सुगम तथा लोक सभी प्रकार के संगीत में संगत वाद्य के रूप में अपनी उपस्थिति को प्रमाणित किया है। उक्त चारो ही प्रकार के संगीत में संगत के लिए अवनद्ध वाद्य के रूप में तबला को बहुत पसंद किया जाता है। जन प्रियता तथा कलाकारों के नवसृजन की प्रवृति ने तबला वाद्य के शिक्षार्थ तथा विविध शैलियों के संकलनार्थ अनेक घरानों को प्रकाश में लाया। वर्तमान में तबला एक अति लोकप्रिय अवनद्ध वाद्य के रूप में संगीत रसिकों के मध्य उपस्थित है।

निष्कर्ष

अपने उद्भव के काल से तबला के वर्तमान तक की यात्रा में इस वाद्य को अनेक विकास के रास्तों से हो कर निकलना पड़ा है। इस यात्रा में तबला वाद्य के साथ तबला वादन में भी अनेक कीर्तिमान स्थापित हुए हैं जिनमें घराना पद्धति के अंतर्गत तबला वादन के घरानों का भी उद्भव हुआ। वर्तमान काल में तबला वाद्य अनेक गायन तथा वादन प्रकारों की धुरी के रूप में देखा जा सकता है। विविध स्वर वाद्यों की भाँति तबला वादन का भी एक स्वतंत्र स्वरूप सांगीतिक पटल पर उभर कर आया है। आगे भी इस विषय में अनेक नए कार्यों तथा अधिकाधिक प्रचार एवं प्रसार की प्रबल सम्भावना है।

संदर्भ सूची

1. कपूर, त्रप्त. (1989). उत्तरी भारत में संगीत शिक्षा. हरमन पब्लिशिंग हाउसः नई दिल्ली.
2. शुक्ल, योगमाया. (1987). तबले का उद्गम विकास और वादन शैलियां. हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालयः दिल्ली विश्वविद्यालय.
3. मिस्त्री, आबान ई. (जनवरी–फरवरी 1991). संगीत पत्रिका. संगीत कार्यालयः हाथरस.
4. मराठे, मनोहर भालचंद्र राव. (1991). ताल वाद्य शास्त्र. शर्मा पुस्तक सदनः लश्कर ग्वालियर.

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.05

5. Peggy, holroyde. (July 01-1972). The Music Of India International Thomson Publishing. July 1/ 1972.
6. Vishnudas, Shirali Sargam. An Introduction to Indian Music Abhinav. Marg Publications. 1st edition- January 1/197.
7. मराठे, मनोहर भालचन्द्र राव. (1991). ताल वाद्य शास्त्र. शर्मा पुस्तक सदनः लश्कर ग्वालियर.
8. पेंतल, गीता. (प्रथम संस्करण 1988). पंजाब की संगीत परंपराः ओम पब्लिकेशन. तृतीय संस्करण. 2011.
9. (1979). धर्मयुग साप्ताहिक. सितम्बर.
10. (1970). संगीत कला विहार. अखिल भारतीय गांधर्व महाविद्यालय मंडल मिराज. मई.
11. भट्ट, डॉ नलिन सुंदरमस्वर्गीय साक्षात्कार. 05 / 07 / 2007.
12. वनिता, वेणु. (2004). तबला ग्रंथः मन्जूशा पब्लिशर्सः नई दिल्ली.
13. संगीत तबला अंक. संगीत कार्यालयः हाथरस.

6

मुग़लकालीन आखेट चित्र

डॉ० शुभा मालवीय
आसिस्टेंट प्रोफेसर, चित्रकला विभाग
कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ
ईमेलः shubhagrover1268@gmail.com

सारांश

भारत में मुगल सल्तनत के बादशाहों द्वारा गई आरंभ की मुगल चित्र शैली में भारतीय चित्रकला में नए प्रगतिशील तत्वों का समावेश किया गया था तथा अंकन अलंकरण रंगाभरण के जरिए उसमें नया आलोक प्रदान किया गया था। मुगलकालीन कला का जन्म मुगल सल्तनत के उन्नयन के साथ आरंभ हुआ था। मुगल बादशाहों द्वारा प्रोत्साहित मुगल चित्र शैली का एक महत्वपूर्ण पहलू है कि मुगल शैली के अनेक चित्र उस काल की घटनाओं का सजीव चित्रण प्रस्तुत करते हैं। मुगल लघु चित्र शैली का बीजारोपण हुमायूँ के समय हुआ और जहाँगीर काल तक आते–आते इस चित्रकला ने अपना सर्वोत्तम रूप प्राप्त किया। इन सभी रूपों में शिकार सम्बन्धित आखेट दृश्य अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते है। मुगल बादशाह आखेट के शौकीन होते थे तथा आखेट की अनेक विधियां लघु चित्रों में चित्रित की गई हैं। मुगलकालीन चित्रों से ही हमें ज्ञात होता है उस समय तत्कालीन भारत में चीते भी पाए जाते थे "जिनको मुगल शासक आखेट में उपयोग में लाते थें। मुगलकालीन आखेट चित्र अपने आप में एक अलग अध्याय हैं जो कि तत्कालीन शिकार पद्धतियों को चित्रित करती है। बादशाह जब शिकार पर जाते थे तो उनके साथ चित्रकार भी होते थें जिसका प्रमाण हैं शेर के शिकार के दो चित्र इंडियन म्यूजियम, कोलकत्ता में सुरक्षित है। एक चित्र में दिखाया गया है कि शिकार में बंदूक की गोली से चोट खाकर शेर, हाथी पर सवार बादशाह पर उछलकर आक्रमण कर देता है। बादशाह खाली बंदूक से शेर को डरा कर बचने का प्रयास कर रहा है। उसका अंगरक्षक भाग रहा है और पीलवान डर कर झुक गया है। घुडसवार सिपाही उसकी रक्षा के लिए आ रहे है। इस प्रकार आखेट चित्र के जरिए, समय, परिस्थिति तथा घटना का सूक्ष्म विवरण दर्शक के सम्मुख उपस्थित हो जाता था।

मुख्य बिंदु

प्रगतिशील, तत्व, मुगल, लघु चित्र शैली, आखेट–चित्र।

मुगल लघुचित्र कला एक विदेशी शैली थी जिसने उत्तरोतर ईरानी, भारतीय और यूरोपीय चित्रकला के श्रेष्ठ तत्वों को आत्मसात् किया और नवीन चित्र शैली का रूप लेकर प्रकट हुई। भारत में मुगल साम्राज्य के आविर्भाव और स्थायित्व के साथ मुगलकालीन चित्रशैली का जन्म हुआ। कालान्तर में बादशाहों की रूचियों के अनुरूप इसका पोषण और संरक्षण हुआ। मुगल सल्तनत के चरमोत्कर्ष में यह षैली श्रेष्ठतम रूप में सामने आयी। अकबर जहॉगीर और शाहजहॉ तक का समय कुल मिलाकर लगभग एक शताब्दी था। इस अवधि में मुगल शासकों की रूचि के अनुरूप विषयगत बदलाव आते गए। इस्लाम में चित्र निशेध होने के बावजूद जिज्ञासु अकबर ने चित्रकला को प्रश्रय दिया। अकबर ने इस्लाम धर्म के इतिहास और अपने पूर्वजों को भी चित्रित करवाया, वहीं दूसरी ओर रामायण, महाभारत नलदमयन्ती, पंचतंत्र दशावतार और हरिवंश जैसे प्रसद्धि हिन्दू धार्मिक ग्रन्थ की फारसी भाषा में अनुदित करवाया और उन ग्रन्थों में मुगल षैली में चित्रित हुए भारतीय पौराणिक आख्यानों के चित्र अकबर युगीन चित्रकारों में कौशल और कल्पनाशीलता का सुन्दर नमूना प्रस्तुत करते है। मुगल शैली का सर्वागीण विकास जहॉगीर के शासनकाल में हुआ था जहॉगीर परलें दर्जे का सौन्दर्योपासक, प्रकृति प्रेमी और कलानुरागी बादशाह था। खग–मृग विज्ञानी बादशाह जहॉगीर के पास दुर्लभ पशु–पक्षियों का संग्रह था। इन सबका विवरण जहॉगीरनामा में उल्लिखित मिलता है और उसके चित्रित अंशों को देखकर पाठक आश्चर्यचकित हो जाते हैं। चित्र वास्तविकता के निकट हो और सूक्ष्म से सूक्ष्म यथावत अंकन विशेषताओं को समाहित किये हो इसके लिये वह

Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.06

चित्रकारों को प्रोत्साहित एवं प्रेरित करता था। अबुल हसन, उस्ताद मंसूर और मुहम्मद शरीफ जैसे चित्रकारों के साथ बादशाह के प्रगाढ़ सम्बन्ध थे। चित्रकार और चित्रकला को जहॉगीर कितना महत्व देता था इसका पता हमें आखेट दृश्यों को देखने से मिलता है। पशु–पक्षियों से अनन्य लगाव के कारण जहॉगीर को शिकार में विशेष रूचि थी और शाही रिवाज के अनुसार वह शिकार हेतु बहुधा जाया करता था। इस शिकार में चित्रकारों को अपने साथ रखना वह नही भूलता था। इण्डियन म्यूजियम में संग्रहीत जहॉगीर के दो आखेट दृश्य मिलते है। एक चित्र में बादहशाह घायल शेर से अपनी सुरक्षा करते दिखाया गया है। शिकार में बन्दूक की गोली से चोट खाकर शेर हाथी पर सवार बादशाह पर उछल कर आक्रमण कर देता है। बादशाह खाली बन्दूक से शेर का डराकर बचने का प्रयत्न कर रहा है। हाथी से बादशाह का अंगरक्षक भाग रहा है और पीलवान डरकर झुक गया है घुडसवार सिपाही जहॉगीर की रक्षा के हेतु उसके सान्निकट आ गए है। चित्रकार जो कुछ आखेट के दौरान देखते हूवहू वैसा ही चित्रांकित करते थे इसलिए मुगल कालीन चित्र अपने समय की संस्कृति से परिचित करवाते है।

मुग़लकालीन संस्कृति में भारत में आखेट प्राचीन काल से ही शासकीय वर्ग का रूचिकर विषय रहा है। मुग़लों ने आखेट को आमोद–प्रमोद का एक साधन माना और उसे बढ़ावा भी दिया। आखेट के अलावा अलग उन्हें वन्य प्राणियों से लगाव भी था जिसके फलस्वरूप वे जंगली पशुओं को पालने और आखेट करने में उनका इस्तेमाल करते थे उदाहरणार्थ अकबर के पास विभिन्न प्रजाति के कई चीते, मस्त हाथी और जहाँगीर के पास बाज थे जो आखेट में प्रयुक्त होते थे।

आखेट की प्रथा मुग़ल पूर्वजों ने शुरू की थी। बाबरनामा में लिखा है कि बाबर पशुओं की नई–नई किस्मों को देखकर सदा रोमांचित रहता था। वह स्वयं गैंडा (Rhinoceros Unicorns) और जंगली गदहा (Equs nemionus) का शिकार करता था।

हुमाँयु का लम्बा समय भारत के बाहर ईरान में बीता लेकिन अकबर ने न केवल आखेट की कई दास्तान लिपिबद्ध करवायी बल्कि उन्हें चित्रित करवाकर भारतीय चित्रकला इतिहास में नया अध्याय जोड़ा था। अकबरनामा के कई पष्ठ आखेट दृश्यों से भरे पड़े हैं। अकबर के द्वारा किये गये आखेट दृश्य हमें वहीं उपलब्ध होते हैं। विक्टोरिया एण्ड एल्बर्ट म्यूजियम में संग्रहीत अकबरनामा के एक मुग़लकालीन चित्रकार दृश्य लाल और साँवला द्वारा बनाया गया है जिसमें सन् 1572 ई0 में सांगानेर के निकट शाही चीते द्वारा किए गए शिकार का चित्रांकन है। बादशाह ने घोड़े पर सवार होकर काले हिरनों के झुण्ड का पीछा किया और शाही चीते ने इस झुण्ड को दौड़ाया और एक हिरन मार गिराया। अकबर द्वारा पालित शिकारी चीतों को सिर्फ काले हिरनों का शिकार करने का प्रशिक्षण दिया जाता था। इस शिकार के समय की नायाब घटना यह थी कि चीते ने काले हिरनों का पीछा करते हुए 22 मीटर चौड़ी नदी को एक ही छलाँग में पारकर लिया था। इस चित्र में हिरन को मार गिराते चीते के अलावा एक और चीता भी है जिसकी आँखों पर पट्टी बंधी है। उसे बैलगाड़ी के ऊपर रखी सीखचों से आजाद किया गया है। परिचारक हाथों में ''हाँकना'' पकड़े है। चित्र में लगभग दस काले हिरण दिखाए गए हैं।

चेस्टर बेरी लाइब्रेरी में संगृहीत एक खण्ड में दौलत का भी काम मिलता है। इस दृश्य में युवा अकबर ने चीते को पकड़ने का खास तरीका ईजाद किया है जिसमें वह सफल भी रहा है। गहरे गह्वर में चीता गिरकर फंसा है। दो व्यक्ति उसे बाँधकर ऊपर खींचने के लिए मशक्कत कर रहे हैं। गह्वर के दोनों ओर दरबारीगण झुकरकर उसे देख रहे हैं। उनके चेहरे पर संभावित खतरे का कोई भय भी नहीं है। एक मौलवी प्रार्थना की मुद्रा में खड़ा है। युवा अकबर बड़ी तन्मयता से अपने सफल परीक्षण को निहार रहा है।

विक्टोरिया एण्ड एल्बर्ट म्यूजियम लंदन के अकबरनामा का एक दृश्य चित्र मुग़लकालीन चितेरे मिस्कीन और मंसूर ने सम्मिलित रूप से बनाया है। 37.5×25 सेमी आकार का यह दृश्य दोहरे पृष्ठ पर बनाया गया है। सन् 1567 ई0 में घटित घटना का चित्रण है। जिसके अन्तर्गत बसन्त के दिनों में अकबर ने कामराह बनवाकर वहाँ बड़ी संख्या में शिकार किया था। मैदान के बीचो बीच एक शामियाना बनाया गया और एक विषाल बाड़ा बनवाया गया जिसमें कई प्रजाति के चौपायों को रखा गया। अकबर घोड़े पर सवार होकर तेजी से इन्हें दौड़ा रहा है और तीरों से बींध रहा है। दाहिना पृष्ठ का चित्रांकन मिस्कीन एवं सरवन का है तो बायाँ पृष्ठ मिस्कीन और मंसूर के सम्मिलित प्रयासों से बना है। बाद के अकबर कालीन चित्रों में गोलाकार संयोजन का ऐसा दूसरा उदाहरण नहीं मिलता। अकबरनामा में अबुल फ़जल ने अकबर के शौर्य को दिखाने वाली उस घटना को भी दर्ज किया है जिसमें वह अपने कारवां के साथ एक बार आगरा से मालवा की ओर जा रहा था, जहां ग्वालियर के सन्निकट ''नारवार'' नामक स्थान पर एक बाघिन और उसके पॉच शिशु मिले। बाघ के बच्चों को हासिल करने के लिए अकबर ने एक ही वार से बाघिन का काम तमाम कर दिया उक्त घटना का चित्रण बसावन व तारांकलन ने किया जो स्वयं उस कारवां में शामिल थे। शेरनी और बच्चे हल्के धूमिल रंग में चित्रित है जो सफेद रंग के प्रतीत होते हैं। भारत में सफेद बाघ का पाया जाना संदेहास्पद है। इसलिए कलाकारों द्वारा बाघ और बच्चों का सफेद रंग चित्रांकन का प्रयोजन अस्पष्ट है।

अकबर हर तरह के शिकार को पसन्द करता था इसलिए बहुत सारे भिन्न–भिन्न शिकार के तरीक़ों में वह खेदा को भी बहुत पसन्द करता था। ''खेदा'' यानि जंगली हाथियों को पकड़ना। यह अत्यन्त मुश्किल और खतरनाक काम होता था किन्तु इसमें भाग लेता था। इसलिए अकबरनामा में खेदा आखेट के कई दृश्य–लाल, साँवला, महेश तथा केशव खुर्द ने बनाए हैं। महेश और केशव

खुर्द का बनाया चित्र है जिसमें अकबर हाथी पर सवार अपने मनपसन्द पालतू हाथी रणभीरु और जंगली हाथी की भिड़न्त को देख रहा है।

अकबरनामा की भांति तुजुक–ए–जहाँगीरों में जहाँगीर के आखेट अभिरुचि और योग्यता के कई किस्से पढ़ने को मिलते हैं। इंडियन म्यूज़ियम कलकत्ता में संगृहीत 31.7×19 सेमी0 आकार में बना जहाँगीरकालीन चित्र है जिसमें शेरनी के शिकार का चित्रण है। चित्रकार ने घायल शेरनी की पीड़ा को भी भलीभाँति परखा है और उसका सफल चित्रांकन किया है। घायल शेरनी मृतप्रायः अवस्था में अपने अगले पंजों से अपनी आँखें ढकने का प्रयास कर रही है। घोड़े ईरानी शैली प्रभाव युक्त चित्रित है। दाहिने कोने पर पृष्ठ के ऊपर पहाड़ियों की चोटी का गठन और दूरस्थ स्थित पेड़ों का हल्का धूमिल चित्रांकन और दूर के आदमियों तथा जानवरों को छोटा चित्रांकित करना इस बात का द्योतक है कि चित्रों में पश्चिमी चित्रों में स्थापित परिप्रेक्ष्य सिद्धान्त को मुगलकालीन चितेरों ने सिद्धहस्त कर लिया था। इस चित्र में राजपूत मेहमान युवराज करन जहाँगीर की आखेट कुशलता के सम्मान में सलामी दे रहा है। मेवाड़ी पगड़ी एक गर्वीला बाना है जिसे छूना सम्मुख उपस्थित व्यक्ति हेतु सम्मानसूचक मुद्रा है।

नूरजहाँ बेगम की दिलेरी का किस्सा भी जहाँगीरनामा में दर्ज है। जिससे ज्ञात होता है कि नूरजहाँ अक्सर अपने पति के साथ शिकार में होती थी और अचूक निषानेबाज भी थी। आत्मकथा में जहाँगीर एक जगह लिखता है। ''चूँकि अहेरियों ने चार शेरों का पता लगाया था, दो प्रहर और तीन घड़ी व्यतीत होने पर हम बेगम के साथ शिकार खेलने गये। जब शेर सामने आये तब नूरजहाँ बेगम ने प्रार्थना की कि यदि आज्ञा हो तो वह स्वयं अपनी बन्दूक से शेरों को मारे। हमने आज्ञा दे दी कि नूरजहॉ ने दो शेरों को एक–एक गोली से मार डाला और अन्य दो को चार गोलियों से समाप्त कर दिया। उसने चार शेरों का शरीर निर्जीव कर दिया। अब तक इस प्रकार का निशाना लगाना मैंने नहीं देखा था कि हाथी के ऊपर हौदे से 6 गोलियाँ चले और एक भी न चूके, जिससे शेरों को उछलने या हिलने का अवसर तक न मिले। ऐसे अच्छा निशाना लगाने हेतु हमने उस पर एक लाख रुपये में हीरे की पोटली दी और एक हजार अशर्फी न्यौछावर कर दी।'

जहाँगीर अपने पालतू चीतों के जरिए भी शिकार करता था। इस सम्बन्ध में गोवर्द्धन का बनाया चित्र है जो क्लीवलैण्ड म्यूज़ियम ऑफ आर्ट में संरक्षित है। इस चित्र में एक सफेद चीता, हिरन, चीतल और सांभर का शिकार कर रहा है और उसने एक काली चित्ती वाला हिरन का शिकार किया है। जहाँगीर को न केवल आखेट प्रिय था बल्कि वह कुशल खगमृग विज्ञानी भी था। वह बाज़ का शौकीन था बाज़ों के साथ बादशाह जहाँगीर की कई शबीह मंसूर द्वारा निर्मित है। बाज़ को प्रशिक्षित करने का हुनर भी जहाँगीर को बखूबी आता था। उसके द्वारा पालित बाजों में ''शुनकर'', 'शाहीन,' 'बाहारी' नामक बाज़ थे जो केवल आखेट हेतु प्रशिक्षित थे।

मुग़लकालीन आखेट दृश्य में चित्रकार पयाग का बनाया गया शिकार दृश्य भी महत्वपूर्ण है जिसमें गोधूलि बेला में झाड़ियों में छुपा शाहशुजा सामने खड़ी नील गाय पर निशाना साध रहा है। नीलगाय सावधान तो है परन्तु सन्निकट खतरे से बेखबर है। इस आखेट की परिस्थिति में पशु और मानव किसकी विजय होगी यह सुनिश्चित नहीं है। इस द्वन्द्वात्मक स्थिति की सही–सही भावाभिव्यक्ति चित्रित हुयी है। इस चित्र में थोड़ा ऊपर पृष्ठ पर परिचारक शाहशुजा घोड़े के साथ दम साधे खड़ा है। नीले आकाश में सुनहरी और नारंगी रंग की आभा है। शाहशुजा और परिचारक इस तरीके से चित्रित है कि वे घनी झाड़ियों में घुले मिले से प्रतीत होते हैं।

उपरोक्त सभी चित्र मुगलकालीन आखेट दृश्यों के चंद उदाहरण है। मुगलकालीन चित्र अपने समय की संस्कृति और बादशाहों की आखेट–प्रियता के ज्वलन्त उदाहरण है। निसन्देह आखेट दृश्यों को चित्रांकित करके मुगल चित्रकारों में भारतीय चित्र कला में नया अध्याय जोड़ा था।

सन्दर्भ सूची

1. Ray, Nihar Ranjan. (1975). Mughal Court Paintings. First edition.
2. Pal, Pratapaditya. (1991). Master Artists of the Imperial Mughal Court. First edition.
3. Verma, Som Prakash. (1994). Mughal Painters & their Work. First edition.
4. Srivastava, Ashok Kumar. (2000). Mughal Paintings. First edition.

7

हिंदी की विदेशी नव भाषिक शैली सरनामी हिंदी के स्वरुप एवं साहित्य का विवेचनात्मक अध्ययन

सिद्धी गुप्ता

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग

कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ

सम्बद्धः चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ

ईमेलः siddhiguptaily@gmail.com

सारांश

हिंदी आज विश्व की प्रमुख भाषा है। हिंदी भाषा के पंखों की उड़ान वैश्विक पटल तक हैं। हिंदी अपने सम्पूर्ण रूप में न सही बल्कि अपनी पहचान उपभाषाओं एवं बोलियों के रूप में विश्व पटल पर बना रही है। हिंदी को विश्व पटल तक पहुँचाने में प्रवासियों एवं गिरमिटियों ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। यह भाषा मात्र भारत में ही अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं है बल्कि फिजी, मारीशस, सूरीनाम, त्रिनिदाद, दक्षिण अफ्रीका आदि देशों में निवास कर रहें प्रवासी भारतीयों द्वारा मातृभाषा के रूप में बोली जाती है। प्रवासी भारतीयों के साथ हिंदी आज अनेक देशों में पहुंची। वहाँ हिंदी ने अनेक रूप धारण किये। हिंदी की विदेशी भाषा शैलियों का विकास फिजी, सूरीनाम और दक्षिण अफ्रीका आदि देशों में हुआ। विदेश में हिंदी की नींव को सुदृढ़ करने में हिंदी की विदेशी भाषा शैलियों का विशेष रूप से योगदान रहा। विदेशों में हिंदी की भाषिक शैलियाँ जैसे—अफ्रीका में 'नेताली', उज्बेकिस्तान और कजाकिस्तान में 'पार्या', फिजी में 'फिजीबात' और सूरीनाम में 'सरनामी हिंदी' के नाम से विख्यात हुई। सूरीनाम दक्षिण अमेरिका के उत्तरी शीर्ष पर स्थित है। सूरीनाम में निवास कर रहे समस्त प्रवासी भारतीय द्विभाषी है। उनकी अभिव्यक्ति का माध्यम डच एवं हिंदी या हिन्दुस्तानी भी है। उनकी हिंदी भारत में बोली जाने वाली परिनिष्ठित हिंदी से पर्याप्त भिन्न है। इन भारतीयों के मध्य आपसी बोलचाल की भाषा हिंदी है। इसी हिंदी को 'सरनामी हिंदी' या 'सरनामी' संज्ञा से अभिहित किया जाता है। सरनामी हिंदी अवधी, भोजपुरी, ब्रजभाषा तथा खड़ीबोली का मिश्रित रूप प्रस्तुत करती है। जिसप्रकार एक फिजी के लिए 'खड़ीबोली' परायी भाषा थी लेकिन 'फिजी बात' उनकी मातृभाषा है ठीक उसीप्रकार एक सरनामी के लिए 'अवधी' और 'भोजपुरी' परायी भाषा है पर उनके लिए 'सरनामी हिंदी' मातृभाषा है। सरनामी हिंदी के स्वरुप एवं साहित्य के विकास में सूरीनाम के मुंशी रहमान खां, अमर सिंह राणा, सुरजन परोही, जीत नराईन आदि साहित्यकारों का अविस्मरणीय योगदान रहा है।

मुख्य बिन्दु

सूरीनाम, प्रवासी, सरनामी हिंदी, भारतीय, अंतर्राष्ट्रीय, गिरमिटिया।

मूल आलेख

हिंदी विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र की राजभाषा है। हिंदी भाषा का जन्म मूल रूप से भारत वर्ष में हुआ। यह भाषा पूर्ण रूप से भारत वर्ष में पल्लवित एवं पुष्पित भी हुई है। हिंदी भाषा ने धीरे—धीरे भारत के बाहर अन्य देशों जैसे— मॉरिशस, जापान, फीजी, ओस्ट्रेलिया, रूस, जर्मनी, इंग्लेंड, इटली, अमेरिका, नार्वे, थाईलैंड, नेपाल आदि में भी उतरोत्तर प्रगति की है। विदेशों में हिंदी की नव भाषिक शैलियों का पर्याप्त विकास हुआ हैं। जिस प्रकार विदेशों में हिंदी की नव भाषिक शैलियाँ जैसे— नेताली, पार्या, फिजीबात हैं ठीक उसी प्रकार सूरीनाम में हिंदी की नव भाषिक शैली 'सरनामी हिंदी' है। सूरीनाम देश दक्षिण अमेरिका महाद्वीप के उत्तर में स्थित है। सूरीनाम की आधिकारिक भाषा 'डच' है। यहाँ पर मुख्य बोलचाल की भाषा 'स्रनान तोंगो' है। 'सूरीनामी हिंदी' यहाँ के जनता की तीसरी सबसे बड़ी भाषा है। सूरीनाम में भारतीयों का प्रवेश सन 1873 में हुआ। इसी समय सूरीनाम में हिंदी का वृक्षारोपण

हो गया था। जब ग्रामीण भारतीयों का पहला दल जिसमें 410 भारतीय थे, अपनी आजीविका की तलाश में शर्तबंदी प्रथा के अंतर्गत लालारुख जहाज से सूरीनाम पहुंचे थे। उस समय भारतीय अपने भावी भविष्य के लिए अनगिनत सपने संजोकर और अपना सर्वस्व गावों में त्यागकर विदेश प्रवास के लिए तैयार हुए थे। ये प्रवासी भारत के विभिन्न प्रदेशों से सूरीनाम आये थे। इनमें से अधिकांश भारतीय पूर्वी उत्तर प्रदेश और कुछ पश्चिम बिहार के गावों से गये थे। वे अवधी और भोजपुरी में बोलते थें ।

द क्लर्क (1853) के अनुसार – "इनमें लगभग 80 प्रतिशत भारतीय उत्तर प्रदेश से तथा लगभग12 प्रतिशत बिहार से थे। जो पश्चिम उत्तर प्रदेश के थे और जो पूर्वी उत्तर प्रदेश (इलाहाबाद, फैजाबाद, बाराबंकी, रायबरेली, प्रतापगढ़) से गये थे। वे अवधी बोलते थे। बनारस, गोरखपुर और पश्चिम बिहार से गये भारतीय मगही और भोजपुरी का प्रयोग करते थे।"[1]

सरनामी हिंदी के स्वरुप का निर्माण अवधी, भोजपुरी, मगही, खड़ीबोली आदि हिंदी की उपभाषाएँ, विदेशी भाषा 'डच' एवं वहाँ के मूल निवासियों की भाषा 'स्रनान तोंगो' के मिश्रण से हुआ है। सरनामी हिंदी न तो शुद्ध रूप में शुद्ध हिंदी है, न ही अवधी और न ही भोजपुरी। यह भाषा विभिन्न भाषाओँ के मिश्रित रूप में निर्मित विदेशों में हिंदी की नवभाषिक शैली है। सरनामी हिंदी दो मुख्य रूपों में परिलक्षित होती है – 1. मानक सरनामी हिंदी 2. निकेरी की सरनामी हिंदी

सूरीनाम में सूरीनाम के गिरमीटिया जनों द्वारा विकसित सरनामी हिंदी नव भाषा है। यह भाषा वहाँ के जनता की स्फूर्ति और चेतना का प्रतीक हैं। सूरीनाम में निवास करने वाले गिरमिटियों को भी अपनी भाषा सूरीनाम हिंदी के प्रति भी विशेष आत्मीय लगाव है। सरनामी हिंदी 'रोमन लिपि' में लिखी जाती है। क्योंकि वहाँ के अधिकांश निवासियों (डच उपनिवेश) की अभिव्यक्ति का माध्यम 'डच भाषा' हैं। डच भाषा की लिपि 'रोमन' है। वहाँ के निवासियों को रोमन लिपिबद्ध सरनामी हिंदी को समझने में सहजता महसूस होती है। सूरीनाम में सरनामी हिंदी को 'देवनागरी लिपि' में लिपिबद्ध करने के निरंतर प्रयास किये जा रहें हैं। सूरीनाम में निवास करने वाले देशवासियों को सरनामी हिंदी में ही अपने भावों और विचारों को अभिव्यक्त करना चाहिए। कवि 'जीत नराईन' ने स्पष्ट शब्दों में लिखा है –

"सरनामी सरनाम के हिन्दुस्तानियों की महतारी भाषा है। हिंदी सरनाम के खातिर एक परदेशी भाषा है... अइसे न समझो कि हम हिंदी से कोई लड़ाई करत हैं, ना, जो माँगे जउन भाषा सीखे ओके खुसी है । बाकी सरनाम के हिन्दुस्तानियों की पहली भाषा सरनामी है कि ना–सरनामी भाइयों, अपन समाज पर भी मूड़ मारों। समाज बनावे के पहिले नींव अपन भाषा है।"[2]

किसी भी देश की भाषा के स्वरुप को समझने के लिए उसकी व्याकरणिक संरचना को सर्वप्रथम समझना अत्यंत आवश्यक है। सूरीनाम देश की भाषा सरनामी हिंदी की भाषिक संरचना को पूर्ण रूप से समझने के लिए उसकी व्याकरणिक संरचना के अंतर्गत क्रियारूपों में अवधी और भोजपुरी का मिश्रित रूप दिखाई देता है। सरनामी हिंदी भोजपुरी की तुलना अवधी के अधिक निकट है। सरनामी हिंदी के कियारूप उदाहरण स्वरुप निम्नलिखित है–

भूतकाल :	ऊ करिस (अवधी) हम करली (भोजपुरी)
वर्तमान :	ऊ करे है (मिश्र) हम करील (भोजपुरी)
भविष्य :	हम करब (अवधी) ऊ करी (भोजपुरी)3

जिसप्रकार हिंदी की भाषिक संरचना में भाषाई ध्वनियों का महत्त्व दृष्टिगत होता है। ठीक उसी प्रकार सरनामी हिंदी की भाषिक संरचना में भाषाई ध्वनि पर विचार विमर्श करना अत्यंत अनिवार्य है। हिंदी भाषा ने अरबी–फारसी के शब्दों के लिए अरबी–फारसी की ध्वनियों क़, ख़, ग़, ज़, फ़ को उसी रूप में स्वीकार कर लिया है। सरनामी हिंदी में अरबी–फारसी की ध्वनियों क़, ख़, ग़, ज़, फ़ का स्वरुप क,ख, ग, ज, फ के रूप में परिवर्तित हो जाता है,जो उदाहरण स्वरुप दृष्टव्य हैं–

सरनामी हिंदी	हिंदी
जिंदा	ज़िंदा
जमाना	ज़माना
मजा	मज़ा
जमीन	ज़मीन
फकीर	फ़कीर
जरुर	ज़रूर 4

सरनामी हिंदी में मानक हिंदी के 'श' ,'व', 'ल' एवं मूर्धन्य 'ष' का स्वरुप क्रमशः 'स', 'ब', 'र' एवं 'ख' के रूप में परिवर्तित हो जाता है। उदाहरण स्वरुप निम्नवत है –

सरनामी हिंदी	हिंदी
बिसाल	विशाल

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.07

बरखा	वर्षा
सांति	शांति
देस	देश
बार	बाल
भाखा	भाषा 5

सरनामी हिंदी का स्वरुप अवधी, भोजपुरी ,मगही, डच, स्रनान तोंगो आदि कई भाषाओँ के शब्दों के मिश्रण से बना है। सरनामी हिंदी के इस बढ़ते मिश्रण को देखकर हिंदी सेवी कवि श्री रामनाथ सिवदीन एवं पंडित हरिदेव सहतू अन्यन्त चिंतित है। सरनामी हिंदी में संख्याओं का स्वरुप इसप्रकार है–

सरनामी हिंदी	हिंदी
सुन्ना	शून्य
ग्यारा	ग्यारह
सतरा	सत्रह
एक कम तीस	उनतीस
एक कम साठ	उनसठ [6]

सरनामी हिंदी का भाषिक स्वरुप अपने स्पष्टगत रूप में निम्नलिखित द्विभाषी (मानक हिंदी एवं सरनामी हिंदी) लघु कथाओं के माध्यम से दृष्टिगत है–

मानक हिंदी – अकबर भारत का बादशाह था। उसके कई मंत्री थे। बीरबल भी एक मंत्री थे। वे बादशाह के बड़े प्रिय थे इसलिए दूसरे मंत्रीगण उनसे जलते थे। एक दिन की बात है। दरबार लगा हुआ था। बादशाह ने कागज़ पर एक रेखा खींची। उन्होंने मंत्रियों से कहा 'इस रेखा को छोटी करें, लेकिन बिना काटे–छाटे ।'सभी मंत्री सोचने लगे।[7]

सरनामी हिंदी– अकबर इंडिया का एग्गो राजा रहले। ओके पास ढेर मिनिस्टर रहले। बीरबल एग्गो मिनिस्टर रहले।उ राजा के बहुत नगीचे रहा और इ खरती दुसर जलन करत रहो। एक दिन राजा सभा में एग्गो पपीर पे लाइन खींचल और सब मिनिस्टर से बोलील 'लाइन छोटा करें के सोंदर (जोंदर बिना) काट, कुछ करे।[8]

सरनामी हिंदी का शब्द भंडार अत्यंत समृध्द है। सरनामी हिंदी की शब्दावली मानक हिंदी की शब्दावली से पर्याप्त भिन्न है। सरनामी हिंदी की शब्दावली में यह अंतर प्रादेशिक भाषाओँ के मिश्रण के कारण है। सरनामी हिंदी की शब्दावली के कुछ उदाहरण निम्नवत है–

अँजोर	–	उजियारा
अगोरली	–	देखता रहा
अलगीयाए	–	अलग– अलग होकर
कोरान्ती	–	अख़बार
पुरनिया लोग	–	बूढ़े लोग
हम अकेले मोरसू	–	मैं अकेली मर रही हूँ /काम कर रही हूँ।[9]

साहित्य समाज का दर्पण हैं। साहित्य में समाज का सम्पूर्ण परिदृश्य परिलक्षित होता है। सूरीनाम में हिंदी का प्रारम्भ हुए लगभग 140 वर्ष हो चुके है लेकिन साहित्यिक रचनाओं का प्रारम्भ कब से हुआ इसका अनुमान लगा पाना अत्यंत कठिन है। सूरीनाम का जो साहित्य है उसमें प्रवास की पीड़ा, भाषा एवं संस्कृति के प्रति अटूट आस्था, स्वभाषा (सूरीनाम हिंदी) के प्रति असीम प्रेम, जीवन के उतार–चढ़ाव का वर्णन, मानवतावादी दृष्टिकोण, आत्मविश्वास,आशा, नये देश को अपनाने का जोश आदि भाव समाहित है। सूरीनाम के लेखकों ने सरनामी हिंदी भाषा में साहित्य सृजन करके अपनी कलात्मक, साहित्यिक और भाषागत प्रौढ़ता का परिचय देते हुए वैश्विक पटल पर साहित्यिक ख्याति अर्जित की । सूरीनाम के ख्याति प्राप्त लेखकों की श्रेणी में जीत नराईन, हरिदेव सहतू, अमर सिंह राणा, आशा राजकुमार, चित्रा गयादीन, श्रीनिवासी, रामनाथ सिवदीन आदि हैं। सूरीनाम का साहित्य पद्यात्मक एवं गद्यात्मक दोनों रूपों में लिखा गया। सरनामी हिंदी का पहला साहित्यिक रूप मार्टिन हरिदत्त लछमन की कविता 'बुलाहट' में दिखाई देता है। सूरीनाम के साहित्येतिहास को चार चरणों विभाजित किया गया,जो इसप्रकार है –

प्रथम चरण	–	1873–1918
दूसरा चरण	–	1918–1960

तीसरा चरण – 1960–1975

चौथा चरण – 1975 से आज तक

प्रथम चरण (1873–1918) – सूरीनाम के प्रथम चरण के साहित्य का कलेवर मौखिक रहा है। क्योंकि 1873 में भारतीय श्रमिक अपनी आजीविका की तलाश में सूरीनाम पहुंचे।ये श्रमिक अपने साथ भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर जैसे– रामचरित मानस, महाभारत, नीति उपदेशों, गीता, महापुरुषों के विचारों आदि को मौखिक कंठस्थ रूप में लेकर गये। ये श्रमिक दिनभर कठिन परिश्रम करके मजदूरी करते थे उसके पश्चात् रात्रि के समय अपनी थकान दूर करने के लिए रामचरित मानस, महाभारत, नीति उपदेशों, गीता, महापुरुषों के विचारों आदि के बारे में आपस में चर्चा करते थे। ये गिरमीटियां भाई धीरे–धीरे अपने अनुभवों को पद्यात्मक रूपों में जैसे–चौपाई, दोहा, भजन, गीत आदि में अभिव्यक्त करने लगे। जिसका उदाहरण गीत रूप में दृष्टव्य है –

"सुमिरन करके नराइन के, ले बजरंगबलि के नाम।
कथा बखानू सूरीनाम को, जिनपर हमको है अभिमान।"[10]

दूसरा चरण (1918–1960) – यह कालखंड गिरमिट की समाप्ति का था। इस समय सूरीनाम में हिन्दुस्तानी स्वतंत्र रूप से जीवनयापन कर रहें थे। इस काल की रचनाएँ प्रचारकों के द्वारा हस्तलिखित पर्चों के रूप में वितरित की जाती थी। उसके बाद धीरे–धीरे रचनाएँ पुस्तकों में छपने लगी। भारत सरकार के द्वारा सूरीनाम में हिंदी का प्रचार प्रसार करने के लिए बाबू महातम सिंह जी को भेजा गया। उन्होंने हिन्दुस्तानियों को हिंदी सिखाने का बीड़ा उठाया। बाबू महातम सिंह जी ने हिंदी शिक्षण केंद्र बनाये, पद यात्रा निकाली, शिविर आयोजित किये। इन सभी कायक्रमों में वहाँ के लोग बड़े जज्बे एवं उत्साह के साथ प्रतिभाग करते थे। इसकाल की रचनाओं की भाषा में परिष्कार देखने को मिलता है। चन्द्र मोहन रंजीत सिंह की रचना 'अदृश्य चोरों से सावधान' में परिष्कृत भाषा का एक उदाहरण दृष्टव्य है– "तेरे घर में घुस गए चोर प्यारे आखियाँ खोलो ना।

कैसा सुंदर महल बना है शोभा अपरम्पार।"[11]

तीसरा चरण (1960–1975) – इस समयावधि में एक व्यापक ऐतिहासिक परिवर्तन हुआ। सूरीनाम देश ने डच के शासन से स्वतंत्रता प्राप्त की। इस समय अनेक हिन्दुस्तानी सूरीनाम छोड़कर हालैंड चले गये। उससमय की रचनाओं में प्रवास के बाद अपने पूर्वजों की पीड़ा एवं अपनी भाषा सरनामी हिंदी के प्रति जागृत असीम प्रेम परिलक्षित होता हुआ दिखाई देता है। सूरीनाम में प्रवासी भारतीय सरनामी हिंदी एवं हिंदी दोनीं ही भाषाओं में लिखते रहें हैं। एक तरफ कवियों की सरनामी हिंदी की रचनाओं में अन्तश्चेतना की आवाज है वहीं दूसरी ओर शुद्ध हिंदी में भावों को अभिव्यक्त करना उनके लिए गर्व की बात है। सरनामी का पहला साहित्यिक पाठ 1968 में पारामारिबों में छापा। कवि 'सरवन बख्तावर' ने वर्तमान कुरीतियों पर भी लेखनी चलाई –

"भविष्य अपन मंगली जाने, गैली बाबा के पास।
कुंडली देखैली अपन,ओही राहा एक ही आस।"[12]

चौथा चरण (1975 से आज तक) – चतुर्थ चरण में सूरीनाम में प्रवासी भारतीयों द्वारा सरनामी हिंदी में लेख, कविता, कहानी, प्रकाशित होने लगी। इस प्रकार सरनामी हिंदी को उच्चतर स्थान दिलाने का प्रयास किया गया। सन 1990 के दशक में सरनामी हिंदी को सरनामी भाषा मान लिया गया। सरनामी हिंदी का प्रथम गद्य रबीन एस.बलदेव सिंह का उपन्यास 'इस्तीफा' था। यह उपन्यास 1984 में प्रकाशित हुआ। इसके पश्चात दूसरा उपन्यास 'सुनवाई कहाँ?' 1887 में प्रकाशित हुआ। प्रख्यात भाषा वैज्ञानिक डॉ० मोती लाला माड़े द्वारा डच भाषा में लिखित 'सरनामी व्याकरण' एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ सरनामी हिंदी का व्याकरणिक ग्रन्थ है। सूरीनाम में हिंदी का पहला आलोचनात्मक ग्रन्थ उमा शंकर सतीश द्वारा लिखित 'सूरीनाम में हिंदी ' है।जो सन् 1885 में प्रकाशित हुआ। भावना सक्सैना द्वारा लिखित अनुसंधानपरक पुस्तक 'सूरीनाम में हिन्दुस्तानी' है। जो सन् 2012 में प्रकाशित हुई ।'संचयन' नामक ग्रन्थ में सूरीनाम के नवोदित 27कवियों की 62 काव्य रचनाएं संकलित है। यह पहला प्रमाणित काव्य ग्रन्थ 'संचयन' है।इस ग्रन्थ का सम्पादन सूरीनाम के राष्ट्रीय कवि पंडित हरिदेव सहतू एवं सूरीनाम स्थित भारतीय दूतावास की हिंदी व संस्कृत अधिकारी श्रीमती भावना सक्सैना ने संयुक्त रूप से किया है। उर्षबुद्ध आर्य द्वारा सम्पादित कृति 'सूरीनाम के हिन्दुओं के आनुष्ठानिक गीत और लोकगीत' है। इस सम्पादित कृति में सूरीनाम में गायें जाने वाले लोकगीतों का संकलन है। डॉ० विमलेश कांति वर्मा और श्रीमती भावना सक्सैना के द्वारा सम्पादित कृति 'सूरीनाम का सृजनात्मक हिंदी साहित्य 'है। यह सम्पादित कृति गद्य एवं पद्य दोनों विधाओं में लिखी गयी है। सूरीनाम के कवियों ने सरनामी हिंदी एवं हिंदी में रचनाओं को लिखा है। इन कवियों में अमर सिंह रमण काव्य रचनाएँ फूलों के पंछी, फूलों का बहार ,नाटक–कृष्ण सुदामा और लक्ष्मी पूजा, गद्य–पद्य– बसंत–होली। रामनाथ सिवदीन भारतीय जीवन मूल्यों में निष्ठा रखने वाले कवि हैं। इन्होने 'सरनामी' शीर्षक कविता लिखी।

अंत में निष्कर्ष निकलता है कि हिंदी भाषा भारतवासियों के दिलों की धड़कन है। हिंदी भाषा समाज में पारस्परिक विचार विनिमय का सशक्त माध्यम है। हिंदी भाषा के निर्माण में भारतीय भाषाओं का पूर्ण योगदान है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी के विकास में प्रवासी भारतीयों एवं गिरमिटियों की विशेष भूमिका रही है। हिंदी की विदेशी नव भाषा शैली सरनामी हिंदी की रचनाएँ हिंदी

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.07

के विश्वव्यापी स्वरुप का परिचय देने वाली रचनाएँ है। विदेश में जीवन व्यतीत कर रहें प्रवासियों को आपस में सेतु की भांति जोड़ने का कार्य संत शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित 'रामचरित मानस' ने किया। सूरीनाम के सभी गिरमीटियां भाई रात्रि के समय 'रामचरित मानस' की चौपाईयों का गान करते थे। सूरीनाम के प्रवासी भारतीयों ने 'रामचरित मानस' को सम्मान देने के लिए अपने देश का नाम 'सिरीनाम देश' रखा। सूरीनाम के मुंशी रहमान खां, अमर सिंह राणा, सुरजन परोही, जीत नराईन, पंडित हरिदेव सहतू आदि साहित्यकार है। जिन्होंने अपनी भावाभिव्यक्ति के लिए हिंदी को माध्यम भाषा के रूप में चुना है। सूरीनाम के साहित्यकारों में प्रवास का दर्द, भाषा एवं संस्कृति के प्रति प्रेम दृष्टिगोचर होता है। प्रवासी भारतीयों में आज भी अपनी भाषा एवं संस्कृति के प्रति अगाध लगाव भी है। सूरीनाम में निवास कर रहें प्रवासी भारतीयों ने अपनी भाषा हिंदी को स्थापित करने के लिए अत्यंत संघर्ष किया क्योंकि वे हिंदी को अपनी भारतीय अस्मिता का प्रतीक मानते हैं। सूरीनाम के प्रतिनिधि कवि तो सरनामी हिंदी में ही लेखन कार्य करने में रूचि रखते हैं।

सन्दर्भ सूची

1. वर्मा, विमलेश कांति., सक्सैना, भावना. (2021). सरनामी हिंदी हिंदी का विश्व फलक. (पहला संस्करण). राष्ट्रीय पुस्तक न्यासः नई दिल्ली, भारत. पृष्ठ **29.**
2. वर्मा, विमलेश कांति. (2016). प्रवासी भारतीय हिंदी साहित्य. भारतीय ज्ञानपीठः नई दिल्ली.
3. वर्मा, विमलेश कांति., सक्सैना, भावना. (2021). सरनामी हिंदी हिंदी का विश्व फलक. (पहला संस्करण). राष्ट्रीय पुस्तक न्यासः नई दिल्ली, भारत. पृष्ठ **36.**
4. वर्मा, विमलेश कांति., सक्सैना, भावना. (2021). सरनामी हिंदी हिंदी का विश्व फलक. (पहला संस्करण). राष्ट्रीय पुस्तक न्यासः नई दिल्ली, भारत. पृष्ठ **37.**
5. वही.
6. वर्मा, विमलेश कांति., सक्सैना, भावना. (2021). सरनामी हिंदी हिंदी का विश्व फलक. (पहला संस्करण). राष्ट्रीय पुस्तक न्यासः नई दिल्ली, भारत. पृष्ठ **38—39.**
7. वर्मा, विमलेश कांति., सक्सैना, भावना. (2021). सरनामी हिंदी हिंदी का विश्व फलक. (पहला संस्करण). राष्ट्रीय पुस्तक न्यासः नई दिल्ली, भारत. पृष्ठ **34.**
8. वर्मा, विमलेश कांति., सक्सैना, भावना. (2021). सरनामी हिंदी हिंदी का विश्व फलक. (पहला संस्करण). राष्ट्रीय पुस्तक न्यासः नई दिल्ली, भारत. पृष्ठ **35.**
9. वर्मा, विमलेश कांति., सक्सैना, भावना. (2021). सरनामी हिंदी हिंदी का विश्व फलक. (पहला संस्करण). राष्ट्रीय पुस्तक न्यासः नई दिल्ली, भारत. पृष्ठ **35—36—38—41.**
10. वर्मा, विमलेश कांति., सक्सैना, भावना. (2015). सूरीनाम का सृजनात्मक साहित्य. (पहला संस्करण). राधाकृष्णः नई दिल्ली. पृष्ठ **24.**
11. वर्मा, विमलेश कांति., सक्सैना, भावना. (2015). सूरीनाम का सृजनात्मक साहित्य. (पहला संस्करण). राधाकृष्णः नई दिल्ली पृष्ठ **25.**
12. वर्मा, विमलेश कांति., सक्सैना, भावना. (2015). सूरीनाम का सृजनात्मक साहित्य. (पहला संस्करण). राधाकृष्णः नई दिल्ली. पृष्ठ **27.**

8

अनसुनी सिसकियों की दास्तान : व्यथ-व्यथा

ममता चावड़ा
शोधार्थी, हिंदी विभाग
शहीद मंगल पाण्डे राजकीय महिला
स्नातकोत्तर महाविद्यालय, माधवपुरम, मेरठ
ईमेलः mmtchwd@gmail.com

डॉ0 स्वर्णलता कदम
एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
शहीद मंगल पाण्डे राजकीय महिला
स्नातकोत्तर महाविद्यालय, माधवपुरम, मेरठ

सारांश

''व्यथ में जाने कितनी बार बाढ़ आयी होगी और जाने कितने गाँव, घर, खेत–खलिहान डूब गये होगें। कश्मीर में जाने कितनी बार उथल–पुथल हुई होगी और जाने कितने हिंदू और सुन्नियों का खून बहा होगा। लेकिन पठान शासन के बाद शायद ही समय में इतने भट्टों की केवल हिंदू होने के अपराध के लिए हत्या हुई होगी। टीकालाल टपलू, नीलकण्ठ गंजू, प्रेमनाथ भट्ट, डॉ0 बांचू और किस–किस की हत्या केवल हाड–मांस की ही नही, आपसी सौहार्द और परस्पर विश्वास की भी हुई है।''[1]

मुख्य बिन्दु

दास्तान, रक्तपात, हिंसक, व्यथ, पलायन, भविष्य, सांप्रदायिकता, सौहार्द्र, गर्ज, विस्थापन, कश्मीर।

प्रो0 हरिकृष्ण कौल का उपन्यास 'व्यथ–व्यथा' कश्मीर के इसी बदले हुये भूगोल और उसके पीछे छूट चुकी, दबी हुई हकीकतों को परत–दर–परत उद्‌घाटित करता है। उपन्यास का कथानक वर्ष 1990 ई0 के आस–पास के कश्मीर की बदलती स्थितियों के इर्द–गिर्द बुना गया है, जिसमें सदियों के साथ–साथ रह रहे हिन्दू और मुस्लिम समाज के बीच पनपी खाई, उसके उत्तरदायी कारकों तथा उसके जनित विभत्स परिस्थितियों की गहरी शनाख्त की गयी है। उपन्यास के केंद्र में कश्मीरी पंड़ित मोहनकृष्ण, हीरालाल तथा जयंतीलाल आदि परिवारों को रखा है। उपन्यास की संपूर्ण कथा इन्ही परिवारों की जीवन स्थितियों और उनसे जुडे समाज और लोगो को लेकर आगे बढती है। इसमे कश्मीरी पंड़ितों की बेदखली का आ जाना स्वाभाविक ही है। 'व्यथ' कश्मीर की वितस्ता नदी का कश्मीरी नाम है। यहाँ उपन्यासकार प्रो0 हरिकृष्ण कौल ने व्यथ–व्यथा के माध्यम से केवल कश्मीर की जीवन वाहिनी 'वितस्ता' नदी की व्यथा कथा नही कही है, अपितु उसके उद्‌भव काल से ही इसके आदि उपासक रहे कश्मीरी पंड़ितों की दारूण व्यथा को भी साहित्यिक मंच प्रदान किया है।

भारत ही नहीं विश्व में भी सौंदर्य के अन्यतम प्रदेश 'कश्मीर' की जितनी पहचान अपने सौंदर्य निरूपण के लिए की जाती है उससे कहीं ज्यादा आज यह प्रदेश अपनी अराजकता के लिए जाना जाता है। यदि इतिहास के पन्नों पर दृष्टीपात किया जाए तो हम पाते हैं कि 'कश्मीर' अपने उद्‌भव काल से ही अस्थिरता का दौर झेलता आ रहा है। अशोक कुमार पाण्ड्ेय का इस सन्दर्भ में मत उल्लेखनीय है '''कश्मीर' जमीन का एक ऐसा खूबसूरत टुकडा है जहाँ सब एक साथ जाना चाहते हैं। मगर इसकी कहानी कोई नही सुनना चाहता।.......कश्मीर का लम्बा इतिहास तो छोडिये समकालीन इतिहास भी अक्सर किसी गम्भीर चर्चा का विषय बनने की जगह, 'कश्मीर हमारा अभिन्न हिस्सा है' के नारे के नीचे दबके रह जाता है। यह एक कटु सत्य है कि कश्मीर और उत्तर–पूर्व हमारे देश के दो ऐसे हिस्से हैं जिनके नक़्शें में होने को लेकर हम जितने संवेदनशील हैं वहाँ के हालात, मुश्किलात, इतिहास आकांक्षाओं और उम्मीदों के बारे में उतने ही असंपृक्त। दुनिया के तमाम तनावग्रस्त इलाकों की तरह कश्मीर का भी एक जटिल इतिहास है, संघर्षग्रस्त, वर्तमान और अनिश्चित भविष्य।''[2] प्रो० हरिकृष्ण कौल ने अपने उपन्यास 'व्यथ–व्यथा' में ऐसे ही कश्मीर अशांत की आंतरिक गिरहों को खोलने का प्रयास किया है।

कश्मीर की इस अराजक एवं अस्थिर स्थिति का दंश वहाँ की आम जनता को सबसे ज्यादा झेलना पडा है। यद्यपि कश्मीर

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.08

की इस त्रासदी का शिकार हिंदू–मुसलमान दोनों हुए हैं। किन्तु कश्मीर के मूल निवासियों ब्राह्मणों को इसमें सबसे अधिक यातना का शिकार होना पडा है। केवल वर्तमान काल ही नही अपितु जब से कश्मीर पर विदेशी आक्रमणों का दौर प्रारंभ हुआ तभी से ब्राह्मण यहाँ का सबसे बड़ा आसान निशाना रहें हैं। मध्यकाल से लेकर आज तक इन्हे कभी धर्म परिवर्तन तो कभी गैर धर्म के कारण अमानवीयता का शिकार होना पडा है। इसी अमानवीयता का सबसे विध्वंसक रूप 1989–1990 ई0 में उस समय हुआ जब यकायक कश्मीर से चार लाख से अधिक पंड़ितों को पलायन करना पडा। पंड़ितों का नरसंहार, पंड़ित महिलाओं के साथ हुआ अनाचार और हत्याओं की लंबी फेहरिस्त है, जिसे सुनकर ही इंसान की रूह कॉंप उठती है। उस समय की भयावहता को कश्मीर विश्लेषक अशोक कुमार पाण्डे इस रूप में दर्शाते हैं ''श्रीनगर ने अपने सदियों के रंग–बिरंगे इतिहास में बहुत–सी घटनाएँ देखी हैं, 21 जनवरी, 1990 की रात दुनिया की सबसे खूबसूरत घाटी कश्मीर में रह रहे लोग लम्बे वक्त तक भुला नही सकेंगें....। उस दिन चीजें अलग थी। हर चेहरे पर डर आशंका और उम्मीदें थीं। मैं डर और व्यग्रता से भरी हुयी थी। किसी भी वक्त, किसी भी क्षण कुछ भी हो सकता था। अचानक हर तरफ से तेज आवाजों के विस्फोट से भयमिश्रित गुस्से से भरी इन्सानी आवाजों के विस्फोट से कश्मीर दहल गया।''[3] कश्मीर के पलायन की इस पृष्ठभूमि को 'व्यथ–व्यथा' उपन्यास का वर्ण्य–विषय बनाया गया है। उपन्यास की कथावस्तु अशोक के परिवार के इर्द–गिर्द बुनी गई है, जो एक कश्मीरी पंड़ित है। वह जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली में एम0फिल्0 का छात्र है तथा श्रीनगर में उसके माता–पिता शान्ता–मोहनकृष्ण तथा बहन नीरजा (पिंकी) रहते हैं। यह समय कश्मीर में अराजकता का आरंभिक दौर 1989–1990 के आस–पास का था, जिसमें धीरे–धीरे कश्मीर समाज में सांप्रदायिकता सौहार्द्र का ह्रास होने लगा था। सदियों से एक दूसरे के साथ रह रहे समाज में हिंदू–मुस्लिम के बीच खाई पनपने लगी थी जो धीरे–धीरे हिंसात्मक गतिविधियों में तब्दील होती चली गई। लगभग इसी समय अशोक अपने विश्वविद्यालय की छुट्टियों में अपने घर श्रीनगर आया हुआ था। उससे मिलने के लिए उसकी बहन नीरजा की सहेली बसन्ती उनके घर आती है। बसन्ती और अशोक एक–दूसरे से प्रेम करते हैं। अशोक अपनी जन्मभूमि कश्मीर से बहुत प्रेम और लगाव रखता है, इसलिए वह अपनी पढ़ाई पूर्ण करके वापस कश्मीर में आकर ही नौकरी करना चाहता है। वह यहाँ के वास्तविक हालातों से अनभिज्ञ है। इसके विपरीत उसकी बहन नीरजा और उसकी सहेली बसन्ती जो हर रोज यहाँ के बदलते हालातों की भुक्तभोगी बनती है, उसे वास्तविकता को बोध कराती हैं।

''जैसा भी है हमारा घर है और घर सारी दुनिया से प्यारा होता है। अशोक ने शान्त स्वभाव में कहा– नीरजा ने दोनो के सामने चाय की प्याली रखकर पूछा, बहस का इश्यू क्या है?

तुम्हारे भैया कहतें हैं कि दिल्ली की पढाई पूरी करके श्रीमानजी वापस कश्मीर आयेगें और रोजी रोटी का कोई इन्तजाम करके पूरी जिन्दगी यहीं गुजारेंगें।

यहाँ रोजी रोटी का इन्तजाम हो सकता है? नीरजा ने प्रश्न किया।''[4]

उन सभी में एक तीखी नौंक–झोंक चल रही थी तभी वहाँ से निकले जुलूस ने कश्मीर के इन्हीं बदलते हालातों की पुष्टि कर दी। ''एक बहुत बडा जुलूस टंकीपुरा की ओर आ रहा है। दुकानदारों ने पहले ही दुकाने बन्द करनी शुरू कर दी थी।.... अस्पष्ट आवाजें शोर में बदलने लगी। जुलूस धीर–धीरे नजदीक आने लगा। गला फाड के नारों के जोर और शोर से सारा मौहल्ला कांपने लगा। जैसे भूकम्प आया हो, अशोक, नीरजा और बसन्ती दौडकर सीढियाँ उतरे हतप्रभ से आंगन में खडे हो गये। शान्ता की छाती धक–धक करने लगी। बसन्ती अवाक् होकर भयातुर दृष्टि से कभी नीरजा, कभी शांता और कभी अशोक की ओर देखने लगी.... जुलूस में लगाये जाने वाले नारों की आवाज गौर से सुनने लगे। नारे कुल चार थे। दो नारे 'नारा–ए–तकबीरः अल्लाह अकबर'' के साथ दो नए थे– ''खून का बदला खून से लेगें और 'ला षर्किया ला गर्बियाः इस्लामिया इस्लामिया''[5]

भारत मे धर्म जितना लोगों की शिद्दत और साधना का विषय है उतना ही राजनीतिक अवसरवादियों, अराजक तत्वों तथा अन्य फिरकापरस्त के उद्देश्य प्राप्ति का साधन रहा है। सन् 1990 ई0 के आस–पास भी ऐसी ही अवसरवादी शक्तियों ने धर्म का यह अचूक प्रयोग कश्मीर घाटी में किया था, जिसने सदियों से साथ–साथ रह रही साझा विरासत को जीने वाली कश्मीरी कोम में धार्मिक विभेद की भावना को जन्म दे दिया। कश्मीर घाटी में पनपे इसी अविश्वास को उपन्यासकार हरिकृष्ण कौर ने इस संवाद में दर्शाया है–

''लेकिन कसूर आपका नही, आपके मौहल्ले का है जहां ज्यादातर गैर मुस्लिम पंड़ित लोग ही रहते हैं। आप पर उनका असर पडना कुदरती है।

''वे बेचारे बुरे नही'' रमजान जूं ने जैसे गैर मुस्लिम पंड़ितों की सफाई देकर अपनी भी सफाई दी।

मैंने कब कहाँ वे बुरे हैं मैं इन्हे काफिर भी नही मानता क्योंकि वे खुदा को मानते हैं। लेकिन एक खुदा के अलावा वो सैकडो देवी देवताओं गायों, बन्दरो, पेडों और पत्थरों की पूजा भी करते हैं। इसलिए मैं इन्हे मुरहीक कहता हूँ। जो इबादत में एक अल्लाह के साथ दूसरों को भी शरीक करते हैं। तो कुफ्र से कम गुनाह करते हैं। कयामत के रोज अल्लाह इन्हे नही बख्शेगा।''[6]

धर्म के जानकार जब धर्म की संकुचित व्याख्या करने लगे तो धर्म का वास्तविक मर्म पीछे छूटने लगता है। उपन्यास में कश्मीर घाटी के एक साधारण व्यक्ति रमजान जूं और धार्मिक जानकार अब्दुल रशीद का यह वार्तालाप इसी ओर ध्यान इंगित करता है।

''लेकिन वो रब को याद करते हुए अल्लाह, ईश्वर तेरे नाम या राम कहो या रहीम कहो दोनो ही गर्ज अल्लाह से है। 'यही तो शर्क है। अल्लाह उस रब–उल–आलमीन का इस्मजात है जिसे ईश्वर नाम से पुकारा नही जा सकता। हाँ कोई चाहे तो अपने राम को रहीम कह सकता है क्योंकि रहीम उस रब का इस्म–सिफत है।

रमजान जूं को समझ में कुछ नही आया। उसने मसले को तूल न देने की नियत से कहा– खैर जो भी है हम और वो सदियों से साथ रहते आये हैं। वो भी हमारे भाई हैं।

नहीं, वो हमारे भाई नही हैं। रशीद का चेहरा एक बार फिर तन गया, मुसलमान का भाई केवल मुसलमान ही हो सकता है।''[7]

कश्मीर घाटी में यही सोच यकायक तेजी से पनपी। अब्दुल रशीद जैसे पढे लिखे लोगो ने जिनका प्रभाव अधिक ज्यादा था, इसे ओर अधिक बढावा दिया और वर्षो से साथ–साथ रहे रमजान जू जैसे लोगों की एक न चली। परिणामस्वरूण वे सही होते हुये भी गलत साबित कर दिये गए। ''रमजान जू अन्दर ही अन्दर कुढ़ रहा था कि इस रगी दाढ़ी वालों को यह कहने की हिम्मत कैसे हुयी कि पीरों, ऋषियों के आस्तानों पर हाजरी देना इस्लाम के खिलाफ है। अलम–दारे कश्मीर शेख–उल–आलम हजरत नूरउदीन वलीं नूरारी जिन्हे हम प्यार से नुद्ऋषि कहते हैं, पैगम्बर–ए–इस्लाम को भी पहला ऋषि मानते हैं, पीरों और ऋषियों के सरताज होकर भी उन्होने अपने को ऋषि सिलसिले में सबसे निचले मुकाम पर रखा था– 'बु' कुस ऋषि द में क्या नाव। बात–बात पर कुरान की दुहाई देने वाले अब्दुल सलाम के बडे लडके ने क्या सचमुच कुरान पढा है? और अगर पढा भी है तो क्या उसे ठीक से समझा भी है।''[8] अब्दुल रशीद जैसे लोगों के बहकावे मे रमजान जू बेशक नही आया मगर उनके जैसे फिरकापरस्त लोगो ने इस पीढी की पूरी की पूरी नस्ल के दिलों–दिमाग में धार्मिक एकाधिकार का ऐसा हिंसक बीज रोपित कर दिया जिसने आगे चलकर केवल गैर धर्मो के लोगो का ही भीषण रक्तपात नही किया बल्कि स्वयं भी इसी में झुलसकर रह गए। रमजान जू जैसे धर्मपरायण सच्चे मुसलमान का घर भी इसी घृणा की आग में जलने से न बच सका और उसका छोटा बेटा फारूक अराजक गतिविधियों में संलिप्त हो गया है। इस तरह कश्मीर घाटी की इस पूरी की पूरी पीढी को सुनियोजित तरीकें से आतंक की राह पर धकेल दिया गया जिसके परिणामस्वरूप कश्मीरी पंड़ित ही नही अपितु अन्य लोग भी इस अराजकता की बलि चढ गए। ''पिंकी के पूछे बिना उसने बताया कि बेचारे टीकाराम बहुत नेक आदमी था। पंड़ित भट्टों और मुसलमानों में फर्क नही करता था।''[9] इस दौर के रक्त रंजित पदचिन्हों उसके निहितार्थों को उपन्यासकार ने यहाँ दर्शाया गया है ''गणपतयार में एक बन्द दुकान के जीने में खडे होकर टीकालाल टपलू की अर्थी की प्रतिक्षा करने लगा। अर्थी शीतलनाथ मन्दिर से करीब दो बजे उठी और तीन बजे के करीब गणपतयार पहुंची। अर्थी के पीछे चलने वाले जनसमूह में अशोक को कुछ मुसलमान तो दिखे लेकिन राजबाग, वजीरबाग जैसे बडे लोगो की कालोनियों में रहने वाला कोई हिन्दू नजर नही आया।''[10]

''कश्मीरी पंड़ितों की इससे ज्यादा निस्सहाय स्थिति और क्या होगी कि वे अपने–अपनों के अन्तिम संस्कार तक में भी सम्मिलित नही हो सके? उपन्यास में यही दृश्य नीलकण्ठ गंजू की हत्या का भी दिखायी देता है। दुकानदारों की कतारों के बीच चौडी सडक सुनसान थी जिसके बीचों–बीच कोट, पतलून, नेकटाई पहने किसी अधेड की लाश दोनो हाथ फैलाये पडी थी। मोहनकृष्ण दुकानों के साथ–साथ फुटपाथ पर चलकर ओल्ड हॉस्पिटल रोड तक पहुंच गया। वहां उसे मालूम हुआ कि लाश रिटायर्ड सेसन जज नीलकण्ड गंजु की है। जिसे कुछ नौजवानों ने दिन के उजाले में गोलियां मारी थी।''[11]

कश्मीर में हुई यह टारगेट किलिंग एक खास उद्देश्य से प्रायोजित थी जिसके पीछे कश्मीरी पंड़ितों में भय व्याप्त करके उन्हे घाटी से पलायन के लिए मजबूर करना था। जब यह कार्य डराने धमकाने से नही हुआ तो इसने एक भीषण नरसंहार का रूप ले लिया जिसकी चपेट में एकाएक घाटी में बसे पंड़ित आ गये। इस संदर्भ में अशोक कुमार पाण्डे लिखते हैं ''कश्मीरी पंड़ित अधिकारियों और नेताओं की हत्याओं ने पंड़ितों में भय का माहौल पैदा किया। हालांकि लासा कौल की हत्या को हिन्दु ही नही बल्कि 'भारत की सूचना क्रान्ति के प्रतिनिधि' के रूप में की गयी हत्या बताया गया लेकिन इस तथ्य के बावजूद कि उसी समय आतंकवादियों से असहमति रखने वाले मुसलमानों की हत्या की गयी थी, इसने और ऐसी अनेक घटनाओ ने कश्मीरी पंड़ितों के मन में डर भरा। भय, अविश्वास और हिंसा का यह माहौल ही था कि नब्बे के दशक में बडी संख्या में कश्मीरी पंड़ित घाटी छोडकर जाने को विवश हुए।''[12]

यही भय, अविश्वास और अराजकता का दृश्य उपन्यासकार ने यहाँ इस रूप में दर्शाया है ''उसने पश्चिमी दिशा की खिडकी खोली जहां से सूरटेग मुहल्ले का तिराहा साफ नजर आता था। तिराहे के बीचों बीच जलते अलाव के गिर्द जैसे रैनवारी का पूरा इलाका जमा होकर नारे लगा रहा था।.... नारों की लय पहचानकर उसे इनका आशय समझने में कोई कठिनाई नहीं हुई.... रूपा दोनो लडकियों को गले से लगाकर सुबकने लगी। कर्त्तव्यविमूढ, जानकीनाथ पत्नी और पुत्रियों की ओर गुमसुम देखता रहा।''[13] धार्मिक उन्माद की भीड़ में तब्दील हुए इस जुलूस ने सारी श्रीनगर घाटी को अपनी चपेट में ले लिया। रमजान जू और मीर सहाब जैसे पंड़ितों के हिमायती मुसलमान को भी धर्म के एवज अपने सिद्धान्तों की आहुति देनी पडी और वे भीड का हिस्सा बन गए ''रमजान ने घर के बाहरी दरवाजे पर सांकल चढायी और अपने बडे भाई के पीछे चलकर ईमान, इस्लाम और जिहाद की फतह के उमड़ पड़े सैलाब का एक कतरा बन गया। नारों का जवाब देने के लिए औरों की तरह उसके होंठ भी हिलते थे। लेकिन औरों से भिन्न उसके दायें बायें घूमती बेकरार आँखें भीड़ के हर भाग की टोह ले रही थी। उसे वशीर दिखायी दिया, जून दिखायी दी– यहाँ तक की

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.08

सुन्दरी और उसका नया खसम भी दिखायी दिया। लेकिन फारूक उसे कहीं नजर नही आया।''[14] जब सलामती की दुआ करने वाला हाथ ही कातिल बन जाये तो इसे ज्यादा बदकिस्मती और क्या होगी। कश्मीरी पंड़ितों के साथ भी यही हुआ, जिससे अनायास विश्वास कर पाना उनके लिए बहुत कठिन था और उन्हे यह अहसास तब हुआ जब तक वे लुट–पिट नही गए। उनके साथ रहने खाने वाले उनके पडोसी, उनके अपने भाई बिरादरी ने ही उनके घरों, संपत्ति यहाँ तक की उनकी स्त्रियों तक को भी चिन्हित करके निशाना बनाया या बनवाया। जानकीदास के पडोसी रमेश राजदान के साथ भी यही हुआ ''अब मैं क्या कहूँ। कल रात को ही हमारे दरवाजे पर एक पर्चा चिपकाया गया था जिसमें मुझे इन्फोर्म किया गया था कि मुहल्ले के 'हिट लिस्ट' में मेरा नाम सबसे ऊपर है क्योंकि आर0एस0एस0 का मेम्बर माना जाता है। इतना कहकर रमेश और उसका बेटा उठकर चले गये। कुछ देर बाद रूपा ने खामोशी तोड़ी, रमेश और गिरिजा के तब भी छोटे–छोटे दो लड़के हैं। मेरी दो जवान बेटियाँ हैं। मैं क्या करूँगी? वह रोने लगी।''[15] युद्ध और आतंक का सबसे अधिक व आसान शिकार स्त्रियाँ ही रहीं हैं। इतिहास साक्षी है कि युद्धों के विजयी जुलूस स्त्रियों की देहों पर ही होकर निकलें हैं। इसलिए रूपा का अपनी पुत्रियों को लेकर भय स्वाभाविक था तथा पलायन के साथ कश्मीरी पंड़ितों की स्त्रियों के साथ हुई अमानवीयता की घटनाएँ; इसकी बखूबी पुष्टि भी करती हैं। रूपा कहती है ''मैं देखूंगी कि इन ड्रमों में तुम बहनों को छिपा सकूँगी या नहीं। अगर छिपा सकी तो फिर उसे कोई चिन्ता नही होगी। सडको बाजारों में चिल्ला रही भीड भले ही मेरा सारा सामान लूटे, मुझे मार दे। मगर तुम दोनो बहनों की इज्जत आबरू तो बच जायेगी।

बसन्ती डर गयी.... जबकि ये लोग गलियों, बाजारों में दिल दहलाने वाले हंगामें करते हैं। मां का भय गलत नही है। ये वहशी कुछ भी कर सकते हैं। हमारी माँ की सोच गलत नही थी लेकिन फिर भी उससे गलती हो गयी उसे कहीं से सायनाइड की तीन गोलियाँ हासिल करनी चाहिए थी। एक अपने लिए और बाकी दो कुसुम और मेरे लिए।''[16]

लेकिन जिस बात का डर बसन्ती की माँ रूपा को था उसी विभित्सता का शिकार उसकी सहेली और अशोक की बहन नीरजा हो गई। नीरजा अपने पिता मोहनकृष्ण के साथ काकपुर पुलवामा अपनी टीचिंग का एपाइंटमेंट लेने गई थी जहाँ पूर्व नियोजित रूप से अगवा करके उसके साथ न केवल दुराचार किया गया बल्कि उसकी जघन्य हत्या भी कर दी गयी। उपन्यासकार हरिकृष्ण कौल ने इस मार्मिक स्थिति का चित्रण इस रूप में किया है ''धर्मपाल की रिपोर्ट पर वहाँ दो बडे लट्ठों के बीच पडे छोटे लट्ठे के नीचे की बर्फ में फैली लाली देखकर उसे यकीन हो गया कि धर्मपाल का शक–शक नही, उसकी पैनी दृष्टि है। मृतक की बेदर्दी से हत्या कर दी गयी थी। बर्फ के नीचे एक नंग–धडंग जवान औरत की लाश थी। असिस्टेंट ऑफिसर की उम्र ज्यादा नही थी। फिर भी अपनी छोटी आयु और कार्य अवधि में उसने जाने कितने मुर्दा शरीर देखें होगें। लेकिन आज पहली बार ऐसा दृश्य देख रहा था कि एक जवान लडकी का जिस्म टाँगों के बीच से गर्दन तक चीरा गया था– शायद 'बैंड–सा' पर।''[17] इतिहास में स्त्रियों में साथ मानव सभ्यता में अनेक बार विभत्स और हृदय विदारक घटनाएँ; घटित हुई हैं, जिन्होने मानवता का मुँह शर्मसार ही नही किया अपितु कंलकित भी किया है। मगर नब्बे के दौर में कश्मीर घाटी में पंड़ित महिलाओं के साथ जो घृणित परिघटनाएँ घटित हुई उनको किसी भी धर्म या धार्मिक विचारधारा में जायज नही ठहराया जा सकता। अफसोस! आधुनिक भारत में ही नही विश्व परिदृश्य में ये अकेले प्रकरण हैं, जिनमें जो पीडित है वो विस्थापित और संत्रस्त है और जो दोषी हैं वो बिना किसी दबाव के आजाद घूम रहे हैं। प्रस्तुत उपन्यास में उपन्यासकार ने कश्मीरी पंड़ितों के साथ हुई ऐसी ही अमानवीयताओं से पर्दा उठाया है, जिन्हें ना तो तब के समाज और सत्ता ने सुना और देखा और आज का समाज व सरकार देखकर, सुनकर भी मौन है। कश्मीरी पंड़ितों की इस व्यथा को उपन्यासकार ने उपन्यास के पात्र मोहनकृष्ण भान के इस कथन से रेखांकित किया है ''पापियों, पतितों मेरी जिस पाक और पवित्र पुत्री की लाश और लावण्य को प्रकृति ने बर्फ के स्वच्छ, शुद्ध और श्वेत कफन में ढका उस पर यह फटा, पुराना और मैला नापाक कम्बल डालने की हिम्मत कैसे हो रही है अरे ओ पाक स्थान समझने वालों पाकिस्तान का गुणगान करने वालों नापाक लोगों आज चारों तरफ जाड़े और उसकी ठण्ड से आदमी, जानवर और नदी–नाले सभी फीके और सूख रहे हैं। अगर बहार या गर्मी का मौसम होता तो कश्मीर के आदिवासी हम कश्मीरी पंड़ितों को पालने–पोसने वाली हमारी व्यथ माता अपनी सारी व्यथा भूलकर अपनी बेटी पिंकी को अपनी गोद में रखकर अपने साथ प्रवाह में ले गयी होती।''[18] कश्मीरी पंड़ितों के लिए पवित्र व्यथ–वितस्ता के आगे अपनी व्यथा की पुकार करता उपन्यास का पात्र मोहनकृष्ण नब्बे से लेकर आज तक इसी व्यथा को साथ लेकर न्याय की उम्मीद लेकर जी रहा है। अफसोस! न्याय अभी भी उससे कोसों दूर है अपने ही देश में विस्थापित जीवन जी रहे इस समाज की इन्ही दयनीय अवस्थितियों पर उपन्यासकार ने 'व्यथ–व्यथा' उपन्यास में दृष्टिपात किया है। इन विस्थापितों की वेदना को उपन्यास की इन पंक्तियों में सार्थक सहानुभूति प्रदान की है ''डौगरा सहाब, हम लोग अपने घरों को छोडकर आपकी शरण में आने को विस्थापन नही कह सकते। विस्थापन एक घर और स्थान को छोडकर दूसरे घर और स्थान में स्थापित हो जाने को कहते हैं। सन् 1947 में पाकिस्तान बनने पर जो सिंधी, पंजाबी अपनी मजबूरी से भारत आकर रहने लगे उन्हे ही विस्थापित कहा जा सकता है। उन्होने जो कुछ किया हो उसे ही विस्थापन या डिस्पलेसमेंट कहेगें। हम कश्मीरी पंड़ित सिर्फ अपनी जान बचाने के लिए अपने घर अपने खेत, बाग और जमीन अपनी बिजनेस या नौकरी छोडकर कश्मीर से बाहर शहरों, गांवों, रिश्तेदारों, दोस्तों के घरों या मन्दिरों, धर्मशालाओं में घुसकर या बेकार, नाकारा सडकों और विरान अहातों में टैंट लगाकर रहने लगें है। उनके दुख को डिसप्लेसमेंट या विस्थापन नही अगौनी अनछुई व्यथा कहेगें।''[19]

मानव जीवन की यह व्यथा जिसे सुनकर मानवता के दिल दहल जाए, सुनकर आँखें पिघल जाए और शरीर में कंपकपी होकर, मृत देहों को जिन्दा होने का सबूत मांगे कि कश्मीरी पंड़ितो की यह व्यथा कभी समाप्त होगी या नही। प्रो0 हरिकृष्ण कौल का यह उपन्यास 'व्यथ–व्यथा' कश्मीरी पंड़ितों की व्यथा का आईना प्रस्तुत करता है। यह उपन्यास जहाँ वक्त की गहरी तहों में साजिशन दबा दी गई कश्मीरी पंड़ितों की व्यथा को आवाज देता है तो वहीं रमजान जू, डॉ0 मजीद, मीर सहाब जैसे पात्रों के माध्यम से धर्म का भी वास्तविक चरित्र प्रस्तुत करता है। हालांकि कश्मीरी पंड़ितों की इस व्यथा में उनकी तटस्थता और चुप्पी भी इतनी दोषी है जितनी वहाँ की अराजक भीड़। इन सब में जो सबसे बडा दोषी है वह है कश्मीर और देश की सर्वोच्च सत्ता, जो तब मौन थी और आज निरूत्तर है। उपन्यासकार हरिकृष्ण कौल का यह उपन्यास समकालीन समय व समाज की इन्ही चुप्पियों को तोडकर उन्हे हकीकत का आईना दिखाता है, जिन्हे देखना और स्वीकार करना, किसी के बस की बात नजर नहीं आती है। इसलिए आज भी यह समाज अपनी व्यथा को स्वयं में समेटे हुए व्यथित जीवन जीने को अभिशप्त है। उपन्यासकार ने प्रस्तुत उपन्यास में इन विस्थापितों की दबा दी गयी सिसकियों को स्वर प्रदान किया है, जिन्हे बहुत कम लोग सुनना और जानना चाहते हैं।

संदर्भ सूची

1. कौल, प्रो0 हरिकृष्ण. (2005). व्यथ–व्यथा. श्री नटराज प्रकाशनः ए 507/12, करतार नगर, साउथ गांवडी एक्सटेंशन दिल्ली– 110053, प्रथम संस्करण. पृष्ठ **140.**
2. पाण्ड्रेय, अशोक कुमार. (2019). कश्मीरनामा इतिहास और समकाल. राजपाल एण्ड सन्सः 1590 मदरसा रोड गेट, दिल्ली– 110006. चौथा संस्करण. पृष्ठ **11.**
3. पाण्डे, अशोक कुमार. (2020). कश्मीर और कश्मीरी पंड़ित. राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0ः 1–बी0, नेताजी सुभाषचन्द मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली– 110002. प्रथम संस्करण. पृष्ठ **306.**
4. कौल, प्रो0 हरिकृष्ण. (2005). व्यथ–व्यथा. श्री नटराज प्रकाशनः ए 507/12, करतार नगर, साउथ गांवडी एक्सटेंशन दिल्ली– 110053. प्रथम संस्करण. पृष्ठ **31.**
5. वही. पृष्ठ **33.**
6. वही. पृष्ठ **43–44.**
7. वही. पृष्ठ **44.**
8. वही. पृष्ठ **49–50.**
9. वही. पृष्ठ **62.**
10. वही. पृष्ठ **64.**
11. वही. पृष्ठ **84.**
12. पाण्ड्रेय, अशोक कुमार. (2019). कश्मीरनामा इतिहास और समकाल. राजपाल एण्ड सन्सः 1590 मदरसा रोड गेट, दिल्ली– 110006. चौथा संस्करण. पृष्ठ **406.**
13. कौल, प्रो0 हरिकृष्ण. (2005). व्यथ–व्यथा. श्री नटराज प्रकाशनः ए 507/12, करतार नगर, साउथ गांवडी एक्सटेंशन दिल्ली– 110053. प्रथम संस्करण. पृष्ठ **127.**
14. वही. पृष्ठ **134.**
15. वही. पृष्ठ **136.**
16. वही. पृष्ठ **137.**
17. वही. पृष्ठ **151.**
18. वही. पृष्ठ **151.**
19. वही. पृष्ठ **157–158.**

9

लोक धर्म, देव : अवधारणा

डॉ० अपर्णा वत्स
एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग
आर०जी० (पी०जी०) कॉलेज, मेरठ
ईमेलः draparnavats2411@gmail.com

प्रीति गुप्ता
शोधार्थी, इतिहास विभाग
आर०जी० (पी०जी०) कॉलेज, मेरठ
ईमेलः pritigupta99911@gmail.com

सारांश

लोकधर्म समाज की परम्पराओं, मान्यताओं एवं प्रचलित विश्वासों का निकाय है। इन्हीं लोक विश्वासों के संगठित रूप को लोक धर्म कहा जाता है। इसके अधीन देवकल्पना, स्वर्ग–नरक की धारणा, जादू–टोना, उत्सव, पूजा–अर्चना, दान आदि की संकल्पना समाहित रहती है। धर्म जब नितान्त स्थानीयता का रूप ग्रहण कर व्यक्ति को प्रभावित करने लगता है तो लोक धर्म कहलाने लगता है। यह बहुत व्यावहारिक होता है। लोकधर्म किसी भी क्षेत्र की जनता का धर्म होता है। लोकधर्म में पूजनीय शक्ति को लोक देवता/लोक देव कहकर सम्बोधित किया जाता है देवता अपनी शक्ति, गुण, अपने सम्पर्क में आए व्यक्तियों को भी प्रदान कर सकते हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि लोकधर्म, लोक यानि आम आदमी का धर्म होता है।

मुख्य बिन्दु

लोक, यक्ष, लोक पाल, देवता।

भारतीय संस्कृति की मौलिक विशेषताओं का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण तत्व उसके स्थानीय या लोक विश्वास और परम्परा के रूप में जाना जाता है। इन्हीं लोक विश्वासों के संगठित रूप को लोक धर्म कहा जाता है। लोकधर्म समाज की परम्पराओं, मान्यताओं एवं प्रचलित विश्वासों का निकाय है। इसके अधीन देवकल्पना, स्वर्ग–नरक की धारणा, जादू–टोना, उत्सव, पूजा–अर्चना, दान आदि की संकल्पना समाहित रहती है। मनुष्य के विकास क्रम में प्रागैतिहासिक कालीन यायावर चरण हो या आर्य संस्कृति का चरण जहाँ यज्ञीय धर्म का बोलबाला था, में सामान्य जनों की ऐसी धार्मिक मान्यतायें विकसित हो चुकी थी, जिन्हें लोक धर्म की संज्ञा दी जा सके। अथर्ववेद के 'पापमोचन सूक्त' में वैदिक देवों के साथ यक्ष, राक्षस, भूत, दिशा, नक्षत्र आदि का उल्लेख है। अनेक वैदिक देवता लोकप्रिय होकर लोकधर्म के अंग बन गए तथा मुख्यधारा में भी लोक देवताओं ने स्थान बना लिया। केन उपनिषद में यक्ष को अग्नि, वायु, इन्द्र आदि का मान–मर्दन करने वाली बलशाली शक्ति माना गया है।

लोक मानस अलौकिक शक्तियों में विश्वास करता है। लोक में विद्यमान प्राकृतिक शक्तियों यथा भूमि, जल, वायु, अग्नि, सूर्य चन्द्र, नक्षत्र, नदी–पर्वत, पशु–पक्षी, जीव–जन्तु, नाग आदि के भय तथा उनके अलौकिक शक्तियों के प्रति विभिन्न प्रकार के अनुष्ठान भेंट–उपहार अर्पित करता है। लोक देवों के लिए देवकुल, देवायतन, मन्दिर, थान, मठ आदि की स्थापना करके पूजा करने की परम्परा की उत्पत्ति एवं विकास क्रमशः लोक से वेदों की ओर अग्रसर हुआ। शाब्दिक साक्ष्य के प्राचीन उदाहरण हमें अथर्ववेद के भूत प्रेत, जादू टोना, अभिचार, सम्मोहन के प्रमाण प्राप्त होते हैं, जिसका विकास परवर्ती धर्मों में हुआ। धर्म का विकास क्रम समझने के लिए सर्वप्रथम धर्म का अर्थ जानना आवश्यक है।

जो व्यक्ति को ऊपर थामकर रखता है, जिससे व्यक्ति ऊपर उठ सकता है, उसका नाम है धर्म। धर्म माने जो तुमको गिरने नहीं देता, जिससे शरीर, बुद्धि, चित्त, अहंकार और समाज में जो परिसर हैं, यश, कीर्ति, धन सब कुछ ऊपर उठ सकता है, वह है धर्म। जिससे सुख की वृद्धि होती है, वह धर्म है। धर्म शब्द उन संस्कृत शब्दों में से है जिनका प्रयोग कई अर्थों में होता है। यह एक अनेकार्थी शब्द है। यह शब्द ''धृ'' धातु से बना है, जिसका अर्थ धारण करना, आलम्बन देना या पालन करना आदि ग्रहण किया जाता है।[1]

धर्म का अर्थ निश्चित नियम, या आचरण के नियम हैं। ऋग्वेद के बहुत से मन्त्र अथर्ववेद में मिलते हैं, जिनमें 'धर्मन' शब्द

का प्रयोग हुआ है। अथर्ववेद में धर्म शब्द का प्रयोग धार्मिक क्रिया संस्कार करने से अर्जित गुण के अर्थ में किया गया है। वैशेषिक सूत्रकार ने धर्म को परिभाषित करते हुए कहा– ''धर्म वही है जिससे आनन्द एवं निःश्रेयस की सिद्धि की जा सके।''[2]

राधाकृश्णन के अनुसार– जिन सिद्धान्तों के आधार पर हम दैनिक जीवन व्यतीत करते हैं, और जिनके द्वारा हमारे सामाजिक सम्बन्धों की स्थापना होती है, वही धर्म है। यह जीवन का सत्य है, और हमारी प्रकृति को निर्धारित करने वाली शक्ति है।[3] पी०वी० काणे ने भारत के सन्दर्भ में धर्म की परिभाषा करते हुए कहा है कि '' 'धर्म' शब्द से धर्मशास्त्रकारों का अभिप्रायः किसी ईश्वरीय मत अथवा सम्प्रदाय से न होकर जीवन के ऐसे तरीके या आचरण की ऐसी संहिता से है जो एक व्यक्ति के रूप में समाज का सदस्य होने के नाते समाज की समस्त क्रियाओं को नियंत्रित करता है, तथा उसका प्रयत्न व्यक्तित्व के लक्ष्य को प्राप्त करने से है।[4] अतः यह कहा जा सकता है कि श्रुति तथा स्मृति में बताए नियमों का पालन करते हुए मोक्ष प्राप्त करना ही धर्म है, भारतीय धर्म की परीधि में जीवन के सभी पक्षों और प्रवृत्तियों की व्याख्या की गई है।

सामान्यतः 'धर्म' शब्द की परिपूर्ण व्याख्या विश्व की किसी अन्य भाषा के समानार्थी शब्दों द्वारा नहीं की जा सकती। इसके लिए उन शब्दों के साथ अन्य शब्द भी जोड़ने होंगे। सम्भवतः इसका निकटतम दूसरा शब्द है कर्त्तव्य– इहलौकिक और पारलौकिक कर्त्तव्य जिसमें व्यक्ति के निजी जीवन से लेकर परिवार, समाज, राष्ट्र और सम्पूर्ण विश्व के प्रति उसके कर्त्तव्य को समाहित किया जाता है। यही धर्म जब नितान्त स्थानीयता का रूप ग्रहण कर व्यक्ति को प्रभावित करने लगता है तो लोक धर्म कहलाने लगता है।

लोक धर्म दो शब्दों से बनता है, जिसमें धर्म का अर्थ पहले बताया जा चुका है। लोक एक संस्कृत शब्द है। जब यह किसी शब्द के अन्त में प्रयुक्त होता है तो इसका अर्थ 'स्थान' से लिया जाता है। जैसे– देवलोक (देवों का स्थान), ब्रह्मलोक (ब्रह्मा का स्थान), मृत्युलोक प्राणी मात्र के रहने का स्थान, मृत्यु जहाँ एक शाश्वत सत्य है। जब यह शब्द किसी शब्द के आदि में जुड़ता है, तो इसका अर्थ 'लोगों में प्रचलित' समझा जाता है। जैसे– लोकप्रथा (लोगों में प्रचलित प्रथा), लोकगीत (लोगों में प्रचलित गीत), लोक देवता (लोगों के या स्थानीय देवता)।[5]

सांस्कृतिक दृष्टि से प्रायः प्रत्येक क्षेत्र के मान्य देवताओं का स्वरूप प्रतीकात्मक होता है। गहराई से समझे तो ज्ञात होता है कि 'देवता' की स्थिति परमात्मा और मनुष्य के मध्य की होती है। मनुष्य अपने संघर्शमय जीवन से जूझते हुए निराशा की स्थिति में जब किसी से शक्ति या अनपेक्षित सहारा पाता है तो अपने कार्य की सिद्धि के लिए उसे देवता अथवा अवतार मानने लगता है। किसी ना किसी प्रकार के सहयोग की आवश्यकता उसे जीवन प्रत्येक अवसर पर पड़ती ही है। इसी कारण धीरे–धीरे अनेक देवताओं की प्रतिष्ठा हो जाती है। इनका स्वरूप भिन्न–भिन्न प्रकार की शक्ति, स्वभाव तथा कार्य के लिए निश्चित हो जाता है। मनुष्य प्रत्येक देवता का कार्य–क्षेत्र अलग मानकर उसका स्वरूप भी अलग निर्मित कर देता है। लोकधर्म किसी भी क्षेत्र की जनता का धर्म होता है। इसलिए इसकी कोई विशिष्ट संज्ञा जैसे– शैव सम्प्रदाय, वैष्णव सम्प्रदाय, शाक्त सम्प्रदाय आदि नहीं होती। लोकहित या लोकोपयोगिता ही लोकधर्म का मानदंड है। इस तरह लोक धर्म लोक हित के लिए लोक से उत्पन्न लोकमान्य धर्म है। इसे न तो कोई स्थापित करता है और न ही कोई संचालित। समन्वय लोकधर्म की प्रमुख प्रवृत्ति है। यह बहुत व्यावहारिक होता है। यह किसी तरह की कट्टरता, पक्षपात या भेदभाव की जगह सहजता और उदारता को अपने में संजोए रखता है। अतः यह कहा जा सकता है कि लोकधर्म, लोक यानि आम आदमी का धर्म। लोकधर्म में पूजनीय शक्ति को लोक देवता/लोक देव कहकर सम्बोधित किया जाता है।

देव शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के 'दिव्' धातु से संज्ञा पदरचनात्मक 'तल्' प्रत्यय (देवातल) के योग से तथा स्त्री प्रत्यय 'आ' (टाप्) से हुई है। जिसका अर्थ– चमकना, जीतना, खेलना, आनन्दित होना प्रशंसा करना आदि है।[6] प्रमुख रूप से इसका प्रयोग चमकना, रक्षा करना, खेलना आदि के अर्थ में ही किया जाता है। देवता शब्द भी इसी से देवत्व के अर्थ में निर्मित किया गया है। इसकी निष्पत्ति दिव (द्यु) आकाश से भी मानी जाती है। अतः कोई भी व्यक्ति या दृश्य अपनी देदीप्यमानता अथवा अभौतिकता के कारण दिव्य या दिव्यत्व से युक्त कहा जा सकता है।[7] वस्तुतः देवता शब्द का अर्थ अत्यन्त व्यापक है। श्रीमद् भागवत में सिद्ध, लोकपाल, योगेश्वर, गन्धर्व, विद्याधर, आदि को भी देवयोनि के रूप में ही चित्रित किया गया है। प्रायः देव या देवता शब्द को लौकिक श्रेष्ठता के अर्थ में भी प्रयुक्त किया जाता है।[8] कोई भी पारलौकिक शक्ति का पात्र, जो अमर और प्राकृतिक बन्धनों से ऊपर है तथा इसलिए पूजनीय है, उसे ही देवता या देव कहा जाता है। हिन्दू धर्म में देवों को परमेष्वर का लौकिक रूप या निराकार ब्रह्म का सगुण रूप माना जाता है।

निरूक्तकार के अनुसार 'जो कुछ देता है वही देवता है, अर्थात् देव स्वयं द्युतिमान है, शक्ति सम्पन्न है। देवता अपनी शक्ति, गुण, अपने सम्पर्क में आए व्यक्तियों को भी प्रदान कर सकते हैं। देवता या देव इस तरह के पुरूषों के लिए और देवी इस तरह की स्त्रियों के लिए प्रयुक्त होता है। मनुष्य जब किसी अद्भुत या चमत्कारपूर्ण दृश्य या शक्ति को देखता है तो वह उसकी अलौकिकता से अचम्भित होकर उसे दिव्य करार दे देता है। फिर उससे सम्भावित लाभ या हानि की भावना से प्रेरित होकर उसकी दिव्य शक्ति के समक्ष नतमस्तक हो जाता है। यही वह विश्वास और विचार क्रम है जो देवभावना के मूल में छिपा है। देव या देवता क्या है? देव किसको और क्यों कहते हैं? आचार्य यास्क ने निरूक्त में इसकी बहुत सुन्दर व्याख्या की है।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.09

''देवो दानाद् वा् दीपनाद्वा धोतनाद् वा, द्युस्थानो भवतीति वा।[9]

इन चार गुणों में से कोई एक या अधिक गुण वाले को देव कहते हैं–

1. दान– किसी प्रकार का कोई लोकोपकारी कार्य करना या दान देना।
2. दीपन– प्रकाश देना, प्रकाशित करना या ज्योति देना।
3. द्योतन– स्वयं प्रकाशयुक्त होना और गूढ़ रहस्यों या तत्वों को प्रकाशित करना।
4. द्युस्थान– द्युलोक में स्थित होना।

यजुर्वेद के एक मन्त्र में कुछ देवों के ये नाम दिए हैं– अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्रमा, वसुगण, रूद्र, आदित्य, मरूत, विश्वेदेव, बृहस्पति, इन्द्र और वरूण।

उपर्युक्त गुणों के आधार पर कुछ देवों का स्वरूप इस तरह समझा जा सकता है– 1. दानदाता– लोकोपकारी देव। जैसे– अग्नि ऊष्मा देता है। वायु श्वास और प्राण शक्ति देता है। वरूण जल का देवता है, यह जीवन शक्ति देता है। इन्द्र आत्मा है, यह चेतना देता है, आत्मिक बल देता है। वसु प्रथिवी आदि आठ वसु आश्रय और स्थिति देते हैं। 11 रूद्र प्राण शक्ति के स्रोत हैं। 12 आदित्य प्रकाश देते हैं।

दीपन– प्रकाश देना। सूर्य, अग्नि, चन्द्रमा आदि ये प्रकाश देते हैं।

द्योतन– अव्यक्त को व्यक्त करना। बृहस्पति ज्ञान का देवता है, इस तरह यह अव्यक्त को व्यक्त करता है। विद्या की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती है, जो ज्ञान का प्रकाश देती है। वाग्देवी ज्ञान की देवी है। यह ज्ञान देती है, अज्ञात और अव्यक्त तत्वों का बोध कराती है।

द्युस्थान– आकाश का होना, आकाशीय तत्व होना। जैसे– सूर्य, चन्द्रमा, विद्युत, नक्षत्र, ग्रह आदि।[10]

अतः उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि देवता होने के लिए आवश्यक है कि उसमें कोई लोकोपयोगी एवं लोक हितकारी गुण हो। वह दान, उपकार, प्रकाश, ज्ञान, आत्मशक्ति, मनोबल आदि कोई भी गुण देकर मानव का किसी भी प्रकार का हित करता हो।

सन्दर्भ सूची

1. काणे, पी०वी०. धर्मशास्त्र का इतिहास'. खण्ड प्रथम हिन्दी अनुवाद. अर्जुन चौबे कश्यप. हिन्दी समिति, सूचना विभागः उ०प्र० लखनऊ. पृष्ठ 3.
2. वही. पृष्ठ 4.
3. राधाकृष्णन, एस०. (1967). धर्म और समाज. राजपाल एण्ड सन्सः दिल्ली. पाँचवा संस्करण. अनुवादक–विराज एमवएवए. पृष्ठ 104.
4. काणे, पी०वी०. धर्मशास्त्र का इतिहास'. खण्ड द्वितीय हिन्दी अनुवाद. अर्जुन चौबे कश्यप. हिन्दी समिति, सूचना विभागः उ०प्र० लखनऊ. पृष्ठ 3.
5. द्विवेदी, डॉ0 सान्तवना. (2015). लोक संस्कृति. निखिल पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स. प्रथम संस्करण. ISBN: 978.93.85810. 27.5. पृष्ठ 2.
6. शर्मा, प्रो० डी०डी०. (2006). उत्तराखण्ड के 'लोकदेवता'. अंकित प्रकाशन. ISBN. 81.7988.020.6 पृष्ठ 1.
7. वही. पृष्ठ 2.
8. स्वामी प्रभुपाद. (2015). श्रीमद् भागवत 4/7 एवसीव भक्तिवेदान्त, श्रीमद् भगवद्गीता यथारूप. प्रथम संस्करण. तृतीय : 2018. राजपाल प्रकाशन. ISBN. 9789350642559
9. निरूक्त (दुर्गाचार्य की टीका सहित). श्री वेंकटेश्वर प्रेसः बम्बई. पृष्ठ 7–15.
10. वही. पृष्ठ 117.

10

सांस्कृतिक विविधता में एकताः संगीत के विशेष संदर्भ में

निशा

शोधार्थी, संगीत एवं ललित कला संस्थान

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

ईमेलः nisha.indianclassicalmusic@gmail.com

सारांश

प्रस्तुत लेख संगीत द्वारा सांस्कृतिक विविधता में एकता को खोजने का प्रयास करता है। लेख को सुविधानुसार निम्नलिखित बिंदुओं में विभाजित किया गया है। प्रथम बिंदु "सांस्कृतिक विविधता का उसके कारण" है। इस बिंदु में सांस्कृतिक विविधता को बताते हुए सांस्कृतिक विविधता के कुछ मुख्य कारणों को सम्मिलित किया गया है। इसके पश्चात् अगला बिंदु "सांस्कृतिक एकता व सांस्कृतिक एकता को स्थापित करने वाले सांगीतिक गुण" है। इसके अंतर्गत सर्वप्रथम सांस्कृतिक एकता को बताया गया है। इसके पश्चात् संगीत के अनेक गुणों में से कुछ गुणों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है, जिसके कारण संगीत सांस्कृतिक एकता को स्थापित करने में सक्षम हो पाता है।

संस्कृति एवं संगीत का संबंध

संस्कृति का सामान्य अर्थ किसी जनसमुदाय के रहन–सहन का तरीका, परम्पराएं, वेश– भूषा, भोजन, रीति–रिवाज इत्यादि से होता है और वहीं संगीत एक ऐसी ललित कला है, जिसमें इन सभी तत्वों से संबंधित भावों की अभिव्यक्ति सबसे अधिक होती है। यह सर्वमान्य है कि संगीत तथा संस्कृति दोनों ही एक दूसरे के पूरक हैं। जहां कोई विशेष संस्कृति संगीत द्वारा सर्वोत्तम रूप प्राप्त करती है वही संगीत किसी संस्कृति विशेष से जुड़कर एक विशिष्ट दर्शन व शास्त्र की शाखा में प्रफुटित होता है। यह संस्कृति व संगीत विभिन्न परम्पराओं, मान्यताओं इत्यादि के कारण परस्पर लोक संस्कृतियों व लोक संगीत का रूप पाते हुए अंत में पुनः मानव संस्कृति व संगीत में ठीक वैसे ही मिल जाती हैं, जैसे किसी ग्लेशियर से निकली जलधारा परिस्थितियों व समय के कारण अलग–अलग प्रवाहों में विभाजित होने के बाद भी अंततः सागर में ही मिल जाती हो।

सांस्कृतिक विविधता व उसके कारण

सांस्कृतिक विविधता का सीधा–सीधा अर्थ किन्ही दो या दो से अधिक संस्कृतियों में उपस्थित सांस्कृतिक तत्वों के बीच अंतर से है। इस अंतर का कारण किसी संस्कृति के निर्माण हेतु संबंधित सांस्कृतिक तत्वों में विविधता होती है। यह सांस्कृतिक तत्व किसी जनसमूह की परंपराओं, मान्यताओं, क्रियाकलापों, आस्था आदि पर आधारित होते हैं। यह सांस्कृतिक तत्व किन्हीं दो संस्कृतियों के बीच कितना अंतर पैदा कर देते, यह अलग–अलग संस्कृतियों से संबंधित व्यक्तियों के पहनावे, भोजन, वस्त्र इत्यादि में अंतर के कारण सहज ही दे देखा जा सकता है। इन्हीं के आधार पर अनेक संस्कृतियों का निर्माण होता है।

गौरी शंकर भट्ट के अनुसार– देश काल की विशेष सीमाओं और सामाजिक संबंधों के जाल में बंधने पर ही मानव–संस्कृति 'संस्कृति–विशेष' का रूप ग्रहण या धारण करती है।[1]

सांस्कृतिक विविधता के प्रमुख कारणों में से कुछ को यहां प्रकाश में लाने का प्रयास किया गया है–

गौण व विशेष गुणों पर आधारित कारण

प्रत्येक संस्कृति में कुछ गौण तथा विशेष गुण विद्यमान रहते हैं। उदाहरण के लिए बौद्ध संस्कृति में विशेष गुण शांति, विनम्रता व सौम्यता है। वहीं पठान कबीलों के अंतर्गत व्यक्तिगत बहादुरी होना सर्वाधिक महत्वपूर्ण गुण माना जाता है। इसका अर्थ यह नहीं

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.10

है कि बौद्ध संस्कृति के व्यक्तियों में बहादुरी नहीं होती या पठान जनसमुदाय में विनम्रता का गुण नहीं होता। यहां पर अंतर केवल गुणों के क्रम का है, जो बौद्ध जन–समुदाय तथा पठान जन–समुदाय के साथ कुछ क्षण व्यतीत करने पर ही ज्ञात हो जाता है।

प्रजातीय कारण

सामान्यतः एक प्रजाति के सभी लोग लगभग एक नीति रीति का पालन करते हैं। यह मुख्य रूप से समाजशास्त्र का विषय है। किंतु एक दीर्घ सामाजिक संरचना के कारण यह संस्कृति को भी प्रभावित करती है। उत्तर–पूर्वी सीमा पर हिमालय की तलहटी में रहने वाले थारू आदिवासी भारत का एक विशिष्ट सांस्कृतिक जन समूह है। भारतीय प्रजातिय व्यवस्था में अहीर, कुर्मी, कहार, तेली इत्यादि शामिल हैं।

भौगोलिक कारण

संस्कृतियों पर भौगोलिक स्थिति का बहुत गहरा प्रभाव होता है। उदाहरण के लिए तटीय इलाकों पर रहने वाले जन समुदाय की संस्कृति सुदूर पर्वतीय इलाकों में रहने वाले जन समुदाय की संस्कृति से बहुत अलग होती है। सामान्यतः व्यक्ति अपनी भौगोलिक स्थिति के अनुसार अपनी दिनचर्या, रोज़मर्रा के कार्यकलापों को सम्पन्न करता है। उदाहरण के लिए बर्फीले पहाड़ों में रहने वाला जन समुदाय अधिकतर मोटे ऊनी कपड़े पहनता है। उनकी वेशभूषा, आभूषण अन्य जन–समुदाय से बहुत हद तक अलग होती हैं। उनकी संस्कृति में वर्षा ऋतु, बर्फ के गिरने आदि का विशेष महत्व होता है। वहीं तटीय इलाकों में अधिकतर सूती कपड़े पहने जाते हैं, भोजन में अधिकतर मछली, चावल खाया जाता है तथा ऊनी कपड़े कि वहां पूरे वर्ष आवश्यकता नहीं होती।

धार्मिक कारण

अधिकतर विद्वानों के अनुसार संस्कृति व धर्म एक साथ चलने वाली प्रक्रिया है। किसी संस्कृति की मान्यताएं, परंपराएं, आदर्श किसी संस्कृति में रहने वाले जन समुदाय के धर्म पर विशेष रुप से आधारित होते हैं। वर्तमान में अलग–अलग धर्मों के कारण अलग–अलग संस्कृतियां अस्तित्व में है, जो संस्कृतियों में विविधता का मुख्य कारण बनती हैं। उदाहरण के लिए सिक्ख धर्म से जुड़े लोगों की संस्कृति तथा बौद्ध धर्म से जुड़े लोगों की संस्कृति में अंतर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

स्थानांतरणीय कारण

जैसे–जैसे मनुष्य विकास की ओर बढ़ा उसने अपनी सुविधा के लिए संसाधनों को एकत्रित करना शुरू कर दिया। इन संसाधनों की खोज में उसने लंबी यात्राएं भी की और यदि उसे यह आभास हुआ कि इन संसाधनों का स्थानांतरण संभव नहीं है, तो वह उन संसाधनों के पास ही बस गया। वर्तमान में भी मनुष्य जीवन निर्वाह के लिए स्थानांतरण कर रहा है, जिसके कारण एक ऐसी संस्कृति का निर्माण हो रहा है, जो मिश्रित संस्कृति कही जा सकती है। जो किसी स्थान की सांस्कृतिक विविधता को बढ़ाने में विशेष भूमिका निभाती है। भारत ऐसे संस्कृति का सर्वोत्तम उदाहरण है।

सांस्कृतिक एकता व सांस्कृतिक एकता को स्थापित करने वाले सांगीतिक गुण

सर्वप्रथम यह जानना आवश्यक है कि सांस्कृतिक एकता किसी अन्य संस्कृति में मिल जाना नहीं है, बल्कि अपनी सांस्कृतिक मान्यताओं को बनाए रखते हुए अन्य संस्कृति का आदर करना है। भारतीय संस्कृति में तो इस भाव को विश्व बंधुत्व या वसुधैव कुटुंबकम् जैसे आदर्शों में सदैव ही देखा गया है। सांस्कृतिक एकता के इस सकारात्मक भाव में संगीत का विशेष योगदान रहता है। इसका मुख्य कारण संगीत में निम्नलिखित गुणों का होना है–

सांस्कृतिक जाग्रति के गुण

संगीत को माध्यम बनाकर स्थापित की गई सांस्कृतिक एकता में किसी संस्कृति के हनन का कोई भय नहीं होता। बल्कि संगीत द्वारा किसी संस्कृति के बारे में सबसे अधिक जानकारी प्राप्त होती है। क्योंकि संगीत संस्कृति का सर्वोत्तम प्रतिनिधि है। उदाहरण के लिए राजस्थान का केसरिया बालम सुनते ही संपूर्ण राजस्थान की सांस्कृतिक छवि आंखों के सामने स्पष्ट दिखाई देने लगती हैं। इसी प्रकार पंजाब का हीर रांझा, यू.पी व हरियाणा का स्वांग, होली इत्यादि गीतों में वहां की संस्कृति स्पष्ट झलकती है।

सौंदर्यात्मक गुण

संगीत का सर्वोत्तम गुण उसका सौंदर्य है, जो किसी अन्य कला में नहीं है। यही कारण है कि जब कोई बनारस का व्यक्ति पंजाब की हीर सुनता है तो सम्मोहित हो जाता है। ऐसे अनेक उदाहरण हैं, जिसका मुख्य कारण संगीत में ऐसी सौंदर्यात्मक शक्ति अथवा गुणों का होना है, जो प्रसन्न चित् श्रोता को मंत्र मुग्ध कर देते हैं। ऐसा सौंदर्य भाव सांस्कृतिक एकता को स्थापित करने में संपूर्ण रूप से सक्षम होता है। एक अन्य उदाहरण में जब दिल्ली शहर में छठ पूजा होती है, तो केवल उस विशेष संस्कृति से जुड़े व्यक्ति ही नहीं बल्कि आसपास रहने वाला जन–समुदाय भी उन गीतों का आनंद लेता है।

मनोवैज्ञानिक गुण

विद्वानों के अनुसार मनोविज्ञान मन का विज्ञान है और संगीत में मन का महत्वपूर्ण स्थान है। इस कारण मनोविज्ञान और

संगीत का विशेष संबंध है। साधारणतया जब कोई प्रसन्न चित्त व्यक्ति किसी अन्य सांस्कृति से सम्बन्धित संगीत का श्रवण करता है, तो उसके मन पर इसका सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। यदि व्यक्ति के मन में उस संस्कृति विशेष के लिए कुछ नकारात्मक भाव भी होते है, तो भी कुछ समय के लिए वह व्यक्ति उन नकारात्मक भावों से मुक्त हो जाता है। यही कारण है की जब जब सांस्कृतिक एकता व अखंडता की बात होती है तब तब बड़ी से बड़ी संस्थाएं भी संगीत को साधन बनातीं है। इनमें भारतीय सांस्कृतिक परिसद्, संगीत नाटक अकादमी, आकाशवाणी इत्यादि मुख्य है।

आध्यात्मिक गुण

संगीत व्यक्ति को आत्मिक स्तर पर आनंद प्रदान कराता है तथा अध्यात्म व संगीत दोनों का ही अंतिम व परम लक्ष्य आत्मा का परमात्मा में विलीन होना है, जिसके लिए ब्रह्मसाधना का विशेष महत्व स्वीकार किया है।, जो नादाधीन है। विजय लक्ष्मी जैन अपनी पुस्तक 'संगीत–दर्शन' में बताते हैं कि नाद ही प्राण तत्त्व है और नाद ही ईश्वर है। सम्पूर्ण जगत् नादमय है और नादाधिन है। संगीत ऐसे ही आध्यात्मिक गुणों से युक्त कला है, जिसमें भौतिक जगत की तुच्छ समस्याओं से हटकर परमात्मा को इष्ट मानकर उनकी प्राप्ति करना तथा उसमें विलीन होना सर्वोपरि है।

नित नव निर्माण का गुण

संस्कृति सदैव ही चलते रहने की जीवंत प्रक्रिया है। कोई संस्कृति जैसी आज है, यह आवश्यक नहीं कि वह कुछ वर्षों बाद भी वह ठीक उसी रूप में विद्यमान हो। लोक रुचि में बदलाव के कारण संस्कृति भी अपना रूप बदल लेती है। उदाहरण के लिए हजारों वर्ष पूर्व भारतीय संस्कृति जिस रूप में थी, ठीक उसी रूप में वहां वर्तमान में नहीं है। कुछ बड़े–छोटे बदलावों का लोक रुचि वह परिस्थितियों के कारण आना सामान्य है। यही गुण संगीत में भी है। संगीत भी रूचि के अनुसार ढल जाता है। इस कारण संगीत हर काल में सांस्कृतिक एकता अखंडता के लिए सर्वोच्चतम साधन सिद्ध हुआ है। मध्य काल में हुआ भक्ति आंदोलन इसका बहुत बड़ा उदाहरण है, जिसमें अलग–अलग संस्कृतियों और धर्मों के विद्वानों ने एकता और अखंडता को स्थापित करने में संगीत का विशेष स्थान स्वीकार किया है।

भाषागत गुण

कंठ संगीत के अंतर्गत मुख्य रूप से दो प्रधान भाग है। पहला स्वर प्रधान भाग, दूसरा शब्द प्रधान भाग। यह शब्द किसी न किसी भाषा से सम्बन्ध रखते हैं तथा इन शब्दों का संगीत में विशेष महत्व होता है। साथ ही भाषा के जरिए सरलता से संस्कृति का संगीतमय रूप गीतों में झलकता है। उदाहरण के लिए राजस्थान का केसरिया बालम पधारो जी म्हारे देश' एक बहुत लोकप्रिय लोकगीत है। जिसको सुनते ही राजस्थान की संपूर्ण संस्कृति आंखों के सामने अलंकृत हो जाती है।

डॉ. कविता चक्रवर्ती के अनुसार मुसलमान और अंग्रेजी शासन काल के समय जब भारतीय देश की भाषाएं संस्कृत से पूर्णतया मुक्त हुईं, तब हिंदी, मराठी, बंगाली, गुजराती, उर्दू को मिलाकर एक मिश्रित भाषा 'हिंदुस्तानी' का प्रयास किया गया।[2] इस मिश्रित भाषा हिंदुस्तानी अथवा हिंदी या खड़ी बोली इत्यादि में कई सांगीतिक बंदिशों की रचनाएं हुई। उदाहरण के लिए राग अहीर भैरव की सुप्रसिद्ध बंदिश "अलबेला सजन आयो री" में भारतीय संस्कृति में शुभ कार्यों पर आटे से ज़मीन पर चौकोर आकृति बनाए जाने के बारे में ज्ञात होता है। जिसे अलग–अलग लोक व क्षेत्रीय संस्कृतियों में अलग अलग तरीके से सजाया जाता है। इस प्रकार की रचनाएं भारतीय संस्कृति को न केवल उजागर करती है बल्कि एक साथ जोड़ती हैं।

उपरोक्त गुणों से युक्त संगीत सद्भावना का उच्चतम स्रोत है तथा संगीत में निश्चित रूप से एक ऐसी शक्ति है जो किसी भी प्रकार के बंधनों से मुक्त है। एक ऐसी शक्ति जो व्यक्ति या कलाकार की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के अलग होते हुए भी कलाकार व श्रोताओं को समान भावनात्मक स्तर पर ले आती है। सांस्कृतिक एकता के लिए संगीत इन्हीं शक्तियों के कारण आज से नहीं वरन् युगों से उपयोगी रहा है।

उपसंहार

संस्कृति एक जीवंत प्रणाली है, जिसको संगीत द्वारा कलात्मक रूप प्राप्त है। सांस्कृतिक एकता में इस संगीत कला का विशेष स्थान है, जहां अलग–अलग सांस्कृतिक तत्वों के कारण विश्व संस्कृति अनेक संस्कृतियों में विभाजित है। वहीं संगीत द्वारा यह पुनः सांस्कृतिक एकता की ओर अग्रसर होती है। निश्चित रूप से संगीत व्यक्तियों के मन पर गहरा प्रभाव डालता है, जो सकारात्मक भाव से पोशित होता है। यह व्यक्ति को सभी प्रकार के द्वेश व नकारात्मक भावों से मुक्त करने में सक्षम है। यह भी देखा गया है कि, जो व्यक्ति या जो जन–समुदाय संगीत से अधिक जुड़ा हुआ होता है, वह अधिक सांस्कृतिक होता है। ऐसा जन–समुदाय निरंतर प्रगति की ओर उन्मुख रहना चाहता है, जिसके लिए वह शांतिपूर्ण समाज को विशेष महत्त्व देता है। वह जन–समुदाय यह जानता है की एकत्र होकर रहना प्रगति तथा विकास के लिए अति आवश्यक है। यही कारण है की सांस्कृतिक एकता वर्तमान में विशेष महत्व रखती है, जिसमें संगीत की भूमिका महत्वपूर्ण है।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.10

संदर्भ सूची

1. भार्गव, डॉ सत्या. (2002). राष्ट्रीय एकता में संगीत की भूमिका. संजय प्रकाशनः नई दिल्ली.
2. भट्ट, गौरी शंकर. (1996). भारत में समाजशास्त्र, प्रजाति और संस्कृति. साहित्य सदनः देहरादून.
3. महेंद्रु, डॉ० नीलम बाला. (2011). आधुनिक अंतर्राष्ट्रीयकरण में भारतीय शास्त्रीय संगीत की भूमिका. कनिष्क पब्लिशर्सः नई दिल्ली.
4. मिश्रा, जया. (2003). वर्तमान सामाजिक परिवर्तन में संगीत की नई भूमिका. अनुभाग पब्लिशिंग हाउस इलाहाबाद. संस्करण द्वितीय.
5. शर्मा, डॉ पुष्पा. (2006). लोकगीतों में नाद सौंदर्य. सत्यम् पब्लिशिंग हाउसः दिल्ली संस्करण.
6. चक्रवर्ती, डॉ. कविता. (1991). भारतीय संगीत में वाद्य वाद. राजस्थानी ग्रंथागारः जोधपुर राजस्थान. संस्करण.

(Footnotes)

1. भट्ट, गौरी शंकर. भारत में समाजशास्त्र, प्रजाति और संस्कृति. पृष्ठ **138.**
2. चक्रवर्ती, डॉ. कविता. भारतीय संगीत में वाद्य वाद. पृष्ठ **13.**

11

स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ

डॉ0 अर्चना प्रिय आर्य

असिस्टेंट प्रोफेसर एवं अध्यक्षा, संस्कृत विभाग

कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ

ईमेलः arachanapriyaarya@gmail.com

सारांश

गृहस्थ योग की सम्यक् साधना ही सबसे बडा तप है। किसी कल्पित मुक्ति की तलाश में गृहस्थ के पवित्र दायित्व से भाग होना वीरता नहीं कायरता है। क्योंकि गृहस्थ यज्ञ की अधिष्ठात्री नारी को वेद ने गृहस्थ यज्ञ या राष्ट्र यज्ञ की ब्रह्मा कहा है। गृहस्थ योग की साधना द्वारा ही इस महान भारत को स्वर्ग बनाया जा सकता है। कर्तव्य पथ से विचलित हताश और निराश पुरूष को माता, बहिन या पत्नी के रूप में प्रेरणा बनकर कर्तव्य पथ पर आरूढ़ करने में तुम्हारी राष्ट्र सेवा का सर्वोत्तम स्वरूप छिपा है। ''सखे सप्तपदी भव'' के अनुसार नारी पुरूष की सखा, मित्र, सहधर्मी व सहकर्मी है। पैर की जूती नहीं, नरक का दरवाजा नहीं क्योंकि मनु महाराज कहते हैं।

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः

अर्थात् जहां नारी की पूजा होती है, वहां देवता निवास करते हैं और नारी का अपमान होता है वहां सभी क्रियाएं निष्फल हो जाती हैं। इसलिए वेदानुसार– ''पुरन्धिर्योशां अजायताम्'' नारी ही राष्ट्र जीवन का आधार है।

मुख्य बिन्दु

स्त्री, राष्ट्र, ब्रह्मा।

प्रस्तावना

''यज्ञो वै विष्णुः विष्णु वै राष्ट्रः'' के अनुसार यज्ञ नाम राष्ट्र का या समाज का है। अपने व्यक्तिगत हितों को राष्ट्र या समाज के लिए बलिदान करना ही यज्ञ भावना है। गृहस्थ जीवन में यज्ञ भावना के पालनार्थ ही ऋषियों की योजनानुसार राम वन को गये थे और वहां व्रत लेते हैं कि–

निश्चर हीन करौ महि भुज उठाइ प्रण कीन्ह

सीता माता इस शास्त्र धर्म रूप में, यज्ञीय व्रत में, राम की सहायिका हैं। इस यज्ञीय भावना से प्रेरित होकर महाराणा प्रताप व्रत लेते हैं कि यवन को कभी सिर न झुकाउंगा। महारानी इस क्षात्र धर्म व्रत में सहायिका हैं। कालिदास को महाकालिदास बनाने वाली विद्योतमा और मण्डन मिश्र की पत्नी भारती की विद्वता तो लोक प्रसिद्ध है ही, जिसने शंकराचार्य के शास्त्रार्थ में मध्यस्थता का आसन ग्रहण किया था। राजनीति विशारदा द्रौपदी पाण्डवों के चक्रवती साम्राज्य की धुरी थी। अपना प्राण देकर भी चूडाव्रत सरदार को कर्तव्यपथ पर आगे बढाने वाली हाडा रानी, महाराणा प्रताप की बेटी चम्पा की रोटियों को बनबिलाव द्वारा ले जाने पर संधिपत्र लिखने से रोकने वाली महारानी और सतीत्व की रक्षार्थ 14 हजार देवियों सहित जौहर व्रत करने वाली पद्मिनी इतिहासों के पृष्ठों में अमर है। यशोदा अपनी बेटी का बलिदान न करती तो हमारे बीच भगवान श्रीकृष्ण न होते, पन्नाधाय अपने बेटे का बलिदान न करती तो हमारे बीच उदय सिंह नहीं होते और नीरा अपने पति का बलिदान नहीं करती तो हमारे बीच नेताजी सुभाषचन्द्र बोस नहीं होते। नारी के इस स्वरूप से प्रेरित होकर महादेवी वर्मा जैसी कवियत्री का कहना है– महिला जीवन की त्रासदी भोगते हुए भी मैं अगले जन्म में महिला होना ही पसंद करूंगी। नारी जीवन पुरूष से बहुत उंचा है। वह एक मां का त्याग करने वाला जीवन है। नारी दासी नहीं, पैर की जूती नहीं या टहलनी नहीं, वह गृहस्वामिनी है, संभ्राज्ञी है किंतु स्पष्ट है कि यह गौरवपूर्ण पद, यह अधिकार कर्तव्यपालन से ही संभव है। ऐसी देवियाँ हुयी हैं, जिन्होंने अपने सद्व्यवहार से बुरे स्वभाव को बदल दिया है, उजड़े घरों को

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.11

आबाद किया है और अपनी श्रर्मशीलता, सहष्णुता एवं बुद्धमता से सभी के ह्रदय पर शासन करने में सफलता प्राप्त की है। प्रत्येक नारी को ऐसा दैविन स्वर्ग लाने के लिए प्राणपण से यत्न करना चाहिए। किसी कवि ने बहुत सुंदर कहा है कि–

यहां की देवियां विदुषी महान होती थीं, तेज की लाट व अग्नि समान होती थीं।
सती सीता, अनुसुइया, शकुन्तला जैसी, लोपा मुद्रा शुभा–सुलभा मदालसा जैसी।।
गार्गी, भारती जब उठके बात कहती थीं, तो याज्ञवल्क्य व शंकर को मात देती थी।
जब कुंती व कौशल्या की याद आती है, तभी सम्मान से गर्दन मेरी झुक जाती है।।
पथिक इतिहास में यह खोज हमने भारी की, सदां पूजा हुयी इस देश की सन्नारी की

राष्ट्र का आधार स्तम्भ नारी

वेद में नारी को ब्रह्मा कहा गया है। अर्थात् वह सृष्टि को जन्म देने वाली है।

''स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ'' –ऋग्वेद 8 |33 |9

शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है कि –

मातृमान पितृमान आचार्यवान पुरूषो वेदाः

अर्थात् मनुष्य ज्ञानवान तभी बनता है जब उसको माता, पिता और आचार्य का वरदहस्त प्राप्त होता है। सभ्यता, संस्कृति में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करने में माता का स्थान सर्वोपरि माना गया है और उसे एक सृजनात्मक शक्ति के रूप में मान्यता प्राप्त है। माता से बढ़कर बालक को परिवार, समाज और राष्ट्र हित में उसकी योग्यता का विकास करने और सुसंस्कार देने में और कोई सक्षम नहीं हो सकता। वस्तुतः सतयुग में नारी वेदों की विदुषी, कला–कौशल में पारंगत, कुशल शासक, प्रशासक एवं संकटकालीन स्थिति में शत्रु के दांत खट्टे करने वाली वीर योद्धा थीं। उदाहरणस्वरूप– कैकयी युद्ध क्षेत्र में जब राजा दशरथ के रथ पर रथारूढ़ थी तब अकस्मात रथ का पहिया टूट गया। अतः कैकयी ने ऐसी स्थिति में रथ के पहिये को ही नहीं संभाला बल्कि विजय प्राप्त करायी। हमारा भारतवर्ष ऋषि–मुनियों, त्यागी–तपस्वियों की कर्मभूमि रहा है। जिसका सारा श्रेय उनकी जननी को जाता है– ''माता निर्माता भवति'' जिसका हमारा इतिहास गवाह है। समय–समय पर अपनी कोख से ऐसी महान विभूतियों को जन्म दिया है, जो हंसते–हंसते राष्ट्र पर कुर्बान हो गये या विशाल साम्राज्य की स्थापना कर सदां के लिए आदर्श बन गये। यह विश्व प्रसिद्ध सूक्ति है कि– महापुरूषों के निर्माण में उनकी माताओं का हाथ रहा है। माता का गर्भ एक ऐसा कोषागार है, जो जन्म से पूर्व, जन्म भर तथा मृत्यु के पश्चात भी गुणों को प्रकाशित करता है। संस्कार मनुष्य अपने परिवेश से अर्जित करता है। वैज्ञानिकों का कहना है कि मां के गर्भ से ही बच्चा संस्कार अर्जित करता है।

परिवार राष्ट्र की सबसे छोटी इकाई है। परिवारों से ही राष्ट्र का निर्माण होता है। इसका आधार धुरी है–पवित्र नारी। यह नर रत्नों को जन्म देकर एक सुदृढ़ तथा शक्तिशाली साम्राज्य की नींव का कार्य करती है। यह मां मदालसा की शक्ति थी कि अपनी इच्छानुसार तीन बेटों को सन्यासी बनाया तथा चौथे को राजा के आदेश पर क्षत्रिय गुणों से सम्पन्न कर अपने राज्य का उत्तराधिकारी तैयार कर दिया। माता जीजाबाई की शिक्षाओं का ऐसा प्रभाव था कि शिवाजी जैसे वीर सपूत ने रेत के कणों की तरह बिखरी मराठा जाति को एकता के सूत्र में पिरोकर दक्षिण में सदृढ़ मराठा राज्य की स्थापना कर औरंगजेब जैसे शासक की कब्र खोद दी। वीर बांकुरे महाराणा प्रताप को सब जानते हैं पर उनकी मां को नहीं। वह एक साधारण किसान की बेटी थी। जिसकी मुलाकात महाराणा उदय सिंह से अरावली के पर्वतों में हुयी। उसे देखते ही महाराणा ने अपनी दूरदर्शिता से जान लिया कि यह लडकी कोई साधारण नहीं, एक सिंहनी के समान है। अतः उससे शादी कर ली, इसी रानी की कोख से जन्मे वीर सपूत महाराणा प्रताप, रानी ने इन्हें मन से गढ़ा और वह वैसा ही बना जैसा कि उन दिनों राष्ट्र को जरूरत थी। ऐसी मां ही राष्ट्र को राष्ट्र निर्माता देकर राष्ट्र का आधार बनती है।

वैदिक संस्कृति से परामुख नारी

महाभारत के समय से वैदिक संस्कृति में अनेक कारणों से अधपतन प्रारंभ हो गया। सामाजिक नियम व मर्यादाएं टूटने लगी थीं। इस सामाजिक गतिहीनता और आध्यात्मिक पतन के समय में अनेक सम्प्रदाय वैदिक संस्कृति को ललकारते हुए खडे हो गये थे। पौराणिक लोगों ने नारी को ''पैरों की जूती'' अर्थात् नारी नरक का द्वार है ऐसे सम्बोधन करके उन्होंने नारी को उसके सम्मानजनक पद से गिरा दिया। यह और अधिक विडम्बना की बात है कि स्वयं को ''राम की बहुरियां'' कहने वाले कबीर ने भी उस सम्मानजनक नारी के विषय में व्यंग कसते हुए कहा कि–

नारी की छाया परत अंधा होत भुंजग।
उस नर की कौन गति, जो नित नारी के संग।।

महाभारत काल में ही एक कुलपुत्र द्वारा कुल वधु पर ऐसा घिनौना कृत्य किया, जिसका स्मरण मात्र होती ही हमारे रौंगटे खडे हो जाते हैं, जिसे हम इस प्रकार कह सकते हैं।

द्वापर के अंतिम प्रहर में, अंधी सभा के सामने।
एक चातक पुरूष ने मान मर्यादा विरूद्ध कर्म किया।।

मुसलमानों ने नारी को केवल मात्र बच्चे पैदा करने की मशीन कहा। जैसे कपडा बनाने की मशीन होती है, जूता बनाने की मशीन होती है, डबल रोटी बनाने की मशीन होती है इसी तरह से बच्चे पैदा करने की मशीन नारी को कहा। मध्यकाल में तो उसे घर की चार दिवारी में बंद कर दिया गया। उसकी नियति अत्याचार सहना ही रह गई। उसके समस्त अधिकार छीन लिये गये। उस पर घूंघट को बुरी तरह लाद दिया गया। बाल विवाह, सती प्रथा आदि कुप्रथाओं ने उसके जीवन को नर्क बना दिया और उसके विषय में कहा गया– ''अष्ट वर्षा भवेत गौरी'' अर्थात् आठ वर्ष की पत्नी हो। क्या वासना ने मनुष्य को इतना अंधा बना दिया था कि आठ वर्ष की गौरी में उसे अपनी बेटी नजर नहीं आती थी, उसे अपनी बहिन नजर नहीं आती थी। इसी काल में महाकवि तुलसीदास ने नारी को लज्जित किये बिना नहीं छोडा और कहा कि–

ढोल, गंवार, शूद्र, पशु, नारी, ये सब ताडन के अधिकारी।

अर्थात् ढ़ोल जिस तरह पीटने के काम आता है, शूद्र और गंवार को हीन दृष्टि से देखा जाता है, पशु द्वारा पूर्ति न होने पर उसे प्रताडित किया जाता है, इसी तरह तुलसीदास ने नारी की भी गणना कर दी कि नारी को भी प्रताडित करते रहना चाहिए, तभी वह सीधी रहती है। राजस्थान के एक संत ने भी नारी के विषय में ऐसे ही भाव प्रकट किये–

नारी को ठाठरो, हल को फांचरो।
जितनो कूटो, उतनो ही अच्छो।।

रीतिकाल में तो नारी की दशा और भी सोचनीय हो गयी थी। इस काल में तो उसे केवल वासना की ही वस्तु माना जाता था। भोग, विलासी और धर्मान्ध लोगों ने पूजा के पवित्र स्थानों पर भी इस प्रकार के विधान कर डाले कि सिद्धि प्राप्ति के लिए आई किशोरियों की शालीनता को भंग करना अपना अनिवार्य धर्म और कर्म बना लिया। नारी को केवल विलासनीय, प्रेमिका के रूप में ही देखा गया। इस काल के साहित्यकार भी केवल नारी के शारीरिक सौंदर्यरूपी तालाब में गोते लगाते रहे। वे कालिदास की शकुंतला, दिनकर की उर्वशी व मैथिलीशरण की उर्मिला को भूल गये। उन्हीं श्रृंगारिक कवियों को धिक्कारते हुए कहा जा सकता है–

आज तुलसी के बेटे मिराशी बन रहे हैं।
सरस्वती के मंदिर में कीचड़ के दिये जल रहे हैं।।

नारी सशक्तिकरण

युग बदला, समय बदला, राज्यों के उत्थान व पतन हुए हैं, देश गुलाम हुआ, पुनः आजाद हुआ हर काल में नारी की अपनी दास्तां रही। घोर जुल्म व अत्याचारों का शिकार बनी, अनेकों यातनाएं सहीं जैसे– कभी भ्रूण हत्या तो कभी बाल विवाह तो कभी अनमेल विवाह, आजीवन विधवापन की पीडा या जीते जी सती होना। वैश्यावृत्ति या देवदासी या भेड़ बकरियों की तरह उनका व्यापार क्या–क्या नहीं सहा? मैथलीशरण गुप्त जैसे कवि भी नारी की दुर्दशा को देखकर लिख बैठे–

अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी।
आंचल में है दूध और आंखों में पानी।।

इन जुल्मों की प्रतिक्रिया है या भौतिक युग का वरदान। नारी जाति ने अंगडाई ली ''हम किसी से कम नहीं'' का नारा बुलंद करते हुए नवजीवन में कूद पडी। संयुक्त परिवार को तिलांजलि दे एकल परिवार बसाये, पुरूष की अर्धांगिनी नहीं प्रतिद्वंदी बन गयी। सभी बंधनों को उतारकर फैंक दिया। ''मैं आजाद हूं अपनी चमन में'' नारी सशक्तिकरण का युग प्रारंभ हुआ। नारी युक्त प्रतिभायें जागृत हो उठीं। वह इन्द्रलोक की सैर भी कर आयी, डॉक्टर बनी, वकील बनी, जज बनी, प्रधानमंत्री बनी, राष्ट्रपति बनी, विधायिका व मुख्यमंत्री बनी, नहीं बनी तो ममतामयी मां बनी, या कहें अपने को संभाले हुए अपनी ममता को ही खो बैठी। आज मां होते हुए भी बच्चे बेसहारा हैं। इनका बस चंद घंटों का मिलन होता है। आज कामकाजी महिलाओं की संख्या बढ़ती जा रही है। एक वर्ग ऐसा भी है, जिसे क्लबों, किट्टी पार्टियों में जाने से ही फुर्सत नहीं है। बच्चों का दुःख–दर्द बांटने वाला कोई सहारा नहीं है। एकाकी जीवन के कारण जीवन में एक नीरसता तथा भटकाव आ गया है, टीवी पर अपना अधिकांश समय बिताने लगा है। जिस कारण उसका रूझान सेक्स तथा हिंसा की ओर बढ़ रहा है। आज मां का स्थान आया ने तथा घर का स्थान सिनेमाघरों ने ले लिया है। आज मां के पास बच्चों के लिए स्वादिष्ट व्यंजन बनाने की फुर्सत नहीं, फास्ट फूड ही बच्चों के जीवन का आधार है, जो उनके स्वास्थ्य के लिए हानिकारक तथा भयंकर रोगों को जन्म देता है। पता नहीं भारत को किस की नजर लग गयी। वातावरण बिल्कुल उल्टा हो गया। नारी धर्म तथा अपनी विश्वधरा वाली संस्कृति से दूर ही नहीं अति दूर होती जा रही है। ईश्वर का भय खत्म होता जा रहा है। नारी सशक्तिकरण की लहर चली। नारी के लिए शिक्षा के द्वार खोल दिये गये, कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं बचा जहां नारी ने कदम न रखे हों। सफलता उसके कदम चूमने लगी। ऐसी महान नारियों को इस युग ने जन्म दिया, जिन्होंने देश का गौरव बन विश्व में अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाया।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.11

मातृदेवोभव से मातृहन्ताभव की ओर

मातृहन्ता पुरूष वर्ग फिर सक्रिय हो गया है और उसने मातृशक्ति के संहार की ऐसी योजना बनायी है, जिसका निर्माण आदिकाल से लेकर आजतक नहीं हुआ था। सारे भारत में भ्रूण हत्या का नृसंश दौर चल रहा है। मानव जाति के इतिहास में यह अकल्पनीय एवं अविश्वनीय था कि माता–पिता इतने बडे पैमाने पर बेटियों की हत्या करेंगे। भारत में नारी को जहां ब्रह्मा जैसा उंचा स्थान दिया गया है, उसे धरती से भारी माना गया है तो दूसरी ओर उसे जन्म से पहले ही मारने में लगे हुए हैं। कन्या भ्रूण हत्या करने वाले यह नहीं जानते कि वे मानव अस्तित्व को ही मिटा रहे हैं। एक ताजा अध्ययन के अनुसार पिछले बीस सालों में भारत में लगभग एक करोड़ कन्या भ्रूणों की हत्याएं हो गयी हैं। एक तरफ महिलाओं के उत्थान के लिए करोडों–अरबों रूपये खर्च किये जा रहे हैं तो दूसरी ओर पहले से भी अधिक बर्बरता पूर्ण तरीके से कन्याओं का वध हो रहा है। वैज्ञानिक उन्नति नारी जाति के लिए अभिशाप बनने लगी है। 99 प्रतिशत भावी माताओं को केवल इसलिए गर्भपात करवाना पडता है कि गर्भ में कन्या है। लगभग सभी लोग लड़का चाहते हैं किन्तु यदि लडकियां की नहीं होगी तो विवाह किससे होगा? वंश आगे कहां से चलेगा? नारी सृष्टि की शोभा है, धरती की गरिमा है। वेद में धरती को माता का स्थान प्राप्त है। हम सब उसकी संतान हैं।

माता भूमिः पुत्रो अहम् पृथिव्याः

दुर्गा सप्तसती में कहा गया है–

या देवी मातृरूपेण सर्वभूतेशु संस्थिता

वह मां के रूप में सब प्राणियों में स्थित है। कन्या के रूप में नवरात्रों में देवी के रूप में जगराता में पूरी साल उसकी पूजा करते हैं। फिर भी हम उसकी हत्या करते हैं। उसे जीवन में अमृत के समान बहने दें। नारी अमृत का झरना है। जयशंकर प्रसाद ने कामायनी में लिखा है–

पीयूश श्रोत सी बहा करो जीवन के सुंदर समतल में

नारी धरा का स्वर्ग है, उसे धरती पर स्वर्ग लाने दो। सुमित्रानंद पंत ने पल्लव में लिखा है–

विंदु मैथी तुम सिंधु अनंत, एक सुर में समस्त संगीत।
एक कलिका में अखिल बसंत, धरा में थीं तुम स्वर्ग पुनीत।।

जिस नारी को मातृशक्ति कहा जाता है, जिसे ब्रम्हा का पद प्राप्त है, उसे निरन्तर मार रहे हैं, जला रहे हैं। इसे ही कहा गया है–

''मातृदेवोभव से मातृहन्ता की ओर''।

उपसंहार

महाभारत काल में नारी को अपमानित होने हेतु विवश होना भी पडा। उदाहारणस्वरूप द्रौपदी के चीर हरण के पश्चात वह निरन्तर पतन के गर्त में गिरती ही गयी। इसको पैरों की जूती कहा गया और लिखा गया– ''नारी की छाया पडत अंधा होत भुंजग''। इसी अपमानित नारी को ''नरकस्य द्वारः'' ''स्त्री शूद्रो न धीयेतामिति श्रुतै'' क्या–क्या नहीं सुना नारी ने अपने लिए। प्रत्येक परिस्थिति को अपना ही प्रारब्ध मान झेलती रही। हर काल में नारी की अपनी दास्तां रही। घोर जुल्म व अत्याचार का शिकार बनी। अनेक यातनाएं सहीं। कभी भ्रूण हत्या तो कभी बाल विवाह तो कभी अनमेल विवाह, आजीवन विधवापन की पीडा या जीते जी सती होना, वैश्यावृत्ति या देवदासी या भेड बकरियों की तरह उनका व्यापार क्या–क्या नहीं सहा? ह्रदयहीन क्रूर निर्मम एवं संवेदनहीन पुरूष वर्ग ने मातृशक्ति को उसके बाल खींचते हुए सर्वोच्च सिंहासन से उठाकर धरती पर पटक दिया और घर की चारदीवारी में कैद कर दिया। वह बंदिनी बन गयी। पाणिनी काल में उसे ''असूर्यपृया'' कहा जाने लगा। अज्ञानी लोगों ने मनु महाराज के नाम से समाज को गुमराह किया कि स्त्री को वेद पढ़ने, यज्ञ करने, यज्ञोपवीत पहनने का हक नहीं है। नारी जाति का दमन एवं उस पर अकथनीय अत्याचार हजारों वर्ष तक जारी रहा। उसके विलाप को, उसके क्रंदन को, उसकी सिसकियों को किसी ने नहीं सुना और उसकी स्थिति खूंटे से बंधे हुए पुष्प की भांति कर दी। जैसे कि वो माता, नारी, स्त्री नहीं हो अपितु गाय, बकरी, भैंस या घोड़ी हो।

महर्षि दयानंद सरस्वती ने जब स्त्री जाति पर हो रहे इस घनघोर अन्याय को देखा तो उनका ह्दय कांप उठा कि जिसे हम मां कहते हैं, बेटी कहते हैं, बहन कहते हैं उसका इतना अपमान। तो इसके लिए उन्होंने सर्वप्रथम समाज के लोगों को समझाते हुए महर्षि मनु के शब्दों में कहा कि–

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः

अर्थात् जहां नारी की पूजा होती है, वहां देवता निवास करते हैं और जिस घर में नारी का अपमान होता है, वहां सभी क्रियाएं निष्फल हो जाती हैं। तो फिर नारी सशक्तिकरण की लहर चली। नारी के लिए शिक्षा के द्वार खोल दिये गये तथा वह हर क्षेत्र में सफल होने लगीं। आज भारतीय संस्कृत और सभ्यता अगर जीवित है तो केवल इसलिए कि हमनें नारी को शक्ति के रूप में पूजा है। वह सौम्य, त्याग, ममता, साहस की अदम्य मूर्ति है।

संदर्भ सूची

1. सरस्वती, महर्षि दयानंद. यजुर्वेद भाषा भाष्ये. सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभाः दिल्ली.
2. शर्मा, पंडित रघुनंदन. वैदिक संपत्ति. वेद ज्योति प्रेसः दिल्ली.
3. कुमार, प्रो0 सुरेन्द्र. विशुद्ध मनुस्मृति. आर्य साहित्य प्रचार ट्रस्टः दिल्ली.
4. सुधेन्दु, अमियचन्द्र शास्त्री. शतपथ ब्राम्हण. महालक्ष्मी प्रकाशनः आगरा.
5. शास्त्री, पं0 शिवकुमार. श्रुति सौरभ. समर्पण शोध संस्थानः गाजियाबाद.
6. सरस्वती, महर्षि दयानंद. सत्यार्थ प्रकाश. वैदिक पुस्तकालयः दयानन्दाश्रम, अजमेर.
7. प्रेमी, डॉ0 गंगा सहाय. वैदिक सूक्ति संग्रह. हरीश प्रकाशन मंदिरः आगरा.
8. महर्षि चाणक्य. चाणक्य नीति. आर्य साहित्य प्रचार.
9. आचार्य प्रेमभुक्षि. नारी सर्वस्व. सत्य प्रकाश मथुरा.

12

रवीन्द्र संगीत का व्यवहारिक पक्ष

निशा सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, संगीत विभाग
कनोहर लाल महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मेरठ
ईमेलः nishachaudharyg@gmail.com

सारांश

'वह सुर ही तो है जो भोर के निशब्द पंछी के आगमन की सूचना देता हैं।' ये शब्द हैं कविरत्न रवीन्द्रनाथ ठाकुर के जिन्होंने संगीत की एक नई विद्या को जन्म दिया। उसी विद्या का नाम है 'रवीन्द्र संगीत', जिसका प्रभाव समूचे पूर्वी भारत पर तो है ही, अन्यत्र भी उसे गाया–बजाया जाता है। सन् 1825 ई0 को 'रवीन्द्र संगीत' शब्द सर्वप्रथम प्रयुक्त किया गया।

बंगाल के ग्रामीणों एवं नगरवासियों का प्राण संगीत है। हार, बाठर, खेत–खलियानों के लिए वहाँ अलग–अलग तरह के गीत गाए जाते हैं। बंगाल के ग्राम गीत में रागों की छाप दिखायी देती है–विशेषकर वहाँ के 'कीर्तन' में। बंगाल का कीर्तन संगीत जगत में विशेष महत्व रखता है।

रवीन्द्रनाथ टैगोर कहते थे– ''आज का मनुष्य गीतों की वाणी पर सुर को खड़ा कर देना चाहता है, पर मैं चाहता हूँ सुर पर वाणी को सजाना। वह सुर को व्यक्त करने के लिए वाणी की माला सजाना। वह सुर को व्यक्त करने के लिए वाणी की माला पिरोते हैं, पर मैं वाणी को बाहर लाने के लिए सुर की माला पिरोता हूँ। साधारण कविता पढ़ने के लिए होती है, पर गीत–काव्य केवल सुनने की चीज है।''

रवीन्द्रनाथ जी का कहना था कि यदि बंगाल के लोग मेरा सम्पूर्ण साहित्य भुला भी देंगे, तब भी मेरे गीतों को वे अवश्य याद रखेंगे। उन्हें मेरे गीत गाने ही पड़ेंगे। उन्होंने अपील के रूप में कहा – 'सभी गीत मेरे गीतों के निकट हैं।

मुख्य बिन्दु

रवीन्द्र संगीत, व्यवहार, रविन्द्रनाथ टैगोर, लोक–गीत, ग्रामीण–गीत, शास्त्रीय, शैलियाँ, शास्त्रीय–संगीत, देशी–संगीत, ऋतु, बंगाल, सुर, वाणी।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी जाज्वल्यमान प्रतीक रवीन्द्रनाथ ने किशोरावस्था से संगीत की साधना प्रारम्भ की। उन्होंने नन्हें बालक–बालिकाओं को भारतीय संस्कृति के उच्च आदर्शों में ढालने का संकल्प लेकर ही जीवन–यापन किया। इस संकल्प की पृष्ठभूमि में उनके पिता संसार में रहकर भी संसार की मोह–माया के अकर्षण से निर्लिप्त रहे। ठाकुर परिवार के किसलय से कोमल व बुद्धिदीप्त बालक–बालिकाओं का बाल्यकाल संगीत व साहित्यमय वातावरण में विकसित होता रहा। उन्होंने ब्रह्म धर्म स्वीकार किया था। वहाँ प्रार्थना व भजन गाने के लिए उन्होंने सगीतज्ञ नियुक्त किए। उन्होंने अच्छे–अच्छे संगीतज्ञों को आमंत्रित किया व घर पर संगीत की बैठकें आयोजित की। इससे रवीन्द्रनाथ सबसे अधिक प्रभावित हुए। पत्नी की अस्वथता के कारण देवेन्द्र नाथ स्वयं चिंतित रहते थे। रवीन्द्रनाथ उनके सबसे छोटे लड़के थे।[1] बालक को माँ का दुलार पूर्णरूपेण नहीं मिल रहा था, यह वे भली–भांति समझते थे। इसलिए अपनी ओर से वे सदैव प्रयत्नशील रहे कि जैसे भी हो, बच्चों का लालन–पालन व अध्ययन विधिवत हो।

रवीन्द्रनाथ के कोमल हृदय पर शास्त्रीय संगीत का प्रभाव पड़ने लगा। वे मन लगाकर न कभी इस लुका–छिपी में उनका प्रखर ज्ञानरूपी उपवन संगीत से सुमनों से सुरभित होता रहा। बचपन से उन्होंने अच्छे–अच्छे संगीतज्ञों को ध्रुपद, ख्याल, टप्प, ठुमरी, तराना गाते सुना। उन शैलियों में उन्हें ध्रुपद सबसे अधिक पंसद आया। इसका कारण था कि ख्याल की बंदिशों की तुलना

में ध्रुपद की बंदिश बड़ी होती है, अर्थात् इसमें कम से कम चार पद होते हैं जो स्थायी, अंतरा, संचारी और आभोग आदि कहलाते हैं। इन विभिन्न पदों की स्वरलिपि का क्रम भी विधिवत होता है। इसके शब्दों में भावों की गहराई व चलन में गंभीरता होती है। इसमें अनावश्यक आलाप, तान नहीं होते। ख्याल गायन में आलाप, तान की व अनावश्यक शास्त्र की दुहाई उन्हें अच्छी न लगी। उन्होंने लिखा था–हमारे देश का संगीत इस सीमा तक शास्त्रगत, व्याकरणगत व अनुष्ठानगत हो गया है और स्वाभाविकता से इतनी दूर चला गया है कि अनुभव के साथ संगीत का सम्बन्ध–विच्छेद हो गया है, केवल कुछ सुर समष्टि युक्त कर्दम (कीचड़) एवं राग–रागिनी के ढाँचे मात्र अवशिष्ट रह गये है। संगीत मिट्टी की प्रतिमावत् हो गया है, उसमें ह्रदय नहीं है, प्राण नहीं है। इस प्रकार एक ही साँचे में ढली अपरिवर्तनशील संगीत की जड़ प्रतिमा हमारे देवी–देवताओं की मूर्तियों की तरह बहुत काल से चली आ रही है।

उनके मन में यह बात खटक रही थी कि संगीत अपनी शास्त्रीयता जटिलता के कारण केवल वर्ग विशेष के आनन्द और मनोरंजन की वस्तु है, समाज के साथ उसका कोई सम्पर्क नहीं है उन्होंने कहा संगीत इतना प्राणवान है कि समाज की उम्र के साथ वह भी बढ़ता चले, समाज के परिवर्तन के साथ–साथ परिवर्तित हो, समाज पर अपना प्रभाव विस्तृत कर सहे व उस पर समाज का प्रभव प्रयुक्त होवे[2] और इसी उद्देश्य से उन्होंने संगीत के सर्जन कार्य को अलग ढाँचे में ढालना प्रारम्भ किया। संगीत का रूप व्यवहारिक हो, यह उनकी साधना का मानो लहय बन गया। मानव जीवन में पाले जाने वाले दुःख–सुख, रोग विस्मय आदि को रवीन्द्रनाथ ने संगीत में भी ढूँढने का सदैव प्रयास किया। उनके दृष्टिकोण से रागों में विभिन्न भावनाओं की धारा–भी उसी प्रकार स्वाभाविक एवं प्रच्छल रूप से प्रभावित होती रहती है, जिस प्रकार जीवन में दुःख–सुख और इसीलिए मूल्तानिनी, यमन, कल्याण, केदार इत्यादि रागों में किन स्वरों के विशेष प्रयोग से भावनाओं की सृष्टि संभव है, इसे उन्होंने अध्ययन का विषय बनाया। संगीत महाविद्यालयों में आलाप तानों का अभ्यास व स्वर विस्तार पर ही अधिक जोर दिया जाता है। भाषा पर नहीं। अच्छी शब्दार्थक के अभाव को उन्होंने अपने गीतों से पूर्ण किया। वे सदा यही चाहते थे अच्छा संगीत सुनकर लोग केवल यह न कहें 'वाह इसके स्वर कितने मधुर हैं–परन्तु लोग यह भी कहना सीख लें, 'कि वह! कितने सुन्दर भाव हैं।'

वही संगीत सही गाने में संगीत है जो भावनाओं की अभिव्यक्ति लिए हुए हो। भावना विहीन संगीत प्राणहीन देह के समान है। मूकाभिनय में मौन रहकर केवल मुद्राओं व संकेत द्वारा संभाषण किया जाता है– संगीत के क्षेत्र में आलाप का भी यही कार्य है। इतना अवश्य है कि स्वरों का चयन एवं उनका प्रयोग इतना सुगढ़ हो कि भावाभिव्यक्ति सहज हो उठे। समकालीन संगीतज्ञ एवं संगीत रसिक जन उनकी आलोचना करते थे किन्तु गुरूदेव ने संगीत के विभिन्न अंगों पर जितना चिंतन एवं विश्लेषण किया है, उतना शायद ही किसी ने किया हो।[3]

गुरूदेव की अनुभूति बड़ी गहरी एवं चिंतन शैली बड़ी प्रखर थी। उन्होंने मनन करके जिस सत्य की उपलब्धि की थी–उस सत्य में उनकी मौलिकता के साथ संस्कृति की आस्था भी झलक पड़ती है। उनका विचार था कि रागों में रस–निष्पत्ति की परियोजना व क्षमता स्वयमेव छिपी हुई है। वे चाहते थे कि सभी संगीत प्रेमी विभिन्न रागों के अंदर छिपे हुए रस को ढूँढ निकाले। पूर्वी के स्वर सुनते ही ह्रदय में संध्याकाल का आभास क्यों होता है? और भैरव राग के स्वर सुनते ही प्रभात–काल का सौन्दर्य क्यों उपस्थित होता है? यह मनन करने की आवश्यकता है। क्या यह केवल पुराने संस्कारों का ही परिणाम है? उन्होंने अपनी अनुभूति के द्वारा इसका विश्लेषण किया। इन दोनों रागों में कोमल स्वरों की अधिकता है। अंधकारमय वातावरण से प्रातःकाल का प्रकाश धीरे–धीरे आँखें खोलता है। अतएवं इस काल में गाए जाने वाले रागों में कोमल स्वर–स्वर अपने पहले के स्वरों से समीप रहते हैं एवं कोमलता के साथ गए जाते है। संध्याकाल में प्रकाश पुनः धीरे–धीरे पलकें मूदँता हुआ अंधकार की गोद में समा जाता है, अतएवं स्वर भी तीव्रता से कोमलता की ओर परिवर्तित होते हुए एक अलौकिक गोधूलि बेला के सौन्दर्य का निर्माण करते हैं। साधारणतः कन्दन के ये स्वर कोमल स्वर स्थानों पर ही लुढ़कते, चले जाते हैं और हास्य के 'हा हा हा' तीव्र स्वर, स्थानों पर उछलने लगते हैं। करूणापूर्ण स्वरों से खिंचाव है, सुखमय, स्वरों में चंचलता है, दुःख रात्रि की गंभीरता के समान कोमल स्वरों के आश्रय में धीरे–धीरे व्याप्त होती है, सुख दिवस की चंचलता व तीव्रता के लिए कभी–कभी एक–एक, दो–दो स्वर छोड़–छोड़ कर कूदती–फांदती स्वरित होती है। रवीन्द्रनाथ ने भारतीय रागों में इन भावों को व्यक्त करने की क्षमता देखी।[4]

दुःख–सुख की मंजुल अभिव्यक्ति के लिए विलम्बित व द्रुततालका प्रयोग होता है। वैसे भावना की अभिव्यक्ति ही मुख्य उद्देश्य होना चाहिए। स्वर व ताल का प्रयोग गौण रूप में हो ऐसा वे चाहते थे। भावना स्वाधीन रूप से प्रबल हो अन्यथा स्वर व ताल उसे चारों ओर से घेर लेते है। गायक सम में आकर मिल करते हैं। उनके विचार से यह प्रतिबन्ध संगीत की स्वभावित गति व प्रगति का रोधक है। एक प्रकार से सोचा जाए तो लगता है जैसे सिर पर जल से भरे कलश को लेकर यदि नृत्य किया जाए और हजार मुद्राओं द्वारा नृत्य करने पर भी एक बूँद पानी न गिरने पावे यह भी वैसा ही कष्ट साध्य व्यायाम है। इसी प्रकर नृत्य की स्वाभाविक गति ही अच्छी लगती है। उछल–उछल कर विभिन्न कठिन प्रकारों के बाद सम में मिलना व्यायाम सा ही प्रतीत होता है। नृत्य क्या, वादन क्या और गीत क्या, सभी में प्रदर्शन की कुशलता दिखाने का उद्देश्य नहीं होने चाहिए, कुछ कविताएँ ऐसी भी लिखी जाती हैं जिन्हें सीधी ओर से या उल्टी ओर से पदकर एक ही अर्थ पाया जाता है। यह काव्यगत शब्दों की कुशलता दिखाने के लिए ही अच्छे लगते हैं। अन्य उद्देश्य की पूर्ति नहीं कर सकते है।[5]

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.12

रवीन्द्र संगीत, शास्त्रीय व देशी संगीत के बीच का माना जा सकता है। उनके गीतों में शास्त्रीय संगीत के धुनों का आभास मिलता है, एवं इस प्रकार के गीतों में राग रूपों की छाया के साथ–साथ साहित्यिक आभा एवं लय व ताल की विशिष्टता भी है। उन्होंने कई गीतों के बीच–बीच में लय का परिवर्तन करके या लय का परित्याग करके कई गीतों में विविधता लाने का प्रयास किया है। इसीलिए उनके गीत जनप्रिय हुए। कला–कला के लिए या कला, जीवन के लिए यह समस्य सर्वसाधारण के सामने उपस्थित हो सकती है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर का मत था कि कला जीवन के लिए हो। मानव जीवन को ऐसे ढाँचे में ढालना होगा कि जीने में आनन्द हो। उनके गीत की ऐसे बने कि जीवन के विभिन्न समयों पर ये गाये जा सकें।[6]

रवीन्द्र संगीत इसलिए संगीत प्रेमी लोगों के अधिक समीप है, क्योंकि उनके ऋतु गीत वर्ष भर गाये जा सकते हैं। उन्होंने ग्रीष्म से लेकर बंसत ऋतु तक सभी ऋतुओं पर गीत लिखे है। वर्षा के गीत सबसे अधिक है–वर्षा के आरम्भ होते ही मन मेघों का साथी बनकर उड़ने लगता है। इसी से पुलकित होकर उन्होंने लिखा 'मन मोर मेधेरे संगी' कहते हैं महादेव ने छः रागों की सृष्टि की। शायद 6 ऋतुओं के लिए ये 6 राग निर्मित किये गए हों। दाहना ने 6 रागों को सीखकर 6 ऋतु बनाया व हर एक के लिए एक–एक राग निर्दिष्ट कर दिया। बंसत के लिए बंसत राग, वर्षा के लिए मेघ, हेमंत के लिए श्री, शरत के लिए भैरव, शरीर के लिए नटनारायण और ग्रीष्म के लिए पंचम।[7]

सन्दर्भ सूची

1. सेन, डॉ0 अनीता. रवीन्द्र संगीत. पृष्ठ **251–255.**
2. रवीन्द्र रचनावली. भाग–14. पृष्ठ **886.**
3. नारायण, बंसत. संगीत विशारद. पृष्ठ **680.**
4. गर्ग, डॉ0 लक्ष्मी नारायण. निबन्ध संगीत. पृष्ठ **581.**

13

संगीत का व्यावसायिक महत्व

डॉ0 अल्पना
असिस्टेंट प्रोफेसर, संगीत विभाग
कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ
ईमेलः alpanamusic30@gmail.com

सारांश

मानवीय भावनाओं एवं संवेदनाओं को स्वरों द्वारा अभिव्यक्त करने की अविरल धारा ही संगीत है। संगीत को एक उपास्य विद्या माना जाता है, जिसका अन्तिम लक्ष्य मानवीय मूल्यों से परे ईश्वर में विलीन होना है, चूँकि एक सच्चा संगीतज्ञ कलात्मक अपनी कला को जीविका का साधन न समझकर मोक्ष प्राप्ति का साधन समझता है लेकिन साथ यह भी सत्य है कि उसे अपनी कला साधना के हेतु जीवित रहने के लिए किसी न किसी रूप में व्यवसाय की ही आवश्यकता पड़ती है। चूँकि आज हम उस विशिष्ट दौर में है, जहाँ हर व्यक्ति जीवन की पहली परिपक्व अवस्था से ही अपने लिए आय के स्त्रोत के मार्ग पहले तैयार करता है, बाद में उस पर चलना शुरू करता है, ऐसी स्थिति में कैसे संगीत को व्यवसाय से अलग कर सकते हैं चूँकि पहले पायदान पर व्यक्ति के खुद के जिंदा रहने का संघर्ष है और बाद में दूसरी चीज इसलिए यह कहने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए कि हम संगीत का प्रचार–प्रसार करते हुये भी व्यवसाय कर सकते हैं। परन्तु इस शर्त के साथ कि संगीत के मूल तत्वों का अनुशासन से पालन करें। इसलिए यहाँ यह जरूरी हो जाता है कि संगीत के व्यवसाय के अन्य दृष्टिकोणों की ओर भी सोचा जाये और जो हमारे वर्तमान स्वरूप में प्रत्यक्ष है। उनको हम सहज अपनाकर तथा पाठ्यक्रम में विशेष प्रशिक्षण के साथ लागू करे जिससे भावी पीढ़ी को रोजगार मिले और वह घबराएं नहीं, बल्कि प्रोत्साहित हो, इस क्षेत्र में आने के लिए।

मुख्य बिन्दु

संगीत, व्यवसाय, आयाम, व्यावसायीकरण, कलाकार, कला, आवश्यकता, समय, जीवन यापन, वर्तमान, महत्व, क्षेत्र, जीवन निर्वाह।

जब बात व्यवसाय के महत्व की हो रही है तो मुझे ये पक्तियां यहाँ सटीक लग रही है कि– ''भूखे पेट न होय भजन गोपाला, यह लो अपनी कण्ठी माला।'' अर्थात् इसका तात्पर्य है कि भूखे रहकर कभी भजन नहीं किये जा सकते है, चूँकि पृथ्वी के हर जीव को खाने की आवश्यकता होती है और इसी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये ही व्यवसाय का प्रादुर्भाव हुआ। सभ्यता और विकास के साथ–साथ व्यवसाय ने पहले की अपेक्षा आज प्रत्येक क्षेत्र में अपना स्थान कायम किया है। आज शायद ही कोई ऐसा क्षेत्र होगा जिसने व्यावसायिक स्वरूप धारण ना किया हो। क्योंकि समाज की मर्यादा का पालन करने हेतु एवं समाज की धारा में प्रवाहमान होने हेतु, उसे समय–समय पर बदलते परिवेश में परिवर्तित होते रहने के लिए एवं अन्य सामाजिक जीवन संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु मनुष्य को कोई ना कोई व्यवसाय अपनाना पड़ता है। जो कि मनुष्य के जन्म के साथ ही तथा पृथ्वी पर मानव उत्पत्ति के कुछ समय बाद से ही देख सकते है। समाज में रहने के लिए उसे जीवनयापन का कुछ न कुछ सहारा ढूंढना ही पड़ता है। जीवन यापन के लिए धन किसी न किसी कला या उद्योग द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता हैं, जैसे–संगीत कला अन्य ललित कलाएं, सिलाई, कारीगारी, लेख, खुदाई आदि।

चूँकि व्यवसाय का अर्थ ही है कि कोई ऐसा कार्य करना जिससे जीवन में उन्नति हो सके एवम् जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति और जीविकोपार्जन हो सके। संगीत में व्यवसाय के महत्त्व के विषय में कहा जा सकता है कि व्यवसाय मात्र जीविकोपार्जन या अर्थोपार्जन ही नहीं, अपितु यह व्यक्ति विशेष के विचार, प्रवृतियों, कौशल, जीवन शैली व समाज में उसके योगदान को दर्शाता है। जैसा कि हम सभी जानते है कि वर्तमान समय में सामान्य जीवन शैली भी इस सीमा तक जटिल हो चुकी है कि प्रत्येक व्यक्ति

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.13

को समाज में रहते हुए अपने दैनिक जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए भी कोई न कोई व्यवसाय अवश्य अपनाना पड़ता है। इसलिए संगीत साधना में लीन व्यक्ति भी इन नैतिक कठोरताओं के व्यास से बाहर पग नहीं रख सकता अर्थात् उसके लिए भी न्यूनाधिक रूप में जीविकोपार्जन करना अति आवश्यक होता है। इसी कारण से पवित्र संवेदात्मक व अलौकिक आनन्द प्रदान करने वाली ललित कला को भी व्यवसायों की श्रृंखला में सम्मिलित होना पड़ा।

संगीत जिस प्रकार आध्यात्मिकता व रंजकता के क्षेत्र में अपना लक्ष्य व उपादेयता रखता है, उसी प्रकार व्यावसायिक क्षेत्र में भी इसका अपना महत्व है। कहने का तात्पर्य है कि संगीत जहाँ एक ओर हमें रंजकता व आध्यात्मिक की ओर अग्रसर करता है, तो वहीं संगीत हमें अर्थ की प्राप्ति कराता है और इस अर्थ की प्राप्ति हमें संगीत को 'व्यवसाय' के रूप में अपनाने से होती है। वैसे अगर देखा जाये तो धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चारों पुरुषार्थो में से 'अर्थ' पुरूषार्थ का एवं संगीत का सम्बन्ध प्राचीन काल से लेकर वर्तमान काल तक रहा है, किन्तु समय समय पर होने वाले परिवर्तनों ने आज इसे व्यवसाय का नाम दे दिया है, जिस प्रकार अन्य विषयों से जुड़ें लोग अपनी–अपनी योग्यतानुसार जीविका प्राप्त करने के लिए व्यवसाय करते है, उसी प्रकार संगीत विषय से जुड़े लोग भी अपना जीवन यापन करने के लिए संगीत को व्यावसायिक रूप देकर संगीत से जीविकोपार्जन करते हैं।

एक संगीतकार कला द्वारा प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से धन अर्जित करके अपना व अपनी कला का पोषण करता है तो वह कोई अनुचित कार्य नहीं करता क्योंकि अन्य लोगों की भाँति उसकी भी जीवन की मूलभूत आवश्यकताएँ, रोटी, कपड़ा और मकान आदि हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि संगीत हमें मनोरंजन व आध्यात्मिकता प्रदान करता है लेकिन एक कलाकार कल्पना लोक में कब तक विचरण कर सकता है आखिर में उसे जीवन की कटु समस्याओं का सामना करना ही पड़ेगा।

इसके अतिरिक्त कार्य संतुष्टि के नियम की दृष्टि से भी अपनी शारीरिक, मानसिक, सामर्थ्य व रूचि के अनुरूप ही व्यवसाय अपनाना चाहिए। इस कारण संगीत प्रेमी संगीत के विद्यार्थी आदि के लिए इसे ही व्यवसाय के रूप में अपनाना उचित भी है। इसलिए संगीत कला को जीविकोपार्जन का माध्यम बनाकर शिक्षा द्वारा, प्रदर्शन द्वारा, ध्वन्यांकन द्वारा एवं लेखन द्वारा सुरक्षित रखना। वर्तमान समय में तेजस्वी कलाकारों ने संगीत को व्यवसाय का माध्यम बनाकर ख्याति प्राप्त की और इसे नये नए रूपों में प्रस्तुत किया। क्योंकि एक कलाकार या कोई भी व्यक्ति कितना ही सिद्धान्तवादी व महान क्यों न हो बिना 'व्यवसाय' के वह अपने लक्ष्य की प्राप्ति कभी नहीं कर सकता। वास्तव में व्यवसाय जीवन की गति है। अतः प्रत्येक व्यक्ति के साथ वह स्वभाविक रूप से जुड़ा हुआ है। प्रयत्न पूर्वक भी उसे जीवन से अलग नहीं किया जा सकता इसीलिए यदि कलाकार जीविकोपार्जन के लिए व्यवसाय करता है तो वह कोई अनुचित कार्य नहीं करता क्योंकि कलाकार चाहें संगीतकार हो अथवा समाज सेवी, जीवनयापन हेतु उसे कुछ न कुछ प्रवृत्ति रखनी ही होगी अतः यदि वह कला के माध्यम से भी जीवनयापन करता है तो यह कला के प्रति अन्याय नहीं है।

जबकि अगर गौर करें तो आज हम वक्त के ऐसे दौर से गुजर रहे हैं, जहां विकास और व्यवसाय परस्पर पूरक बन गए हैं। यह व्यवसाय यदि निर्माणक क्षेत्रों से जुड़ा हो तो सहज स्वीकार्य होता है परंतु यदि सृजन क्षेत्रों का व्यवसायीकरण हो तो वह अस्वीकृत होने के साथ–साथ असम्मानित भी होता है। जब की वर्तमान समय में सृजित कलाओं के शास्त्रीय संगीत के उस पहलू पर बल दिया जा रहा है जो आम रूप से व्यवसाय के साथ संबद्ध हो जाता है। जिसमें व्यावसायिक–अव्यावसायिक पक्ष से गुजर कर नए आयाम जैसे कलाकार, शिक्षक, लेखक, प्रकाशक तथा तकनीक संगीत को सीधे व्यवसाय से जोड़ते हैं। जो अपनी अपनी प्रतिभा व अधिकार क्षेत्र के द्वारा संगीत के स्वरूप का प्रकटीकरण व प्रचार प्रसार करते हैं इसमें कला का प्रायोगिक रूप कला का संरक्षण रूप कला को शिक्षा के रूप में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचाने का कार्य तथा अनुसंधान व लिखित रूप से वर्तमान संगीत के विभिन्न पहलुओं को सामने लाना और इसी अक्षुण परंपरा को संपूर्ण जनमानस हेतु सुलभ बनाना और आज के तकनीक को संगीत के साथ जोड़ना ही संगीत में व्यवसाय के महत्व को दर्शाता है आज के समय में सभी लोगों के लिए व्यवसाय जरूरी है क्योंकि जब व्यक्ति सीधे तौर पर संगीत से जुड़ा है तो उसे अपने व्यवसाय के लिए किसी दूसरे क्षेत्र में कार्य खोजने के बजाय जिस क्षेत्र में वह स्वयं रचा बसा है तो फिर उसमें ही व्यवसाय खोजना अच्छा है इसलिए आज की पीढ़ी संगीत में अपनी रूचि के अनुसार संगीत से प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप में व्यवसाय के अवसर तलाश सकती है जो कि आज वर्तमान समय की मांग है।

संगीत के विभिन्न लक्ष्यों एवं उपादेयताओं पर दृष्टिगत करने के पश्चात् यह पता चलता है कि यदि संगीत की आध्यात्मिक व रंजकता की दृष्टि से अपनी महत्ता है तो व्यावसायिक परिप्रेक्ष्य में भी उसकी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका है। संगीत यदि मानव को आध्यात्मिकता की ओर अग्रसर करता है तो उसे वहाँ पहुँचने से पूर्व व्यावसायिक क्षेत्र से गुजरना पड़ेगा। क्योंकि बिना उद्योग एवं व्यवसाय के प्राणी ना तो मन का रंजन कर सकता है और ना ही आध्यात्म की चरम अवस्था की विमुख स्थिति को प्राप्त कर सकता है। यह कला जहाँ एक और पीढ़ी–दर–पीढ़ी सुरक्षित है वहीं जीवन निर्वाह का भी माध्यम हैं। अतः संगीत में व्यवसाय का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस प्रकार कला तकनीक व व्यवसाय यह सब एक दूसरे से जुड़े है। स्पष्ट है कि व्यवसाय और कला का जिस तरह चोली दामन का साथ है। उसी तरह कला के व्यावसायीकरण की भी समाज को उतनी ही आवश्यकता है। अतः व्यवसाय का कला पक्ष व कला पक्ष का व्यवसाय दोनों ही एक दूसरे से जुड़े है। व्यवसाय ने इसे पंख दिये और कला के व्यवसाय को उन्नति के शिखर पर पहुँचा दिया। व्यवसाय की सफलता के लिए व्यवसाय के कला पक्ष को उजागर करना उसे जीवन देने के समान है।

संगीत की भावी पीढ़ी को प्रोत्साहित करना है कि संगीत व्यावसायिक दृष्टिकोण की कसौटी पर भी खरा उतरता है इसलिए संगीत को व्यवसाय के रूप में भी अपनाना चाहिए इससे संगीत कला का संवर्धन एवं संरक्षण भी होगा और संगीत एवं व्यवसाय दो अलग–अलग चीजें ना रहकर वे आपस में जुड़ सकेंगे। तब वास्तव में संगीत में व्यवसाय के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में बदलाव आ सकेगा।

सन्दर्भ सूची

1. शर्मा, डॉ0 कविता. संगीत के क्षेत्र में व्यावसायिक सम्भावनाएँ एक विवेचनात्मक अध्ययन. पृष्ठ 5, 6, 11, 12.
2. दत्ता, डॉ0 पूनम. भारतीय संगीत शिक्षा और उद्देश्य. पृष्ठ 163.
3. शर्मा, डॉ0 जीतराम. आधुनिक व्यावसायिक हिन्दुस्तानी शास्त्रीय गायन. पृष्ठ 30.
4. https://www.anubooks.com.
5. https://www.rachanakar.org.

14

प्रवासी महिला श्रमिकों का सामाजिक बहिष्करण

प्रतिमा चौरसिया

असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग

कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ

सम्बद्धः चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ

ईमेलः pratimachaurasia100@gmail.com

सारांश

प्रवासन अध्ययनों में महिलाओं के प्रवास संबंधी अवधारणा एवं साहित्य का प्रतिनिधित्व सदैव गौण था तथा इसे मुख्यधारा के प्रवासन अनुसंधान के एक भाग के रूप में नहीं समझा जाता था क्योंकि अधिकांश पितृसत्तात्मक समाजों में सामाजिक और लिंग संबंधी मानदंड महिलाओं की गतिशीलता व संसाधनों को प्रतिबंधित एवं निर्धारित करते थे। प्रवासन संबंधी पुरुषवादी साहित्य में महिलाओं की श्रम आधारित गतिशीलता की अदृश्यता के कारण देश के आर्थिक विकास में किए गए उनके योगदानों को निष्क्रिय रूप में देखा जाता हैं तथा महिला श्रमिकों को प्रवासन के दौरान व प्रवासन के पश्चात् अनेक चुनौतियां जैसे कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न, लैंगिक भेदभाव, कार्य का दोहरा बोझ, तस्करी, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य समस्या आदि का सामना करने के साथ ही सामाजिक–सांस्कृतिक वर्जना के रूप में सामाजिक बहिष्करण का शिकार होना पड़ता है। प्रस्तुत शोध पत्र वर्णनात्मक शोध प्रारचना के माध्यम से द्वितीयक आंकड़ों के आधार पर महिला प्रवासी श्रमिकों की विडंबना को वर्णित करने का प्रयास करता है।

मुख्य बिन्दु

प्रवासी महिला श्रमिक, सामाजिक बहिष्करण, मानव अधिकार, लैंगिक भेदभाव, संरक्षण।

प्रस्तावना

प्रवासी महिलाओं के भारी बहुमत के बावजूद प्रवासन से संबंधित साहित्य जेंडर आधारित प्रवासन को संबोधित करने में विफल रहा क्योंकि जनगणना एवं राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के अंतर्गत उत्तरदाताओं को प्रवास का सिर्फ एक ही कारण देना आवश्यक होता था अतः कामकाजी महिलाएं जो विवाह के लिए पलायन करती थी, उनके श्रम आधारित प्रवासन पर ध्यान केंद्रित नहीं किया जाता था भले ही वो विवाह के पश्चात कार्य करती थी। प्रवासन में महिलाओं की सहयोगी स्थिति, प्रवासन के सिद्धांतों के विश्लेषण में संरचनात्मक असंतुलन की ओर संकेत देते थे तथा प्रवासन के प्रमुख सिद्धांत प्रवासन प्रवाह की व्याख्या में सिर्फ उन सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक कारकों को स्पष्ट करते थे जहां प्रमुख रूप से पुरुष प्रवासियों पर ध्यान केंद्रित किया जाता था परंतु पिछले कुछ दशकों से अधिकांश देशों में पूंजीवाद के एकीकृत व्यवस्था से उपजे हुए संभावनाओं के कारण महिलाओं के श्रम आधारित प्रवासन में वृद्धि हुई तथा 1980 के दशक से ही महिला प्रवासन पर ध्यान केंद्रित करने के लिए अध्ययन शुरू हुआ। इस दृष्टिकोण को 'प्रवासन के नारीकरण' के रूप में जाना जाता है परंतु प्रवासी महिलाएं, श्रमिकों के भीड़ में अदृश्यता एवं पक्षपात का शिकार होती हैं तथा कार्यस्थल पर लैंगिक भेदभाव, मातृत्व लाभ एवं स्वच्छता के अभाव के रूप में उन्हें अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

प्रवासी महिला श्रमिकों की चुनौतियां

प्रवासी महिला श्रमिकों के सामाजिक नेटवर्क व सामाजिक पूंजी का सीमित क्षेत्र–

प्रवासन को प्रमुख रूप से आजीविका संवर्धन की एक रणनीति के रूप में देखा जाता है। सक्रिय आजीविका रणनीतियों के एक भाग के रूप में प्रवासन भी सामाजिक संदर्भ, मानदंड, लिंग, विचारधारा तथा जाति संरचना द्वारा निर्धारित होता है, जो यह

स्पष्ट करता है कि 'कौन','कहां' एवं 'किन दशाओं' में प्रवास करेगा। एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रवासन में सामाजिक नेटवर्क एक संरचना प्रदान करते हैं जिसके माध्यम से संभावित प्रवासियों को उपर्युक्त संसाधन प्राप्त होते हैं जो प्रवासन की लागत को कम कर व्यक्तियों को अपना देश छोड़ने के लिए प्रेरित करते हैं तथा गंतव्य देश में समायोजन को सरल बनाते हैं। भारत में महिला प्रवासी अपेक्षाकृत असुरक्षित होती हैं मुख्य रूप से यदि वे स्वतंत्र रूप से पलायन करती है तब यह सामाजिक नेटवर्क प्रवासन के लिए निर्णय लेने की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पुरुषों की तुलना में महिला प्रवासी अपने व्यक्तिगत नेटवर्क जैसे रिश्तेदार, मित्र व पड़ोसी आदि पर अधिक विश्वास करती हैं क्योंकि प्रवास के जोखिम के विषय में मानदंड व विश्वास विशेष रूप से महिलाओं के लिए मार्मिक है इसलिए वो प्रवासन के लिए सुरक्षित नेटवर्क का प्रयोग करती हैं अतः पुरुषों की तुलना में महिला श्रमिकों के पास सामाजिक नेटवर्क व सामाजिक पूंजी का क्षेत्र सीमित होता है।

'प्रवासी श्रमिक' व 'महिला' के रूप में दोहरा भेदभाव–

व्यक्तिगत सामाजिक नेटवर्क की सहायता से श्रम बाजार में प्रवेश करने के पश्चात भी प्रवासी महिला श्रमिकों को 'प्रवासी श्रमिक' व 'महिला' दोनों ही रूपों में भेदभाव का सामना करना पड़ता है। जहां कहीं भी बड़े पैमाने पर प्रवासन होता है, वहां प्रवासियों के प्रति जातिवादी, धार्मिक द्वेषी, व लैंगिक विरोधी भावनाएं बढ़ जाती है, महिलाएं इन मनोवृत्तियों से दोगुनी पीड़ित होती हैं क्योंकि वो न केवल प्रवासी के आधार पर बल्कि लैंगिक आधार पर भी भेदभाव का अनुभव करती हैं। प्रवासी महिला श्रमिकों को न केवल पुरुष प्रवासी श्रमिकों बल्कि स्थानीय महिला श्रमिकों की तुलना में कम पारिश्रमिक का भुगतान किया जाता है तथा कार्यस्थल पर कार्य कम होने पर सबसे पहले उनकी छटनी की जाती है तथा श्रम बाजार से उन्हें बहिष्कृत कर दिया जाता है।

दोषपूर्ण अनौपचारिक श्रम व्यवस्था–

प्रवासी महिला श्रमिक अधिकांशतः अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में कार्यरत होती हैं जिसके अंतर्गत कार्य से जुड़ी सामाजिक सुरक्षा व कानूनी संरक्षण का अभाव होता है। प्रवासी महिला श्रमिकों को निम्न कार्य स्थिति के कारण निम्न जीवन स्तर गुजारना पड़ता है तथा मानव विकास के रूप में शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल, आवास व्यवस्था व खाद्यान्न तक पहुंचने के लिए भारी कीमत चुकानी पड़ती है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से उपलब्ध सस्ते खाद्यान्न का लाभ भी प्रवासी महिला श्रमिक, स्थानीय पहचान पत्र के अभाव में नहीं उठा पाती हैं। सरकार द्वारा 'वन नेशन वन राशन' योजना शुरू करने के पश्चात भी इसका क्रियान्वयन सुचारू रूप से नहीं हो पाया है, जिस कारण एक तरफ वो अपने मूल स्थान पर इस सुविधा का लाभ नहीं उठा पाती हैं वहीं दूसरी तरफ गंतव्य स्थान पर उन्हें महंगे अनाज खरीद कर खाने पड़ते हैं। अनौपचारिक श्रम बाजार में प्रवासी महिला श्रमिकों को मातृत्व लाभ योजना का लाभ भी नहीं मिल पाता है तथा विवशता के कारण उन्हें गर्भावस्था के दौरान भी कार्य करना पड़ता है साथ ही प्रसव पश्चात भी वो जल्द ही कार्य पर वापस आ जाती हैं। प्रवासी महिला श्रमिक पर्याप्त आवास व्यवस्था के अभाव में झुग्गी झोपड़ियों में रहती हैं तथा सार्वजनिक शौचालय का उपयोग करती हैं जो उनके स्वास्थ्य के लिए खतरनाक होता है।

आर्थिक विकास में योगदानों की अवहेलना–

देश की अर्थव्यवस्था को निर्मित करने व बनाए रखने में प्रवासी महिला श्रमिकों का महत्वपूर्ण योगदान होता है परंतु महिला श्रमिक अधिकांशतः मौसमी प्रवास करती है तथा व्यापक डेटाबेस जैसे– जनगणना व राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण में लघु अवधि के लिए प्रवास करने वालों की पर्याप्त सूचना सम्मिलित नहीं होती है अतः पर्याप्त आंकड़ों के अभाव में उनके योगदानों को स्वीकार नहीं किया जाता है। आजीविका के खोज में मुख्य रूप से सामाजिक रूप से वंचित समूह जैसे– अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति व अन्य पिछड़ा वर्ग की महिला श्रमिक मौसमी प्रवास करती हैं परंतु सरकार की विकास नीतियां व कार्यक्रम विभेदित होने के कारण उनको पर्याप्त संरक्षण प्रदान नहीं कर पाती हैं, जिस कारण प्रवासी महिला श्रमिक मुख्यधारा में जुड़ने से वंचित रह जाती हैं।

प्रवासी महिला श्रमिकों पर कार्य का दोहरा बोझ–

प्रवास व्यक्तियों को जाति विभाजन व सामाजिक बंधनों से बचने तथा गंतव्य स्थान पर सम्मान से रहने व आजादी से कार्य करने का अवसर प्रदान करता है परंतु पुरुष प्रवासियों की तुलना में महिला प्रवासी पीछे रह जाती हैं क्योंकि उनके कार्यस्थल व परिवार के संबंध में प्रत्येक निर्णय उनके परिवार के पुरुष सदस्यों द्वारा ही लिया जाता है साथ ही कार्यस्थल के साथ–साथ घर का कार्य करने की जिम्मेदारी भी महिलाओं की होती है। महिला शक्तिकरण के कारण अब महिलाएं घर से बाहर निकल कर देश के आर्थिक विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान देती है परंतु परंपरागत श्रम विभाजन व्यवस्था के अंतर्गत घर संभालना व बच्चों की देखभाल करना आज भी महिलाओं की ही जिम्मेदारी समझी जाती है। घर पर कार्य करने के लिए उन्हें कोई पारिश्रमिक प्रदान नहीं किया जाता है तथा बाहर काम करके प्राप्त किए हुए पारिश्रमिक को खर्च करने का निर्णय भी वह स्वतंत्र रूप से नहीं ले पाती हैं, इस प्रकार प्रवासी महिला श्रमिकों को घर तथा बाहर दोनों ही कार्य के रूप में दोहरे बोझ का सामना करना पड़ता है।

प्रवासी महिला श्रमिकों की स्वास्थ्य समस्या व सार्वजनिक सेवाओं तक पहुंच का अभाव–

स्वास्थ्य संबंधी समस्या प्रवासी महिला श्रमिकों के लिए एक गंभीर चिंता का विषय है। प्रवासी महिलाओं को उनके

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.14

यौन व प्रजनन स्वास्थ्य के संबंध में स्थानीय महिलाओं की तुलना में विशिष्ट देखभाल की आवश्यकता होती है क्योंकि अधिकांश प्रवासी श्रमिक महिलाएं उन कार्यों में नियोजित होती है जिसमें स्वास्थ्य व सुरक्षा की कमी होती है जैसे मौसमी कृषि कार्य, घरेलू सेवा, निर्माण क्षेत्र, देखभाल क्षेत्र व औद्योगिक क्षेत्र आदि। अनौपचारिक क्षेत्र में कार्य करने के कारण अधिकांशतः प्रवासी श्रमिक महिलाएं झुग्गी झोपड़ियों में निवास करती हैं जहां पीने के स्वच्छ पानी व शौचालय की सुविधा के अभाव के कारण वे संक्रामक रोगों का शिकार होती हैं। पहचान पत्र एवं स्थानीय निवास प्रमाण पत्र के अभाव के कारण सार्वजनिक सेवाओं तक पहुंचने में बाधाएं उत्पन्न होती हैं क्योंकि सामाजिक सुरक्षा व सार्वजनिक सेवाओं तक पहुंचने में सरकार द्वारा बनाई गई नीतियों तथा व्यवहारों में अंतर पाया जाता है। भाषा एवं सांस्कृतिक वर्जना भी प्रवासी श्रमिक महिलाओं को सार्वजनिक सेवाओं तक पहुंचने में बाधा उत्पन्न करती है।

सामाजिक संरक्षण का अभाव एवं मानव अधिकारों से वंचित–

स्थानीय व्यक्ति प्रवासी श्रमिक महिलाओं को गंतव्य पर बाहरी व्यक्ति के रूप में देखते हैं तथा उन्हें संसाधनों पर बोझ समझते हैं। शहरी विकास के निर्णय प्रक्रिया में प्रवासी महिला श्रमिकों को हाशिए पर ढकेल दिया जाता है। सरकार के नियमों व प्रशासनिक प्रक्रियाओं के कारण प्रवासी श्रमिक महिलाओं को उन कानूनी अधिकारों, जन सेवाओं व सार्वजनिक सुरक्षा कार्यक्रमों से वंचित कर दिया जाता है जो स्थानीय नागरिकों को प्राप्त है तथा उनके साथ दोयम दर्जे के नागरिकों जैसा व्यवहार किया जाता है। प्रवासी महिला श्रमिक, शहरी अर्थव्यवस्था के अनौपचारिक श्रम बाजार में सस्ता व लचीला श्रम उपलब्ध कराती है परंतु उन्हें स्वयं ऐसी खराब स्थितियों में कार्य करने को विवष होना पड़ता है जहां सामाजिक सुरक्षा व कानूनी संरक्षण का अभाव पाया जाता है, जिसके अंतर्गत उन्हें कार्यस्थल पर भेदभाव, राजनीतिक प्रतिनिधित्व का अभाव, असुरक्षित व जोखिम कार्य स्थिति, सरकार द्वारा उपलब्ध कराए जाने वाले सार्वजनिक सेवाओं जैसे– स्वास्थ्य व शिक्षा तक सीमित पहुंच तथा जाति, धर्म, वर्ग व लिंग के आधार पर भेदभाव का सामना करना पड़ता है। अधिकांशतः प्रवासी श्रमिक महिलाएं राजनीतिक भेदभाव का शिकार होती हैं, गंतव्य स्थान पर उन्हें राजनीति से बहिष्कृत कर दिया जाता है तथा मूल स्थान पर जब चुनाव होता है तो प्रवास पर होने के कारण वो मताधिकार का प्रयोग करने से वंचित रह जाती हैं।

निष्कर्ष तथा सुझाव

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत सरकार की नीतियां प्रवासी श्रमिक महिलाओं जैसे संवेदनशील समूह को किसी भी प्रकार की कानूनी संरक्षण व सामाजिक सुरक्षा उपलब्ध करवाने में असक्षम रही है। प्रवासी श्रमिक महिलाओं के उचित समायोजन एवं मॉनिटरिंग के लिए जनगणना तथा राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण आदि के द्वारा प्रवास के कारणों को लिंग एवं आयु के अनुसार विभाजित करके एकत्रित करने की आवश्यकता है तथा संबंधित मंत्रालयों व विभागों द्वारा परस्पर पूरक पहल करना चाहिए क्योंकि प्रवासी श्रमिक महिलाएं विभिन्न क्षेत्रों से पलायन करती है जिसके माध्यम से उनके सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक व सांस्कृतिक जीवन में एकीकरण को सुनिश्चित कर उन्हें समृद्ध किया जा सकता है।

विभिन्न सरकारी कार्यक्रमों को अपनाकर इन प्रवासी श्रमिक महिलाओं को उनके मूल क्षेत्र में विकास रणनीतियों जैसे– निश्चित आजीविका के अवसर, बेहतर सामाजिक व भौतिक संरचनाएं, खाद्य सुरक्षा कार्यक्रम व मनरेगा आदि के माध्यम से रोजगार उपलब्ध करवाना चाहिए जिससे उनके पलायन की व्यथा को न्यूनतम किया जा सकता है।

संस्थागत सहायता कार्यक्रम के अंतर्गत प्रत्येक राज्य के श्रम विभाग मंत्रालय द्वारा उन्हें वित्तीय सहायता प्रदान किया जाए साथ ही बैंकिंग सुविधाओं तक पहुंच सुनिश्चित करें जिससे वह अपने द्वारा अर्जित धन को सुरक्षित तरीके से प्रेषित कर सकें।

प्रवासी श्रमिक महिलाओं के लिए सरकार द्वारा उपलब्ध सार्वजनिक सेवाओं तथा जननी सुरक्षा योजना के अंतर्गत संस्थागत प्रसव हेतु प्रोत्साहित करने के लिए उनके पहुंच को सुगम एवं सुनिश्चित करना चाहिए साथ ही कार्य स्थलों पर कार्य के दौरान नियमित अंतराल पर बच्चों के स्तनपान हेतु अवकाश प्रदान किया जाना चाहिए।

आवासीय व्यवस्था का संस्थागत विकास करना चाहिए जिससे प्रवासी श्रमिक महिलाओं को पर्याप्त आवासी अधिकार प्राप्त हो सके तथा सरकार द्वारा चलाई गई प्रधानमंत्री आवास योजना के अंतर्गत उनका पुनर्वास किया जा सके।

शहरी विकास सांस्कृतिक विविधता, सामाजिक संस्था और मानव अधिकार पर आधारित होना चाहिए जिससे प्रवासी श्रमिक महिलाओं का समावेशन हो सके। शहरी प्रशासनिक व्यवस्था को लोकतांत्रिक प्रक्रिया के द्वारा क्रियान्वित किया जाना चाहिए जिससे प्रवासी श्रमिक महिलाओं के प्रतिनिधित्व को प्रोत्साहित कर शहर की मूलभूत सेवाओं तक उनके अधिकारों को सुनिश्चित किया जा सके।

संदर्भ सूची

1. प्रवासी श्रमिकों की सुरक्षा के लिए संगठनों का राष्ट्रीय गठबंधन (एन सी ओ एस एम डब्ल्यू). (2010). भारत में मौसमी आंतरिक प्रवासन के लिए एक बेहतर प्रतिक्रिया, बारहवीं योजना हेतु प्रमुख नीतिगत अनुशंसा. योजना आयोगः भारत सरकार, नई दिल्ली को प्रस्तुत.

2. यूनेस्को यूनिसेफ. (2012). कार्यशाला संक्षेपः भारत में अंतरिक प्रवास एवं मानव विकास पर यूनेस्को यूनिसेफ कार्यशाला. 6–7 दिसंबर. 2011. अंक 1. कार्यशाला रिपोर्ट, नई दिल्ली. यूनेस्को एवं यूनिसेफ.
3. बाउ, एन., खन्ना, जी., लॉ, सी., शाह, एम., शरमीन, एस., वोइना, ए. (2022). वुमन वेल बिंग ड्यूरिंग ए पैंडेमिक एंड इट्स कंटेनमेंट. जे. डिवेलप इकौन. 2022. 15 6102839.
4. चौहान, पी. (2021). जेंडरिंग कोविड–19. इंपैक्ट ऑफ पैंडेमिक ऑन वूमंस बर्डन ऑफ अनपेड वर्क इन इंडिया. जेंडर इशू. 38. पृष्ठ **395–419.**
5. जेनसन, आर. (2012). डु लेबर मार्केट अपॉर्चुनिटीस अफेक्ट यंग वूमेनस वर्क एंड फैमिली डिसीजन? एक्सपेरिमेंटल एविडेंस फ्रॉम इंडिया. क्वार्टर जे. इकोन. 127. पृष्ठ **753–792.**
6. ववेक, वी. (2017). इन इंडिया, वूमेन माइग्रेट फॉर वर्क एट डबल द रेट दैन मैन डु. हिंदुस्तान टाइम.
7. ज्लोनिक, एच. (2003). द ग्लोबल डायमेंशन ऑफ फीमेल माइग्रेशन. माइग्रेशन पॉलिसी इंस्टीट्यूट.

15

गुणवत्ता बढ़ाने के लिए शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सर्वोत्तम अभ्यास

डॉ० कृति अग्रवाल
असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षा विभाग
कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ
ईमेलः kritiagarwalmrt1984@gmail.com

सारांश

शिक्षण और सीखना एक व्यापक क्षेत्र है जिसमें संभावित रूप से शिक्षार्थी, स्कूल, घर, समुदाय और राष्ट्रीय स्तर पर कई चुनौतियां शामिल है। भावी शिक्षकों के बीच कम संज्ञानात्मक उपलब्धि उनके भविष्य के छात्रों के बीच सीखने के परिणामों में बाधा डाल सकती है, जिससे भविष्य में तैयार होने वाले शिक्षकों की गुणवत्ता में कमी आ सकती है। आज शिक्षा का क्षेत्र केवल पुस्तकों तक ही सीमित नहीं है बल्कि विभिन्न नई दिशाओं में भी विस्तृत हो गया है। परिवर्तन के इस रूप में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को बहुत प्रभावित किया है इसी कारण शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में बहुत समीक्षा और सुधार की आवश्यकता है साथ ही हमें शिक्षकों को नवीन दृष्टिकोण के साथ प्रशिक्षित करने की भी आवश्यकता है जिससे हम नवीन परिवेश में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को नया आकार देकर शिक्षकों की दक्षता और क्षमता को बढ़ा सकें।

गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लिए सुशिक्षित शिक्षकों की आवश्यकता होती है शिक्षार्थियों की विधि जरूरतें, पाठ्यक्रम में बदलाव और शिक्षण व सीखने के संसाधनों के प्रावधान सहित शिक्षकों को सक्षम बनाने के लिए शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सुधार के संसाधनों के प्रावधान सहित शिक्षकों को सक्षम बनाने के लिए शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सुधार लाना अत्यंत आवश्यक है। कोठारी कमीशन ने बहुत सही कहा है कि भारत का भाग्य उनकी कक्षाओं में आकार ले रहा है, जैसे जैसे भारत में जनसंख्या बढ़ेगी वैसे–वैसे ही योग्य और प्रशिक्षित शिक्षकों की आवश्यकता भी बढ़ेगी इसलिए ही शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सुधार के लिए बहुत प्रयास किए जाने चाहिए। क्योंकि शिक्षक किसी भी शैक्षिक व्यवस्था में सबसे महत्वपूर्ण तत्व है और इसके साथ किसी भी स्तर पर होने वाली शिक्षण प्रक्रिया में केन्द्रीय भूमिका निभाता हैं। अध्यापन कोई व्यवसाय नहीं है बल्कि प्रौद्योगिकी सदैव बदलते ज्ञान, वैश्विक अर्थशास्त्र के दबावों और सामाजिक दबावों से प्रभावित होकर बदलता रहता है इसका मतलब है कि इन परिवर्तनों को संबधित करने के लिए शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के तरीकों और कौशलों का लगातार अद्यतन और विकास आवश्यक है। शिक्षकों का बदलाव क्षमता से युक्त होना अनिवार्य है।

अपने इस अंक में हम चर्चा करेंगे कि हमें शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में क्या–क्या सर्वोत्तम अभ्यास करने चाहिए।

मुख्य बिन्दु

प्रौद्योगिकीविदों, सर्वोत्तम, वैश्विक, प्रसंस्करण, प्रभावशीलता, निर्देशात्मक, क्रेडिट हस्तांतरण, पुनर्विचार, नवाचार, रचनात्मक, आलोचनात्मक, सुविधाजनक, व्याख्यान, डिजिटल, प्रोत्साहित।

गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लिए आवश्यकता है कि प्राचीन समय से चली आ रही शिक्षा पद्धति में बदलाव व सुधार किए जाए। नवीन परिवेश के अनुसार नवीन विविधियों व प्रविधियों के माध्यम से शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में परिवर्तन किया जाए। क्योंकि सीखना जटिल और विविध है, विभिन्न सीखने के परिणामों के लिए शिक्षार्थियों द्वारा अलग–अलग निर्देश और प्रसंस्करण की आवश्यकता होती हैं। हमारी नई शिक्षा नीति 2020 भी इसी ओर ध्यान दे रही है कि पुरानी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में बहुत सुधार किए जाने की आवश्यकता है। सबसे अहम पहलू यह है कि अब छात्रों को केवल किताबी ज्ञान पर आधारित न रखकर उनके सम्पूर्ण विकास पर जोर दिया जाए। विभिन्न कौशलों के माध्यम से उन्हें भावी जीवन के लिए तैयाए किया जाए, शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ाने के

लिए यह सबसे आवश्यक सुझाव है कि अब छात्र व शिक्षक का उद्देश्य केवल मात्र पाठ्यक्रम को पूरा करना नहीं होना चाहिए, बल्कि विद्यार्थी की मौलिकता, सर्जनशीलता पर चिंतनशीलता को भी बढ़ावा देना चाहिए।

हाल के वर्षो में शिक्षा पर ध्यान निश्चित रूप से बढ़ा है और कॉलेजों ने इसकी गुणवत्ता और प्रभावशीलता में सुधार करने के लिए कई तरह के कदम उठाए हैं हम जानते हैं कि शिक्षण और सीखने में सुधार किया जा सकता है, लेकिन अगर गुणवत्ता और प्रभावशीलता को ऊपर उठाना है तो यह पहचाना आवश्यक है कि शिक्षण पार्ट आर्ट, पार्ट क्राफ्ट और पार्ट साइंस है। शिक्षण अधिगम भी एक शिल्प है, और कौशल का एक समूह है जो विशेषता, अभ्यास, पॉलिश और विस्तार पर निर्भर करता है। वर्तमान में शिक्षण में सुधार के लिए हमारा दृष्टिकोण काफी हद तक व्यक्तिगत संकाय सदस्यों के सुझाव पर निर्भर करता है।

वास्तव में शिक्षा अधिगम में सुधार करने के लिए हमें निम्न सुझाव पर ध्यान केंन्द्रिम करने की आवश्यकता है।

1. सर्वप्रथम पाठ्यक्रम को फिर से डिजाइन करने की एक व्यवस्थित प्रक्रिया शुरू करने की आवश्यकता है, जिससे शिक्षण और सीखने के विशेषज्ञों, निर्देशात्मक डिजाइनरों, शैक्षिक प्रौद्योगिकीविदों और मूल्यांकन विशेषज्ञों की एक टीम की मदद से लगभग 25 सबसे बड़े नामांकन पाठ्यक्रमों को फिर से डिजाइन करने के लिए संकाय की टीमों को संगठित किया जाए तथा उनसे सहायता प्राप्त की जाए।
2. विभागीय बातचीत को प्रोत्साहित किया जाए, साथ ही विभागों को सामूहिक रूप से अपने पाठ्यक्रम, सीखने के परिणामों, प्रमुख आवश्यकताओं और क्रेडिट हस्तांक्षरण के नियमों पर पुनर्विचार करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए, विभाग आपस में बातचीत से एक दूसरे को सहयोग प्रदान कर सकते हैं और शिक्षण की गुणवत्ता में सुधार करने में भी अहम भूमिका निभा सकते हैं।
3. प्रौद्योगिकी के साथ मौजूदा कक्षा को बढ़ाने के लिए शैक्षिक पेशवरों, उपयुक्त स्नातक छात्रों या प्रभावशाली स्नातक के साथ व्यक्तिगत परीक्षा को यह संकाय टीमें आपस में जोड़े जिससे छात्रों को व्यक्गित रूप से अनुभव प्रदान किए जा सके।
4. व्यक्तिगत संकाय सदस्यों को उनके पाठ्यक्रमों में नवाचार करने के लिए आवश्यक सहायता प्रदान करें।

इन सबके साथ साथ हमें इस ओर भी ध्यान देने की आवश्यकता है कि हम शिक्षण या सीखने की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए क्या–क्या कर सकते हैं या हमें क्या–क्या करना।

1. सर्वप्रथम हमें यह आवश्यकता है कि हम छात्रों की उपलब्धियों को पहचाने ताकि उनको उनकी उपलब्धियों के अनुसार ही आवश्यक सुझाव दिए जा सकें।
2. छात्रों को अपने भविष्य को लेकर जो चिंताएं होती है उन पर उचित प्रतिक्रिया देना भी बहुत अधिक आवश्यक है साथ–साथ उनकी चिंताओं का निवारण करना भी अत्यंत आवश्यक है।
3. व्यवसायिक गतिविधियों के साथ पूरक व्याख्यान दिया जाना आवश्यक है ताकि छात्रों के अन्दर शैक्षिक के साथ–साथ व्यवसायिक गुणवत्ता में भी वृद्धि हो सके।
4. छात्रों की उपलब्धियों के साथ–साथ अपनी अपेक्षाओं को भी स्पष्ट करना अत्यंत आवश्यक है कि वास्तव में हम छात्रों से क्या अपेक्षा करते हैं इसका परिणाम यह होग कि छात्र अपने कार्य में और गुणवत्ता लाने का प्रयास करेंगें।
5. छात्रों से ऑखों से सम्पर्क करें अर्थात् छात्रों से बात करते हुए इधर उधर ना देखें साथ ही है प्रयास भी किए जाए कि छात्र भी शिक्षक से बात करते समय इधर–उधर ना देखें, इसके साथ–साथ छात्रों को उनके नाम से संबोधित करें जिससे कि प्रत्येक छात्र इस ओर ध्याान दें कि उसके नाम को भी कभी भी पुकारा जा सकता है इसका परिणाम यह होगा कि छात्र कक्षा मे क्रियाशील व सजग रहने का प्रयास करेगा।

सीखने और सिखाने में सर्वोत्तम अभ्यास हम उन लिंक को जोड़ने की प्रक्रिया में हैं जो शिक्षण में सर्वोत्तम प्रथाओं के बारे में जानकारी प्रदान करने हैं।

1. जस्ट इन टाइम टीचिंग।
2. अवधारणा मानचित्र।
3. सीखने की शैलियां।
4. संक्रिया अध्ययन।
5. सहकर्मी निर्देश।
6. टीम आधारित शिक्षा।
7. सीखने में सर्वोत्तम अभ्यास और शिक्षण वीडियों।
8. अतिरिक्त रीडिंग

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.15

निर्देशात्मक उपकरण :–

1. क्लियर सेटअप।
2. शिक्षाविदों के लिए मोबाइल ऐप।
3. प्रौद्यागिकी वीडियों का उपयोग करना।
4. आईपैड पायलट प्रोजेक्ट।

आज हम एक डिजिटल युग में रहते हैं जहां छात्रों को लगातार प्रौद्योगिकी और मीडिया में नवीनतम रूझानों से अवगत कराया जाता है। हमारी नई शिक्षा नीति 2020 भी इस ओर ही ध्यान देती है कि छात्रों को प्रौद्योगिकी के माध्यम से ज्यादा से ज्यादा शिक्षण कराया जाए। इस नए जमाने में छात्रों को पढ़ाते समय शिक्षकों के लिए लचीला होना और उनकी शिक्षक गुणवत्ता में सुधार के लिए नए तरीके खोजना महत्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि यह न केवल उन्हें कक्षा में अधिक प्रभावी होने में मदद करता है बल्कि उनके छात्रों की जानकारी को बेहतर तरीके से सीखने और बनाए रखने में मदद करता है आज का युग डिजिटल युग है, ऐसे में आवश्यकता है कि आज हर शिक्षक अपने छात्रों का सम्पूर्ण विकास करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करें।

आइए कुछ तरीकों पर गौर करें जिन्हें शिक्षक कक्षा में अपनी शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के लिए अमल में ला सकते हैं।

1. कक्षा में प्रौद्योगिकी का परिचय दें:– सर्वप्रथम अपने छात्रों के साथ जुड़ने के नए तरीकों की तलाश करने वाले आधुनिक शिक्षक को नवीन होना चाहिए और उन तकनीकों को उपयोग करना चाहिए जो छात्रों को आकर्शित करती हैं। युवा छात्र तकनीकी कौशल के साथ अधिक कुशल होते हैं इसलिए कक्षा में पौद्योगिकी को एकीकृत करके आप तुरन्त अपने छात्रों को बेहतर और तेजी से सीखने में मदद करेंगे। क्योंकि हर शिक्षक इस बात से भली–भांति परिचित है कि आज का युग आधुनिक युग है और इस युग में छात्रों को आधुनिक तरीके से ही पढ़ाना आवश्यक है।
2. छात्रों को सक्रिय शिक्षार्थी बनाने के लिए सशक्त बनाना:– कक्षा में शिक्षण की गुणवत्ता शिक्षक के लिए छात्रों को केवल दर्शक बनने के बजाय सक्रिय शिक्षार्थी बनने के लिए मार्गदर्शन करना है। अर्थात् शिक्षकों को इस ओर ध्यान देने की बहुत अधिक आवश्यकता है कि उनकी कक्षा में छात्र केवल एक मुकदर्शक के रूप में उपस्थित ना रहे, इसलिए शिक्षक को सक्रिय शिक्षण तकनीकों का उपयोग करके स्वतंत्र, आलोचनात्मक और रचनात्मक सोच को सुविधाजनक बनाने के तरीकों को देखना चाहिए। इनमें छात्र सहयोग, छात्रों से केस स्टडी का विश्लेषण करने के लिए कहना, वाद विवाद, व्याख्यान और गृह कार्य के दौरान नए विचारों पर चर्चा करना शामिल होना चाहिए। इन विधियों का प्रयोग करके शिक्षक अपने छात्रों को ज्यादा से ज्यादा सक्रियता प्रदान कर सकता है इसके परिणाम स्वरूप छात्र स्वयं भी ऐसी क्रिया में भाग लेने के लिए उत्साहित रहेंगे और ज्यादा कक्षा में सक्रिय रहेंगे।
3. छात्रों के सीखने के अनुभव को निजीकृत करें– शिक्षा के सबसे प्रभावी तरीकों में से एक है कि प्रत्येक व्यक्तिगत शिक्षार्थी की जरूरतों को पूरा करने के लिए सीखने के अनुभवों को निजीकृत किया जाए ताकि छात्र को सीखने में आवश्यकतानुसार शामिल किया जाए।

इसके अतिरिक्त शिक्षण अधिगम की बेहतरी के लिए कुछ अन्य तरीकों को अपनाकर भी शिक्षक अपने पाठकों में सुधार कर सकते हैं जैसे–

1. शिक्षक को आवश्यकता है कि वह आई0सी0टी0 उपकरण का प्रयोग करें साथ ही डिजिटल गेम आधारित शिक्षा का भी उपयोग करें, क्योंकि आज के आधुनिक युग में आई0सी0टी0 उपकरणों का प्रयोग करना तथा छात्रों को उनके माध्यम से सीखाना बहुत अधिक आवश्यक है।
2. शिक्षक को अपने छात्रों के बीच अन्तर भी करना चाहिए क्योंकि हर छात्र के सीखने का स्तर अलग–अलग होता है हर छात्र को एक ही स्तर से सीखा पाना सम्भव नही है अतः शिक्षक के लिए आवश्यक है कि वे छात्रों के बीच अन्तर करके उसी आधार पर उन्हें शिक्षण प्रदान करें।
3. शिक्षक के लिए आवश्यक है कि वह फ्लिप किए गए कक्षा मॉडल करके ही छात्रों को पढ़ाए।
4. शिक्षक को सहकारी सीखने को प्रोत्साहित करना चाहिए अर्थात् छात्र एक दूसरे के साथ सहयोग करके ज्यादा अच्छे तरीके से सीख पाते हैं और उनके अन्दर सहयोगी भावना का भी विकास होता है अतः आवश्यकता है कि शिक्षक सहकारी सीखने को अधिक से अधिक प्रोत्साहित करें।
5. शिक्षक के लिए यह भी आवश्यक है कि वह समय–समय पर माता–पिता के साथ संवाद करें, जिससे कि उन्हें छात्रों में आवश्यक सुधार करनें में सहायता मिल सके और माता–पिता को भी उनके बच्चे के प्रदर्शन के विषय में समय–समय पर जानकारी मिलती रहे।

6. प्रत्येक शिक्षक के लिए यह भी आवश्यक है कि वह विद्यालय में कार्य करते समय अपने सहकर्मियों के साथ भी संवाद करें, ताकि वह अपनी शिक्षण विधियों में और अधिक सुधार ला सके, प्रत्येक शिक्षक के लिए यह इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि हर व्यक्ति के अनुभव भिन्न–भिन्न होते हैं, सहकर्मियों के साथ संवाद करने से दूसरे के अनुभवों को भी जानने व समझने में मदद मिलती है और अपने कार्य करने के तरीकों को भी सुधारा जा सकता है।
7. प्रत्येक शिक्षक के लिए यह भी आवश्यक है कि वह अपनी कक्षा के वातावरण को स्वागत योग्य वातावरण बनाए, ऐसा करने से वह अपने छात्रों में अपने प्रति आदर के साथ–साथ शिक्षण के प्रति जागरूकता, सृजनशीलता, रचनात्मकता व लगन को बढ़ानें में सफल हो सकता है।

इस प्रकार के शिक्षक निम्न प्रक्रियाओं को अपनाकर अपनी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी बनाकर शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार कर सकता है साथ ही अपने छात्रों को आज के आधुनिक युग के अनुसार शिक्षा प्रदान करके उनको भविष्य के लिए तैयार कर सकता है।

संदर्भ सूची

1. Kumar, Dr. R. Dinesh. Quality Enhancement in Teacher Education.
2. Thoughts of Steven mintz about Teacher Education.
3. https://www.insidehighered.com.
4. Uppal, Dr. Monika. Teacher Teaching and Technology.

16

स्वाधीनता आन्दोलन और भारतीय शिक्षा व्यवस्था

मिस ऋतु शर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर
कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ
ईमेलः hello.ritu333@gmail.com

भारतीय शास्त्रों व ग्रन्थों में शिक्षा को जीवन के शाश्वत मूल्य के रूप में स्वीकार किया गया है। शिक्षा को ज्ञान या विद्या के रूप में माना गया है। शिक्षा को सभी ने मानव जाति की सबसे बड़ी आवश्यकता कहा है। वेद व्यास रचित श्रीमद् भगवतगीता में स्पष्ट लिखा गया है कि

''न हिः ज्ञानने सदृशं पवित्रमहि विद्यते''

अर्थात इस संसार में ज्ञान के समान कुछ भी पवित्र है ही नहीं। हमारे साहित्यों में भी शिक्षा के विषय में लिखा गया है कि–

- शिक्षा माता के समान रक्षा करती है, पिता के समान हितकारी कार्यों में लगाती है, सुयश को बढ़ाती है, धन–मान्य से परिपूर्ण करती है।

परन्तु तेजी से बदलती हुई देशकाल–परिस्थितियों में शिक्षा का स्वरूप भी बदलता गया। मध्यकालीन मुस्लिम युग में भारतीय शिक्षा का प्रवाह व गति मन्द पड़ती गई। इतिहास इस बात का साक्षी है कि राष्ट्र का सम्प्रत्य सर्वप्रथम इसी देव तुल्य भूमि पर हुआ। यदि किसी भी देश का पतन करना है तो वहाँ की शिक्षा प्रणाली पर प्रहार करो। और विदेशी आक्रान्ताओं व मध्यकालीन मुस्लिम काल के शासकों ने यही किया। 1206 ई–1700 ई0 तक इन शासकों ने अपने धर्म से सम्बन्धित शिक्षा का प्रचार व प्रसार किया। इसकी शिक्षा का मुख्य उद्देश्य राज्य विस्तार था। परन्तु इस समयावधि के मध्य भी भारतीय वैदिक शिक्षा बिना चमक–दमक वाले विद्यालयों के बिना घर पर ही चलती रही। साक्षरता दर ना के बराबर हो गई थी। चहुँ और भय का वातावरण था। शिक्षा जन–जन की पहुँच से बाहर हो गई थी। इनके शासन काल में समय–2 पर पुर्तगाली, अंग्रेज, डच, फ्रान्सीसी और डेन व्यापारियों ने व्यापार के उद्देश्य से अपनी 2 कम्पनी स्थापित की। परन्तु व्यापार के एकाधिकार के वर्चस्व में अंग्रेजों ने सम्पूर्ण भारत में अपनी कम्पनी स्थापित कर ली। इन्होंने व्यापार के माध्यम से अपने पैर यहाँ जमा लिये तथा भारतीय राजाओं की आपसी फूट का लाभ उठाकर सम्पूर्ण भारत पर अपना शासन स्थापित कर लिया। तब कही जाकर भारतीयों को अपनी भूल का अहसास सर्वप्रथम सैनिक क्षेत्र में हुआ।

पुर्तगालियों ने हमारे यहाँ शिक्षा के प्रचार के लिए शुरूआत बहुत पहले ही आरम्भ कर दी थी। परन्तु 1700 ई०– 1947 ई0 तक भारतीय शिक्षा पर ब्रिटिश शासन का एकाधिपत्य हो गया। अंग्रेज चाहते थे कि भारतीयों को अंग्रेजी भाषा तथा साहित्य पढ़ाया जाये तथा शिक्षा का माध्यम मातृभाषा ना होकर अंग्रेजी होनी चाहिए, ब्रिटिश शासकों को भारत में कार्य करने के लिए अंग्रेजी पढ़े–लिखे भारतीयों की आवश्यकता हुई। जिसका परिणाम यह हुआ कि भारत में उच्च शिक्षा के लिए कलकत्ता मदरसा, बनारस संस्कृत कालेज व फोर्ट विलियम कालिज की स्थापना हुई। ईसाई मिशनरियों ने ही सर्वप्रथम भारत में क्षेत्रीय भाषाओं के माध्यम से जन शिक्षा का प्रारम्भ किया। ब्रिटिश शासनकाल से भारत में शिक्षा की व्यवस्था करना राज्य का उत्तरदायित्व बन गया। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था का कार्य अब सरकार का ही है। 1813ई0 के आज्ञापत्र में बाद से ही धीरे–2 हमारे शिक्षा व्यवस्था के स्वरूप में परिवर्तन आ गया। देश भर में अंग्रेजी शिक्षा का प्रसार होने लगा।

लाई मैकाले भारत में प्राच्य पाश्चात्य विवाद का हल व शिक्षा पर खर्च होने वाली राशि के समाधान के लिए आये थे। इन्होने पाश्चात्य साहित्य को सर्वोत्तम साहित्य तथा भारतीय साहित्य को बेकार बताकर भारतीयों को अंग्रेजी अधिकारियों के अन्तर्गत कार्य करने वाले क्लर्क के रूप में तैयार करने का कार्य किया। वुड, आयोग, हन्टर आयोग, लार्डकर्जन आयोग, सैडलर आयोग, हर्टाग

समिति, चार्ल्स वुड एवं एबट समिति तथा सार्जेन्ट रिर्पोट के विभिन्न सुझावों के माध्यम से भारतीय षिक्षा में सुधार करने व उसकी गुणवत्ता वृद्धि पर बल दिया। चार्ल्स वुड के सुझावों के आधार पर ही 1857 ई० कलकत्ता, मुम्बई व मद्रास में विश्वविद्यालयों भी स्थापना की गई। इसके साथ–2 प्राथमिक शिक्षा का पूर्ण उत्तरदायित्व सरकार का हो। सहायता अनुरान प्रणाली, शिक्षकों में प्रशिक्षण हेतु विद्यालय और महाविद्यालय खोलने का सुझाव भी एक स्वागतयोग्य कदम था। कहा जाता है कि भारत में आधुनिक शिक्षा की नीव वुड घोषण पत्र ने ही डाली।

हन्टर आयोग का सुझाव कि प्राथमिक शिक्षा का भार स्थानीय निकायों को हो ने भारत में जन शिक्षा का रास्ता खोल दिया। इन्होंने शिक्षा को रोजगारपरक बनाने पर भी बल दिया। हन्टर आयोग के सुझावों के परिणामस्वरूप ईसाई मिशनरियों का भारतीय शिक्षा पर से प्रभुत्व समाप्त हो गया तथा हम अपनी संस्कृति व सभ्यता को सुरक्षित करने में सफल हो पायें। लार्ड कर्जन ने शिक्षा के क्षेत्र में अनेक सुधार किए, भारतीय विश्वविद्यालय के सम्बन्ध में यह पहला आयोग था। केन्द्रीय शिक्षा विभाग व पुरातत्व विभाग की स्थापना के साथ – 2 कृषि शिक्षा में सुधार नैतिक शिक्षा पर बल जैसे सुझाव देकर इन्होंने भारतीय शिक्षा को नया आयाम दिया। वुड एबट ने व्यावसायिक व तकनीकी शिक्षा का सुझाव देकर भारतीय शिक्षा को रोजगारपरक बनाने का प्रयास किया।

जहाँ एक तरफ ब्रिटिश सरकार विभिन्न आयोगो की स्थापना कर भारतीय शिक्षा में सुधार करने का प्रयास कर रही थी वही दूसरी तरफ भारतीय शिक्षाविद्ध भी शिक्षा के क्षेत्र में निरन्तर सुधार करने का प्रयास कर रहे थे। प्राच्य पाश्चात्य विवाद में कारण भारतीय वर्ग दो भागों में बँट गया था। एक वर्ग भारतीय भाषा साहित्य एवं ज्ञान विज्ञान की शिक्षा के पक्ष में था, जबकि दूसरा वर्ग उपरोक्त साथ–2 यूरोपीय ज्ञान विज्ञान व साहित्य के पक्ष में भी था राजा राम मोहन राय भारतीय साहित्य एवं दर्शन में परम भक्त तथा पाश्चात्य ज्ञान–विज्ञान व संस्कृति के प्रशंसक थे। इन्होंने कलकत्ता में कलकत्ता विद्यालय समाज की स्थापना के साथ–2 115 ऐसे विद्यालयों की स्थापना कि जहाँ भारतीय दर्शन के साथ–2 पाश्चात्य साहित्य, भाषा तथा यूरोपीय ज्ञान विज्ञान भी पढ़ाया जाता था। श्री नारायण घोसाल जी ने बनारस में जय नारायण स्कूल तथा प0 गंगाधर शास्त्री ने आगरा में संस्कृत कालिज को आगरा कॉलिज में परिवर्तित कर दिया।

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने तो सम्पूर्ण देश में दयानन्द वैदिक स्कूलों एवं कॉलिजों को स्थापित कर भारतीय संस्कृति व ज्ञान को जन–जन तक पहुँचाने का कार्य किया। इन्होंनें ब्रिटिश शासन काल में एक भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा योजना तैयार की। 1880 ई० में बाल गंगाधर तिलक जी ने पूना में फरग्यूसन कॉलिज 1886 ई0 आर्य समाज ने लाहौर में दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कॉलिज की स्थापना की। 1898 ई० में श्रीमती एनीबेंसेट ने बनारस में 'सेन्ट्रल हिन्दु कॉलिज की स्थापना की परन्तु जनसंख्या वृद्धि की तुलना में 1882–1902 तक मात्र भारत में पांच विश्वविद्यालय ही थे। 1937–1947 ई० तक प्राथमिक, माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा के क्षेत्र में प्राथमिक स्तर पर मात्र 1,34,866 स्कूल, माध्यमिक स्तर पर 11,907, विश्वविद्यालय मात्र 19 तथा महाविद्यालयों की संख्या मात्र 433 थी। ब्रिटिश शासन में अन्त तक भारत की साक्षरता दर मात्र 12 प्रतिशत थी।

एक तरफ जहाँ विभिन्न भारतीय समाज सुधारक स्वतन्त्रता आन्दोलनों के साथ –2 शिक्षा के क्षेत्र में भी अपना योगदान दे रहे थे वही नव्य वेदांती विवेकानन्द जी, टैगोर, श्री अरविन्द घोष, महात्मा गांधी आदि भी अपने शैक्षिक दर्शन के माध्यम से शिक्षा को जन–2 तक पहुंचाने का कार्य कर रहे थे। स्वामी विवेकानन्द जी अपने देशवासियों की अज्ञानता और निर्धनता से बहुत चिन्तित थे और इन्हें दूर करने के लिए इन्होने शिक्षा भी आवश्यकता पर बल दिया। इन्होंने व्यावसायिक शिक्षा के साथ पश्चिमी देशों के विज्ञान और तकनीकी शिक्षा को सीखने पर बल दिया ताकि हम अच्छे डॉक्टर, इंजीनियर, वकील अध्यापकों के साथ–2 अच्छे नागरिक भी तैयार कर सके। रवीन्द्रनाथ टैगोर जी ने अपनी पुस्तक शिक्षा हेर फेर के माध्यम से तत्कालीन शिक्षा में विभिन्न दोषो को उजागर किया तथा अपने शैक्षिक विचारों को मूर्त रूप देने के लिए 1901 ई0 में बोलपुर में निकट 'शान्ति निकेतन आश्रम में ब्रहाचर्य आश्रम स्थापना की, जो कि वर्तमान में विश्व भारतीय विश्वविद्यालय के नाम से विश्व विख्यात है। यहाँ पर पूर्व प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च स्तर की शिक्षा अर्न्तराष्ट्रीय ज्ञान–विज्ञान व तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था है।

महात्मा गाँधी जी ने बेसिक शिक्षा के माध्यम से प्राथमिक निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा का सिद्धान्त दिया। जो कि वर्तमान में दिखाई देता है। श्री अरविन्दों जी ने इन्टीग्रल एजुकेशन सिद्धान्त देकर भारतीय शिक्षा को एक क्रमबद्ध रूप देने का प्रयास किया। मदन मोहन मालवीय ने बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय (1916 ई0) में सभी पाठ्यक्रमों में भारतीय भाषाओं के साथ विदेशी भाषाओं की शिक्षा की व्यवस्था की। इन्जीनियरिंग की विभिन्न शाखायों खोली, मालवीय जी का नारा था–''हिन्दी, हिन्दू, हिन्दूस्तान'' वे हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के पक्षधर थे।

इस प्रकार विभिन्न भारतीय दर्शनिकों शिक्षाविदों ने शिक्षा की व्यवस्था कर तत्कालीन भारतीय नवयुवकों में स्वाधीनता के प्रति नवचेतना का लाने का प्रयास किया। शिक्षा प्राप्त करने के बाद विदेशी भाषाओं के ज्ञान के पश्चात भारतीय जनता विदेशों में होने वाली विभिन्न क्रांतियों के बारे में जान पाई। तथा 200 वर्षो की गुलामी की जंजीरों को तोड़ने के लिए अपना सर्वस्त्र बलिदान करने के लिए तत्पर हो उठी। धीरे–2 ही सही भारत में ब्रिटिश शासकों द्वारा भारतीयों को शिक्षा व्यवस्था का प्रबन्ध करने के लिए बाध्य होना पड़ा जिसका परिणाम हमारे लिए अत्यन्त ही सुखद रहा है।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.16

सन्दर्भ सूची

1. मालवीय, डा० राजीव. शिक्षा दर्शन एवं समाजशस्त्रीय पृष्ठभूमि.
2. लाल, रमन बिहारी. शिक्षा में दर्शानिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त.
3. लाल., शर्मा. शिक्षा का इतिहास विकास एव समस्याएं.
4. गुप्ता, डा० एस०पी०. भारतीय शिक्षा का इतिहास, विज्ञान एवं समस्याएं.
5. चन्द्रा, डा०एस०एस०., रावत, डा० वी०एस०. इन्डियन एजुकेशन डवलपमेन्ट प्रोब्लम इश्यू एण्ड ट्रेन्ड्स.
6. वर्मा, डा० जी०एस०. भारत में शैक्षिक प्रणाली का विकास.

17

India is A Global Knowledge Superpower

Dr. Kiran Pradeep

Former Principal, HOD, Drg. & Ptg. Associate professor

Kanohar Lal Snatkottar Mahila Mahavidyalaya, Meerut

Email: kiranpradeep3@gmail.com

Abstract

National Education Policy focuses on making 'India a global Superpower'. Experimental learning days are being encouraged under this Policy. Language of learning is the choice of state/region /student.If we look through the present scenario the NEP-2020 gives stress encouraging online learning by providing a proper digital infrastructure. It proposes to set up more Virtual Labs. Several free e-Learning platforms have been developed by the Government of India & these Free e-Learning platforms aim to make education accessible to each learner. With the help of these Applications and Government programs, youth can not only enhance their knowledge but also can get their training to use technology which will help them in improving skills and making e-Contents. We are sure that technology, today, has been advanced so much that the geographical gap is bridged with the use of digital tools .

Keywords

Flexibility, Value-based, Freedom of Language, Flipped classroom Method, Extensive use of technology, Equity system.

National Education Policy focuses on making 'India a global Superpower'. This policy was first implemented in 1965 at the time of the Kothari Commission by Dr. Kothari , President of UGC , revised in 1968 ,again some of the parts were revised in 1992 .Now in 2020 this policy had been completely revised by the Ministry of Education .National Education Policy was reviewed by P.M Narendra Modi on 1st May, 2020 and launched on 9th July 2020.The announcement of the policy was made by Prakash Javadekar, Union Ministers of Information and Broadcasting Minister &Ramesh Pokriyal, Human Resource Development Minister. This was drafted by a panel of experts led by K. Kasturiranjan, Former Chief of ISRO. National Education Policy aims at making "India a Global Knowledge Superpower"{1}

Key Points of Policy

- Multidisciplinary and a holistic education{Humanities+Arts+Science+Environment+Engineering+Medical etc.}
- flexibility
- emphasis on conceptual understanding rather than rote learning and learning
- Students, Teachers and Parents centric
- Value-based
- Freedom of Language

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.17

- Credit System {Two Degrees in one Year}
- Flipped classroom Method
- Focus on regular formative assessment for learning
- Extensive use of technology
- Equity system
- Strengthening the AanganWadi Centres
- Upgradation of Multidisciplinary Education &Outstandig Research with continuous assessment
- Life skills such as communication, cooperation, teamwork etc.
- Conceptual Understanding with encouragement for innovation and out-of-the-box thoughts

Key Areas To Be Focus

- From Students Point of View
- From the Teachers' Point of View
- From a Research Point of View
- From an Institutional/ Administration Point of View

Bag-less learning experimental learning days are being encouraged under this Policy . Language of learning is the choice of state/region /student. In order to reduce the Importance and stress of Board Examinations, Exams are being conducted in two parts Objective and Descriptive . There is no Hard separation among 'Curricular',' Extra Curricular' or 'Cocurricular' among 'Arts', 'Humanities',& 'Science' or between 'Vocational 'or Academic Streams.

System in Higher Education -There is a Four Years Bachelor Degree with Multiple Entry and Exit Programmes.

1. Certificate after one year
2. Advanced diploma after two years
3. Bachelor's degree after three years
4. Bachelor's with research after four years

- Postgraduation either 1 Year or 2 Years
- M Phil. The program shall be discontinued
- All Higher Education Institutions have to be Multidisciplinary

ABC {Academic Bank of Credit} is a system that has been established to store the credits in a digital way , earned by a student from various recognized higher Educational Institutions. These Institutions are offering undergraduate and Postgraduate programs with High-quality Teaching ,Research and Community Engagement . High-performing Indian Institutions /Universities are being encouraged to set up their campus in Abroad as well as selected universities in the world are facilitated to set up in India.

Overhaul Development of Personality & Human Values i.e.

Knowledge + Morality + Logic + Empathy + Sympathy + Emotions

More Holistic & Multidisciplinary Education can be discussed within 5 Cs & 5 Es-

- Critical Thinking
- Creativity
- Curiosity
- Communication
- Collaboration
- Engage
- Explore

- Express
- Experience
- Excel

Critical Thinking

- ➢ Clarity-details and Examples
- ➢ Accuracy should be directly related to facts
- ➢ Precision-specific & Exact
- ➢ Relevance-thinking should be related to facts
- ➢ Depth-related to predicted Challenges
- ➢ Breadth space for a second opinion
- ➢ Logic-Senseful to others
- ➢ Integrity-fairness and openminded
- ➢ Significance-centered to the main theme

Questions can be raised to know the exact Critical Thinking

- ➢ Who said the words whether written or oral ?
- ➢ What did the speaker say?
- ➢ What did the speaker say?
- ➢ When did the speaker say?
- ➢ What did the speaker say?
- ➢ How did the speaker say

Creativity

Creativity is undoubtedly an asset for Education as well as for institutions. It's positively correlated with work performance, leadership potential, career achievement, and mental well-being. Its-

- ➢ Guided by passion /imagination/empathy etc.
- ➢ Having a high level of emotional intelligence
- ➢ Creating the "big picture"
- ➢ Preferring visual communication of forms
- ➢ Applying various colors of life

Curiosity

Curiosity is having a strong desire to learn or know something. It is desire, a key ingredient to know or learn and the ability to connect various pieces of information. Its-

- ❑ A quality related to inquisitive thinking
- ❑ A quality associated with human development
- ❑ A process of learning and desire to acquire knowledge and skill
- ❑ A motivation to desire for information

Communication

Communication is the act of giving, receiving, and sharing information — in other words, talking, writing, and listening or reading. It means to transfer one's feelings, emotions or thoughts which is a two-way process .If we go through it deeply we find that each and everything around us whether living or non-living communicates in its own way but our duty is to stay tuned to accomplish what is being communicated to us.

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.17

Communication Media

1- Verbal Communication – [A]Spoken Words - Oral [Speaking & Listening]
[B] Written Words[Printed Books,Digital Media,Website]

2- Non-Verbal Communication- {Facial Expression, Gestures,Body Language Silence etc.}

3- Virtual Communication- {Direct E-communication}

Collaboration- It is to work with another person or group in order to achieve a specific goal Important skills for collaboration are Trust, Acceptance of new ideas open-mindedness,Communication power,Broad thinking , self-awareness, Adaptability, Discussion,Technical knowledge, etc. Collaborative methods are process, behavior, and conversations that relate to the collaboration between individuals ways to lead a high-performing team and collaborate with them most effectively.A few methods are - getting everyone on the same page, setting expectations, use of tech tools, integrity, holding of effective team meetings, etc.A few main Collaborations are Social Collaboration [the process through which multiple people or departments can interact to achieve a common goal], Community Collaboration[a process that makes it possible to reach a goal that can't be achieved by one person or department], Cloud collaboration [a process in which team access /upload projects on and send their works on a cloud-based digital platform], Virtual collaboration [online process to contact virtually without face to face interaction, enabled by technology, Contextual Collaboration [together on one single digital workplace platform].

Engage -It is to provide an occupation for someone to become interested , too involved in an activity, to attract someone's interest .

Explore-to makes a systematic search carefully or to look into closely , scientifically, or examine carefully.

Express -To express is to convey clearly and intentionally what a person is thinking &feeling , either verbally or in writing in which representation can be by a sign , symbol, word forms, or numbers.

Experience - Collection of activities of a person or events from which knowledge can be gathered to set one's opinion . It's the process to collect skill that is obtained from observation , surroundings, experiments, feelings, or something that happens which an effect on the creator .

Excellence-It's a quality to be outstanding and being exceptionally good at something or its state of excelling the best which could be in any era.

SDG4 {sustainable Development Goal - 4 —It's about quality education established by United Nation in 2015. It ensures inclusive & equitable quality education and promotes lifelong learning opportunities for all. It includes seven Important targets -

Such as Primary & Secondary Education, Early Childhood, Technical, Vocational ,Tertiary and Adult Education, skills for work,Equity ,Literacy ,Numeracy ,Sustainable development and global citizenship .

If we look through the present scenario the NEP-2020 gives stress on encouraging online learning by providing a proper digital infrastructure. It proposes to set up more Virtual Labs. It recommends the use of Divyang Sarthi -an educational Software provided by the Indian Government. It also recommends pilot studies for Online Education.NEP also emphasizes the use of e-learning platforms provided by Govt.of India .Several free e-Learning platforms have been developed by the Government of India & these Free e-Learning platforms aim to make education accessible to each learner. Free e-Learning platforms launched by the Govt. are—

- ❑ e-Vidya Program- It's a very special program for multi-mode access to online education that was launched on 17th May 2020 under the PM e-Vidya program realizing the importance of digital education in Modern India
- ❑ DIKSHA- [One Nation One Digital Platform]- Diksha: This is an initiative of the National Council of Educational Research and Training, Ministry of Education, Government of India. DIKSHA can be accessed at diksha.gov.in by learners and teachers across the country
- ❑ TV Channels- SWAYAM PRABHA

- e-PG Pathshala: Executed by the UGC. It's an initiative taken by the MHRD under its National Mission on Education through Digital tools. The platform, pp.inflibnet.ac.in provides interactive e-content in approximately 70 subjects of all streams i.e. Science, Social Science, Art & Humanities, Fine Arts, etc.
- Swayam- SWAYAM- To start the best practices in Online Teaching-Learning NIOS has been identified as one of the partners for the National MOOC initiatives for SWAYAM {Study Webs of Active Learning for Young Aspiring Minds } UGC is one of the national coordinators of SWAYAM & INFLIBNET is the technical partner for UGC-MOOCs.
- e-ShodhSindhu: All academic Institutions which are registered at the AISHE portal can be required to register on the Online e-Resource Requisition System (http://ess.inflibnet.ac.in/oes) by using credentials. The other Institutions that do not have login credentials, may email to eshodhsindhu@inflibnet.ac.in. It will allow Faculties to access more than thousands of books, and peer-reviewed journals along with several bibliographies, citations, and factual databases.
- e-Adhyayan (e-Books)—e-Adhyayan is an online platform that provides more than 700 e-Books for Post-Graduate students. All the e-Books, which we read one-Adhyayan, are derived from e-PG Pathshala courses.
- DAISY -{Special e-Content for Visually and Hearing Impaired }- DAISYenabled 'talking books for visually impaired learners.

With the help of these Applications and Government programs, youth can not only enhance their knowledge but also can get their training to use technology which will help them in improving skills and making e-Contents. We are sure that technology, today, has been advanced so much that the geographical gap is bridged with the use of digital tools that made us feel as if we are at the same place where the activities are going on. Virtual meetings /Webinars and communicating with Professors are playing an important role in the present scenario.

"A good educational institution is one in which every student feels welcomed and cared for, where a safe and stimulating learning environment exists, where a wide range of learning experiences are offered, and where good physical infrastructure and appropriate resources conducive to learning are available to all students."

NEP-2020 envisions an overhaul Education system to overcome These challenges

- Unsystemized large number of Universities with incompetent staff
- Less Emphasis on learning of cognitive skill /Numeracy Skill & Lack of critical thinking
- No system in the selection in of streams/Subjects
- Merit-based career progression without needful knowledge
- Language problem
- Limited Teachers, resources and infrastructure
- Less stress on experiments , Research, vocational or professional skill
- Stress on Bookish knowledge & Degree

References

1. Vision of National Education Policy

   "*This National Education Policy envisions an education system rooted in Indian ethos that contributes directly to transforming India, that is Bharat, sustainably into an equitable and vibrant knowledge society, by providing high-quality education to all, and thereby making India a global knowledge superpower. The Policy envisages that the curriculum and pedagogy of our institutions must develop among the students a deep sense of respect towards the Fundamental Duties and Constitutional values, bonding with one's country, and a conscious awareness of one's roles and responsibilities in a changing world."National Education Policy 2020 Ministry of Human Resource Development Government of India, Page,07*

18

Four R: Re-Awakening, Realisation, Returning and Reunion in The Novel Possession

Dr. Apeksha Tiwari
Assistant Professor, Department of English
Km. Mayawati Government Girls
PG College, Badalpur, GB Nagar
Email: sharmaapeksha1183@gmail.com

Abstract

Literature is the reflection of human action. It always emancipates human life and its relation with culture and values. Many Indian authors penned the socio-cultural concern of Indian people. East–West encounters, tradition versus modernity, alienation, immigration, degradation of human values, art and culture, and technological upgradation are the crucial subject of their choice. Kamala Markandaya is also one of the writers who raise a such concern through her novels. Her novels present the amalgam of dilemma of thoughts of a duel world. One of her novels Possession offers such predicament of an artist Valmiki who finds himself in the deep darkness of two worlds. One is his inner world of consciousness and the other is the outer world of materialistic happiness and progress. Val's agony is the agony of every Indian who finds himself in a lurch and craves for coming out. The present research paper is an attempt to find the reawakening, realization, return and reunion of people like Val to their homeland is an example of such artists who first see the dreams of recognition in the world scenario but when found themselves in the stringent locks of rules and regulations and in closet observation crave for returning.

Keywords

Crucial, Immigrant, Artist, Reawakening, Returning, Recognition, Realization.

Kamla Markandaya is the most popular Indo- Anglian novelist. Her worldwide recognition and fame are globally accepted. Her novels present different perspectives on life and its genre. Through her novels, she reveals how the agonies of tenants, farmers, laborers and of the artists can be the same even across the boundaries of nation, religion, gender ,class, etc. In this paper, we will examine the hopes and aspirations of a young artist Valmiki who lives in a placid environment in the company of a Swami but is brought out of England by an aristocratic English lady Caroline Bell. Very cleverly she utilizes his talent for paintings and cuts his relations with his own.

In a striking way, Markandaya highlights how Indian talent is usurped by Western powers. How do they lure our talent in the name of progress, up gradation, money, luxury, comfort and convenience? Once they were trapped in such allusions the real game of exploitation started. They hire our skilled artisans on low wages against the dollar and get hidden benefits. Somewhere the greed of the dollar allows the artist to do services in a foreign land. At first, the gust of wind of materialism feels them soaring untouched heights of future endeavors but soon makes them realize the

emptiness, the futility of such progress. They feel the deficiency of their own, the warmth, love and affection of family which is altered for gaining dollars. This urge of my own never leaves even in a mass or in a crowd of glittering world. This novel offers the essence of superiority of the Indian philosophy of spiritualism over materialism.

As in the novel Possession, the protagonist Valmiki was trapped by an arrogant aristocratic English lady Caroline Bell. She takes him to England and exploits his talent of painting for her own personal selfish gains. Actually, Valmiki was a poor neglected lad so he felt happy in that luxury but soon he discovered that the atmosphere of luxury was stifling his inspiration and he is losing his creativity. Caroline 's possessiveness marred his natural inspiration for paintings. In his deep heart, he doesn't want to be possessed but his subordination to Caroline would give him money which he began to love for the gratification of his hedonistic taste for pleasure. Valmiki's reawakening about himself realized that emptiness is only material and the abundance of strength comes only with the spiritual teachings of swami.

Here Caroline's forceful possession of Val indicates the present forceful possession of young laborers who come to a foreign land to filling their dreams but are found unable to do so and desire to go back to their homeland but circumstances not allowed and free them for forceful possession. Even most of the cases the government is to intermediate the matter. In Val's case, his beloved Annabel gives him release but Caroline eliminates Annabel from Val's life. The final agent to Val's return to India could be Annabel but she too was eliminated. He cries in agony " Nothing he repeated – 'that is the truth, Suya. If you could look inside me you would find nothing but dead wood." (Kamala Markandaya, Possession. 205)

His own exploitation made him reawaken about himself and brought the naked truth of shallow materialism. He found himself a helpless poor creature who is a forced to work under someone's observation otherwise may kicked. Now Val's s problem is the problem of thousands of poor immigrants who first willingly go to a foreign land in the greed of earning money but once caught in some tricky connived hands then do repent. As Val's deep dejection is reflected here

" She does not care for me. She cares only for what I can do, and if I do well it is like one more diamond she can put on the necklace around her throat for her friends to admire but when I do nothing I am nothing to her , no more than a small insect in a small crack in the ground." (Kamala Markandaya Possession, P. 56)

This rejection of Caroline made strong his return to India so that he compared his present life to the original life which he lived in the placid and austere environment of Swami's teachings. Recalling the inspirations given by the swami made him anxious and assured for his own country where he was much contented and satisfied against growing materialism. He recalls the teachings of swami, a mouthpiece of the Hindu ideal of self-existence in detachment and yet taking an active part in all the worldly activities.

" The Gita teaches that work is inevitable till we attain freedom and that when we attain it, we have to work as the instruments of the divine." (Indian Philosophy, P. 568)

Val is saved from Caroline's diabolism partly through the intervention of Suya his friend same as many of our Indians in Saudi Arabia and other countries were imprisoned and not allowed to come here released by the intervention and effortsof our former foreign minister Late Sushama Swaraj. Actually, lack of facilities, comforts, and the lure of having a good ideal life push to someone to work out of the country or state but when man, nature, or circumstances made crisis entrenched and torments him then he remained unable to cope with the circumstances. Homecoming or coming to their own roots is deeply rooted in Indian soil as we have witnessed many examples of such persons who settled down in foreign countries but at the time of death or after dear they want their own or their ashes should be thrown in the Ganga. Such craving for reunion of their own never be removed in them. We may not denied the fact that being an immigrant only gets humiliation or torments out of the country, not the name and fame for which they settled there. But in most of the cases, we find harassment, humiliation, alienation and racism over there. If this discrimination or sense of superiority can be prevented on the starting level or way back to the homeland then the casualty of cases can be checked, and the dignity of people and nation can be maintained. In post-modern times we

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.18

are in tune with the hype of materialistic happiness, and techno-based comforts and are busy in digital virtual world. Neither we want to indulge in such grave issues of human concern nor want to. But reawakening should not be let down in one heart.

As in Valmiki's case of going with Caroline was not an individual decision of his but his parents involvement was also. They were poor people who do not know the value of art and culture and the dignity of the individual they only know the value of money to meet their needs. So in return of Valmiki got some amount in through. Caroline's colonial representation becomes the core of the clash and cause of return she wants to possess him and his soul she never allows Val to do against her will. Val remains a pathetic figure, a plant that is planted in an artificial environment and to flourish for charms. Caroline's superior and uncompromising in her nature is as in modern times multinational companies have their signed contracts with their employees and one may not violate even in adverse circumstances. Her visit to India and asks Swami to return her Val is symbolic here. She forces swami by saying that she has paid him as an object so he can not violate. Actually Caroline utilities the illiteracy of Val and especially of his parents. She compels the Swami for Val .

Swami says "there is no compulsion for Val to say.....then he will be free to go....But he will never stay until he has an equal freedom to return." (Possession, P 232)

Therefore Val's decision to stay with swami and rejection to go back with Caroline can be seen in a way that he realized his own value and worth and again does not want to commit the mistake of separation with his own family. He is the son of Indian soil and knows the values of unity, bond and affection and may not flourish in a forfeit pseudo-life. His reunion with his own country is the victory of spirituality over materialistic comforts.

Critic K R. Chandrashekharan Comments:

"The struggle between the Swami and Caroline for the control and custody of Val truly becomes symbolic of the struggle between the Indian spiritual values and Western materialism for the art or even the soul of India." (East and West in the novels of Kamala Markandaya. P, 330)

Val realized his inner self, his mentor, and Swami's teachings for truth and never let down his morals and come back to India for his survival. Thus he grows to be a better more mature, when finds that sacrifice and suffering can also bring happiness.

K. S. N. points outs that happiness is found in "self-abnegation and non possession."(P . 41)

Thus Val's realization reunites him and his reawakening represents thousands of people who are captivated by this charm of money but may not trace the sacrifice and crude realities beneath it.

References

1. Markandaya, Kamala. (1963). Possession. Putnam: London. Print.
2. Markandaya, Kamala. (1963). Possession. Putnam: London. Print.
3. Radhakrishnan, S. (1956). Indian Philosophy. Vol.1(1923): Rpt. George Allen and Unwin: London.
4. Markandaya, Kamala. (1963). Possession. Putnam: London. Print.
5. Chandrashekhar, K.R. (1977). "East and West in the novels of Kamala Markandaya." Critical Essays on Indian Writings in English. Ed. M.K.Naik. Dharwar : the University of Dharwar Publications. Print.
6. Rao, K.S.N. (1977). Ariel, 8.1. Jan. Print.

19

Immigration and Exile in The Select Fiction of Samuel Selvon

Dr. Preeti Singh
Assistant Professor, Dept. of English
Kanohar Lal Snatkottar Mahila Mahavidyalaya
Meerut
Email: alivepreeti@gmail.com

Abstract

Samuel Selvon's literature comprises the story of West Indian immigrants in London and through his central characters, one can learn about Caribbeans' realities in Britain.The arrival of commonwealth subjects in England after World War II was considered, by the protagonists as well as other characters in Selvon's novel, as a possibility to form positive inter-racial relations to cope with the problems of decolonization, yet it signals the progressive failure of such possibility. This research paper endeavors to explore the impact of migration on the male protagonists in the select fiction of Samuel Selvon, and also aims to analyze the experience of exile commonly shared by Selvon's main characters.

Keywords

Immigrants, Exile, Racial discrimination, Commonwealth, Homeland.

Kenneth Ramchand, in *The Lonely Londoners*' 'PrefaceNote,' writes about the immigrant wave: "by 1956, when *The Lonely Londoners* were first published, the annual figure for migrants from the West Indies had reached over 25,000. This was the period when extended families would materialize in the thin air of Waterloo Station as a disconcerted" (*The Lonely Londoners*' PrefaceNote). As Tolroy finds in the following scene described in the *The Lonely Londoners*:

"Oh Jesus Christ," Tolroy says, "what is this at all?"

"…then he says: "But what Tanty, Bessy doing here, ma? and Agnes and Lewis and the two children?" "All of we come, Tolroy," Ma said."(*The Lonely Londoners*, 29).

Kenneth continues: "by the mid- 1950s the traditional opendoor policy to Commonwealth citizens began to be questioned, and in November 1961 a Commonwealth Immigrants Bill to restrict this flow was introduced in the House of Commons…. presents a surge of panic arising from antiimmigration rumblings in the United Kingdom" (4-5). What Kenneth depicts is the base of *The Lonely Londoners*, as all the immigrants were unaware of what they are going to endure after arrival. Seeking a footing in the strange inhospitable ground of London are even strange creatures including Henry Oliver, who arrived in "an old grey tropical suit and a pair of watchekong and no overcoat or muffler or gloves or anything for the cold"(32).

Moses Aloetta, the protagonist of Samuel Selvon's critically acclaimed novel *The Lonely Londoners* and his 'boys' inhabit a nightmare world, full of uncertainties. They faced all sorts of problems physical and psychological,

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.19

ranging from housing, job, money, and sex to starvation, exile, alienation, displacement and racism. Moses describes, how they are treated in London; only as colored masses and not individuals. Life for them is a perpetual struggle for sheer survival in London. None of them really succeeds, some flop utterly, while many of them wear out in the struggle. Moses, spent all his London years in fear and frustration. This feeling is described by Selvon, as the novel opens, soon Moses was fired from his job for no valid reason: "A few days after that the boss call Moses and tell him that he sorry, but as they cut down the staff and he was new he would have to go" (29). Getting a job was not an easy task for the immigrants. Moses casually informs the newcomer Galahad about employment exchange: "It ain't have no place in the world that exactly like a place where a lot of men get together to look for work…. Is a kind of place where hate and disgust and avarice and malice and sympathy and sorrow and pity all mixed up. Is a place where everyone is your enemy and your friend" (45). Galahad had the same feelings, when he arrives in London and realizes that he has no money, work, place to sleep, and a friend or anything. He expresses his feelings: "and a feeling of loneliness and fright come on him all of a sudden. He forgets all the brave words he was talking to Moses, … he frightens to ask questions of any of them. You think any of them bothering with what going on in his mind?" (42).

Moses and his fallers, observe the London as a place: "divided up in little worlds, and you stay in the world you belonged to and you don't know about what happening in the other ones except what you read in the papers" (74). They all lived a fragmented life in London, experiencing psychic crashes, hysteria and eccentricity. For instance, the insecure Lewis develops a fixation that his wife entertain lovers while he is on his night-shift duty. Harris, on the other hand, "puts on a proper English three-piece suit, a hat, briefcase and umbrella, and lives in constant fear of embarrassment by his 'less conforming' own countrymen."A haggard and haunted Bart combs the city hoping to find his lost love Beatrice"(110). The smiling Cap's innocent face masks a ruthless determination to exploit and survive in a city that has no meaning and structure. Moses, too: "sigh a long sigh like a man who lives life and see nothing at all in it and who frighten as the years go by wondering what it is all about" (110). There is also, as the third person narrator suggests with vividness, the unspoken fear felt by Whites, of contamination: "when Moses sit down and pay his fare he takes out a white handkerchief and blow his nose. The handkerchief turn black…" (23).

Selvon also portrays his characters as victims of violence; racial violence in particular. The force of color prejudice and race bearing against the 'boys', is shown in the incident and through conversation. These incidents explore the divorce of personality from flesh and the separation of self from the body which racism affects. Bart in *The Lonely Londoners* is chased from his white girlfriend's house. He spends the rest of his time walking and searching all over the city, to find her, until he becomes haggard and haunted. Bart's madness and fractured-self afflicts the conscience of other fallers in different ways. Galahad is also another frustrated figure because of his 'color' and racism, he suffered a lot. For him, it is the 'black color' that is causing "miserly all over the world" (72). Joseph, married to an English girl has suffered the same for having black children: "Is a big fight every day because the other children call them blackie" (131). The worst example is of Five, who has been given the name Five Past Twelve, for being so black: "it had a filler call Five Past Twelve. A Test look at him and say, 'Boy, you look black like midnight.' Then the Test take a second look and say, 'No, you more like Five Past Twelve' "(110).

Moses describes the final deterioration of mind and soul as a postcolonial subject. His excitement about London life fades away like an illusion. He expresses his fear of emptiness that time leaves on them: "and another thing, look how people do dead and nobody doesn't know nothing until the milk bottles start to pile up in front of the door" (131). It is his ex-colonial mental attitude that he desires to fight in the novel.He is always nostalgic and wishes to return to his homeland. He even more felt trapped within London because he is incapable of mobilizing the financial wherewithal to resettle in the Caribbean. Moses is frustrated as he feels he has stayed too long in London, and isn't able to cope with the changed realities of his life in England. Eventually, he faced with an intense sense of displacement and alienation. Moses, thus gives a version of a story common to a large number of Caribbean fallers in London, but at the same time turns it into a metaphor for the loss of cultural pride and failure of identity to come to terms with colonialist legacy.

Moses Ascending explores almost similar fear and frustration of Moses as a protagonist, but here with more concern with him rather than with other characters. Maria Grazia Sindoni, talking about London and the West Indian

experiences quotes Moore in *Creolizing Culture* that:"the city of exile is the great solvent which produces a black race out of the mingled elements coming to it from America, Africa, the Caribbean, and even Asia.In a social context where all 'blacks' are treated alike, they will to some extent begin to feel alike" (*The Chosen Tongue*, 97). She further elaborates: "Despite the essentialist trait he confers on his argument, referring to a monolithic "race" and despite his emphasis on the role of the city as a coalescent factor in forming a community consciousness, he highlights the fear of homologation that affected early immigrants in the post-war period. The uncanny city is thus envisioned as a powerful accelerator of processes of conformation to colonialist stereotype, a legacy of imperialist rhetoric" (303). Moses clearly belongs to this early immigrant generation. Moses as a West Indian expressed an ambivalent position as to his life in Britain, and in fact, deeply resented the 'cold treatment' that more after became an open discrimination.

Moses, in *MosesAscending*, reappears as a person, always changing his unstable identity into a different and camouflaged version of himself. He is never sure about his present and even about the future. Near the end of *The Lonely Londoners* Moses grew impatient with his role as unofficial welfare officer.The 'boys' visited his room nearly every Sunday morning.'Lock up in that small room, with life and London on the outside, he used to think how to stop all of that crap.'*MosesAscending* gives us a Moses moving away from 'the boys,' an older man anxious to be left alone and in peace:

The only thing I didn't want was to have any of the old brigade living in my house, and the rumor went around town that I was a different man (*MosesAscending*,4).

Moses in *The Lonely Londoners* indeed had been a father figure who absorbed the suffering of the group but Moses now, in *Moses Ascending* is 'a different man'. He resentfully thoughts about: "How people want you to become involved, whether you want to or not" (14).' Third World, he said thinking about his immigrant fallers, mournfully: "It hard enough to live in one, and you all making three" (82). Sindoni in '*CreolizingCulture,*' about the increasing number of immigrants in Britain opines:

The initial West Indian wave of immigrants that Selvon portrayed in *The Lonely Londoners* had been considerably swelling in the meantime, and other significant ethnic minorities - such as Asian groups - appear in *Moses Ascending*. Moses is hence confronted with a changed social context, and he is also a different man (as he anxiously repeats throughout the novel) both economically and socially (213).

In his new social context, Moses needed to readjust himself to the changes that seem to run faster than his ability to cope with them. His troubles start when he, with his paltry savings, buys a house in Shepherd's Bush in London. At last, he is at home, and after twenty years in England, he has finally "arrived." He rents out the rooms of the house and starts living in one. Problem arises when Galahad, Brenda and other activists of the Black Movement make the basement as their headquarters and Faizull, a Pakistani immigrant, on the first floor, illegally shelters other Asian immigrants. Moses was threatened and blackmailed by Faizull for his involvement in a smuggling racket:

In this life, you always feel safe when something happens to other people and nothing happens to you, but whatever your station or race, color or creed, your turn got to come, and mine was here, now. How would they bring about my demise…. Killing a black man easy as kissing a hand... (63).

Black Rights Movement was another cause of his fear and frustration, when a Black Rights activist let Moses languishin jail for publicity of their Movement, Galahad too, was not willing to help him for the purpose. Moses remembers: "lying on my bunk in my cell the night and thinking that if I did keep my adequate and stay at home.... I would not have got myself in this shit. It just goes to show how right I was all the time to have nothing to do with the black brotherhood" (38-39). It is also shown to be hypocritical as it accepts the money of a White man for Moses' bail without any morality. But Moses accepts his faults: "Faizull left me to my thoughts, and I don't have to tell you what them was. First Black Army Headquarters, now a sanctuary for illegal birds of passage. When you crooked you bend, as we say in Trinidad, meaning when you are in the shit you sink down deeper, and monkey smokes your pipe" (66).

Resistant to Black Power Movement Moses nevertheless allow us several indications of violence and white racism to which Black Power is one response. Moses, being black is in constant fear of the police and their brutality,

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.19

and experiences it on several occasions. They lock up Moses, a mere spectator, when a fight breaks out during the Black Power demonstration in Trafalgar Square. The police descends on the crowd:

A set of blacks was being towed, propelled, and dragged across Trafalgar Square. The place like it was full up of police as if the whole metropolitan force was lurking in the side streets waiting for signal. Blue lights flashing, radio telephones going, sirens blowing, Alsatians baring their teeth for the kill(36).

On a later occasion, they arrest Galahad, Brenda and BP, when asked for a reason, Bob, who is white, answers: 'Much against my will, I gravely suspect it is only because they are black" (96). No Whites were captured. Whites are seen as of higher standing than blacks in Britain. Faizal declares: "It is always good to have a white man around it allays suspicion" (74). Commenting on the experiences, Moses outlines important aspects of the impact of violence and racism on black identity: "if I tell you about the things that happen to me in this country! The white man spit on me, they lock me up in jail and throw away the key, and they refuse to give me any work. I have some harrowing and terrifying experiences." (47-48)

Sindoni, in *CreolizingCulture*, writes about racial violence in Moses Ascending:

Racial conflicts are an unavoidable and somewhat invisible community of *The Lonely Londoners* is in *Moses Ascending* fully discernible in the social panorama of 1970s Britain. In fact, open racial violence is presented in *Moses ascending*, and the role of the police .... acquires a more visible and threatening power in *Moses Ascending*. An increasing violence perpetrated by the police without the reason (and, as such, more frightening and unpredictable) and the threat of jail are other significant tropes in Moses Ascending. (Sindoni, 216-217)

Moses asserts the similar views: "…but when you are a black man, even though you abide by the laws you are always wary of the police" (29). Sinfield, in *Literature, Politics and Culture in Postwar Britain*, finds the roots of apparently unmotivated violence in Britain in the dissolution of the empire. He writes: "With the collapse of colonialism, much of the violence comes back home…. Now colonial violence, physical and psychological, was reproduced in Britain, in housing, work and community relations, affording a consolation for the loss of empire and dividing working people against them." (Sinfield, 125). Thus, Moses had very few means to cope with the harsh realities of a system that was getting more and more intolerant and racist every day. Moses concludes, in psychological terms, his experiences of London and the 'Mother country':

I had a kind of sad feeling that all black people were doomed to suffer, that we would never make any headway in Brit's….it was a dismal conclusion to come to, making you feel that one and one make zero. It wasn't so much depression as sheer terror really, to see your life falling to pieces like that (35).

Samuel Selvon, thus provides the readers with a vivid and realistic picture of the life of Caribbean immigrants in London. His protagonists are the true embodiments of a strong sense of displacement and exile. Their experiences make up his novels.

References

1. Dyer, Rebecca. (2002). "Immigration, postwar London, and the Politics of Everyday Life in Sam Selvon's Fiction." *Cultural Critique*. 52. Fall.
2. Ramchand, Kenneth. (1996). "Celebrating Sam Selvon." *Journal of Modern Literature.* Vol 20. No.1. Summer.
3. Selvon, Samuel. (1985). *A Brighter Sun*. Longman: London. Print.
4. - - -. (1975). *MosesAscending*. Heinemann: London. Print.
5. - - -. (2007). *The Lonely Londoners*. Longman: New York. Print.
6. Sindoni, M. Grazia. (2006). *Creolizing Culture: AStudy on Sam Selvon's Works*. Atlantic Publishers: New Delhi. Print.
7. Sinfield, A. (1989). Literature, Politics and Culture in Postwar Britain. Blackwell: Oxford. Print.

20

Rights of Women and Their Offspring Under Live-in Relationship

Urmila Devi
Research Scholar
M.J.P.R.University, Bareilly
Email: jatavurmila1976@gmail.com

Prof. Dr. Amit Singh
Supervisor-Associate Professor
M.J.P.R.University, Bareilly

Abstract

The basic idea of a live-in relationship is a relationship where two-person of homogenous or heterogeneous gender live together under the same roof or a shared household as a couple, with or without any intention to establish permanent relationship in the future. It need not necessarily involve any sexual relation. Critics of this trend state that it's a temporary and an unstable form of relationship. We must acknowledge that this tradition of living in relationship is not something alien. It has been practiced for ages in our society. We can take the examples of the nawabs, princes and wealthy men in India, who not only had several wives but also several live-in relationships, in their zenanas. The differences between live-in relationships during those times and today are that the former was perfectly normal and not considered immoral. Concubines were kept as a source of man's entertainment and relaxation. Consequently, that practice somewhat died out after bigamy was declared as an offense. But as the time passed by, people become more aware of their rights and owing to that, a today's concept of life in a relationship arose. Living in relationship is finding recognition through implied provisions of different statutes that protect property rights , housing rights, and maintenance rights. Live –in relationship is a contract in which partners can determine their legal rights. However, when it comes to the rights of a child born under such a relationship, there is no uniformity while protecting the rights of the child. Couples in the relationship associate it with the ideologies of individualism, freedom, and liberty.

Keywords

Live –in relationship, Maintenance rights, Property rights, Rights of children.

Introduction

There is no single piece of law in India that governs live-in partnerships specifically and no legislation that defines the responsibilities as well as rights of the spouses in a live-in relationship or the legal standing of any offspring that they could have. Since there is no formal classification of a live-in relationship, the legality of these kinds of ties is also unknown. The partners in live-in relationships are not granted any specific rights or duties under Indian law. The notion of a live-in relationship has, however, been defined by the court via a number of judgments. Even though the law is still not clear on whether or not these partnerships are legal, it has been reviewed and changed to give partners certain rights so that they don't get taken advantage of. India has seen significant upheaval on many fronts during the last few years. Live-in relationships, sometimes called "De Facto Marriages," are one of them because they remove the barriers to emotional and physical closeness posed by traditional marriage. However, in the Indian social structure, marriage is

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.20

viewed as a sacred and unadulterated union between a man and a woman, as it has been since the Vedic era. It has been a perpetual battle between morals and culture on the one hand, and the Supreme Court's independently progressive rulings on the other. Indian society has developed over time and is continuously changing now.

Women's Rights in Live-in Relationships

Maintenance rights: The recommendations of the Malimath Committee, Section 125 had been included in the CrPC in 2003 to modify the definition of "wife" and expand it to encompass women who were engaged in a live-in relation. This ensured that their financial requirements would be met by the companion if woman was unable to support herself or when the couple became estranged. Similarly, married women are protected from all sorts of violence under the Domestic Violence Prevention Act of 2005.

Maintenance would be money paid by the husband to the wife when she is unable to support herself during wedding or after divorce or separation. The following are some of the laws that regulate maintenance:

Hindu Marriage Act of 1955; Hindu Adoption & Maintenance Act of 1956

- The Muslim Women (Protection of Their Rights upon Divorce) Act in 1986.
- The Parsi Marriage & Divorce Act in 1936
- Divorce Act of 1869 for Christians
- Secular legislation includes the CrPC of 1973 and the Special Marriage Act of 1954."

In the Context of Section 125 of Criminal Code

It is a fact that a woman may lose her right to receive spousal support if she enters into a cohabitating relationship with another man while being aware of the fact that the two of them do not have a marriage-like relationship and that there is a possibility that they will not get married. This is the case even if the woman enters into the relationship with open eyes. It is not required to show beyond a reasonable doubt that a man and a woman are married if the couple has been living together as husband and wife for an extended length of time. Instead, their marriage may be inferred based on their prolonged "live-in" relationship. When it is discovered that the woman was previously married to another person and that no valid divorce was obtained, then nothing can be presumed regarding their longer "live-in" relationship. This is because a wife of one person cannot remarry unless either the first person's husband dies or she obtains a valid divorce from the first person. In the situation at hand, a "live-in" relationship that has lasted for six years does not establish any kind of presumption in favor of the respondent. Because she was not the applicant's legally recognized wife, she was not eligible to receive alimony or child support from him. In accordance with other rulings, a man should be accountable for paying the woman's maintenance if they have been cohabitating for some time, despite the fact that they may not be in compliance with the legal criteria of a legitimate marriage contract.It is not right for a person to be able to take advantage of legal vulnerabilities in order to enjoy the advantages of a de facto marriage without having to accept the duties and obligations that come along with it.

Even when the parties are involved in a so-called "live-in" relationship, there is no question that maintenance may be awarded. However, in light of the developing legal situation, the only live-in partnerships that are eligible and recognized for such maintenance purposes are those in which both parties have the legal capacity to legitimately enter into a marriage. Even if they don't end up being married, they have to at least meet the legal requirements to wed each other. From that point of view, the person who has been wronged in this case can't get help.

Yamuna Bai Anantrao Adhav v. Anantrao Shivram Adhav and Another[1]

In this decision, the Apex Court ruled that it is improper to attempt to completely remove the parties' personal law from proceedings under Section 125 of the CRPC. The Court additionally ruled that the term "wife" in Section 125 should only be used to refer to a wife who is lawfully wed. This case had an effect on later legal judgments. In Section 125 of the CRPC, 1973, the Court gives the term "wife" a very limited definition.

In a later ruling, the Highest Court used the same approach in ***Savitaben Somabhat Bhatiya* v. *State of Gujarat and Others*,**[2] The Court held that there is no place to include a woman who is not officially married in the concept of "wife," notwithstanding the need to pay attention to the predicament of an unintentionally wedded woman who enters into a marriage with a man. The Bench ruled that only the Legislature could close this legislative gap. From the two decisions above, it is clear that people had different ideas about how Section 125 of the CRPC, 1973 should have interpreted the word "wife."

On the other hand, in ***Vimala* v. *Veeraswamy***,[3] The Supreme Court interpreted the word "wife" in the context of Section 125 CRPC to have a fairly broad meaning. They also decided that the main goal of this section is to make a social idea come true, and that the goal is to keep people from being homeless and unhappy. According to the definition provided "under Section 125 of the CRPC, a wife is a woman who has been divorced from her husband but has not remarried after the dissolution of their marriage. In accordance with the purpose of the section, a woman who does not have the legal status of a wife is taken into consideration within the" all-encompassing meaning of the term wife. A second spouse whose marriage is declared invalid because the original marriage continues to exist is not eligible for spousal support payments. The language of Section 125 makes it impossible to determine whether or not the term "wife" refers simply to a spouse who has been lawfully married. Because of this law, a live-in partner cannot be considered a "wife" under any circumstances. As a result, alimony or child support cannot be awarded to a woman who is cohabitating with an abusive spouse or whose boyfriend has deserted her. However, in some situations, the courts raised concern over the limited meaning of the word "wife" as included in Section 125 of the Criminal Procedure Code of 1973.

Rights of Children Born Out of Live-in Relations

The major issue of the kid's validity determines the child's right to maintenance or responsibility to support "a child born out of a live-in relationship, as well as the child's right to inheritance, right to custody of such child, and right to give such child in adoption. Therefore, it is vital to address the issue of the legality of children born out of live-in" relationships before discussing other rights of children and obligations of parents towards such children.

The purpose of this inquiry is to determine whether or not Sec-16 HMA applies to the birth of a child to a couple who are cohabitating. The culture is going through a transitional period in which the number of cases of live-in relationships is gradually increasing in order for it to be regarded as a distinct kind of social bonding similar to marriage. In the HMA, the HSA, and Sec-125 of the CRPC, neither the term "wife" nor the phrase "marriage" is defined. Even though the term "solemnization" does not have a specific definition, it is understood to refer to "a performance" that is carried out in accordance with the relevant traditional and religious ceremonies and rituals.

Smt. Indubai Jaydeo Pawar and Anr v. Smt. Draupada @Draupada Jaydeo[4]

In this particular instance, there's evidence to suggest that the applicant, In Dubai, who passed away in 1981, lived with Jaydev Pawar, who also passed away, for a significant amount of time before being married on June 22, 1981. Within the context of this connection, came into the world a child named Shubhangi. According to the documentation of the birth, the name Jaydev Pawar was given to the individual who passed away at the time of her birth as the name of her father. Under these conditions, it is possible to assert with a high degree of confidence that there is evidence in this instance to establish that Jaydev and Indubai entered into a legally binding marriage and that they gave birth to a child. The High Court affirmed the maintenance order that was to be paid to In Dubai. The court also relies on the contentions that the respondent brought up in her divorce proceedings. In those proceedings, the status of Indubai was contested on the basis of a "void marriage," not on the basis of the fact that there was no marriage at all. Therefore, it is possible that this should be interpreted as an acknowledgment on the part of the respondent that Jayden and Indubai did not have a valid marriage. If "it is determined that there is overall evidence of the long stay of Indubai and Jaydeo and a void marriage between

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.20

Indubai and the late Jaydev, then it is irrelevant whether or not Indubai was married twice before and whether or not the petitioner/Shubhangi was born before Indubai's earlier marriage was legally dissolved. I also go over the material, which suggests that" the late Jaydev Pawar and the petitioner did, in fact, get married at some point. As a result, the second wife is not eligible for any pensionary benefits because the marriage that they shared did not have legal standing. However, the benefit of legitimacy is available to the second wife's daughter Shubhangi, who was conceived during the course of such a relationship, in accordance with Section 16. As a consequence of this, she will have a claim on the property of Jaydeo that is analogous to that of Jaydeo's other legitimate offspring. Once again, the Court thought that living together for a long time was the same as being married and gave solutions based on this idea.

Maintenance Rights of Children Born Out of Live-in Relationships

Each personal law provides maintenance for the kids. The term "illegitimate" will no longer be used to describe a kid born to a man and a woman who are not married but who have been living together for an extended length of time. The law forbids "whoreson" or "fruit of adultery" and presumes legitimacy for the child's benefit. That legislation has attempted to eradicate the illegitimacy of children, as we have previously stated when talking about the validity of children born out of live-in relationships. The court has said that children are legitimate even if they were born from a legal, invalid, or voidable marriage or even a live-in relationship (except when it comes to inheriting property from ancestors). Additionally, the researcher finds that the children of live-in relationships have a legal right to request maintenance under the HAMA,1956, and the CRPC, even if statutory legitimacy has not been granted to them or even if courts do not grant them the status of legitimate. Illegitimate children have also been granted the right to maintenance under the terms of these statutes. A Hindu is required, throughout his or her lifetime, to support his or her offspring, whether they are legal or illegitimate, according to Sec-20 of the HAMA, 1956, which deals especially with the maintenance of children. As long as the kid is a juvenile, he or she may make a maintenance claim against any parent, whether the child is legitimate or not. According to the HAMA, of 1956, a person has a duty to support their unmarried daughter as long as she is unable to do so on the basis of her own income or other assets. The laws that were in effect when the person died have an effect on the law of succession.

Ajay Bhardwaj v. Jyotsna and Ors[5]

The parties, in this case, have been married since 2008 and live together. They also got married in 2008. Because of their union, two children were born into the world. Respondent No. 1 said that the petitioner was a divorced woman, despite the fact that respondent No. 1 herself was in the process of divorcing her spouse, Ajay Sharda, at the time the allegations were made. In August of 2011, the divorce was finally formalized. Before the separation in March 2011, the twins were born healthy and happy. Following the petitioner's refusal to enter into a marriage, a petition according to Section 125 of the CRPC was submitted. Maintenance for responder No.1 (and two minor children).

The issue that has to be answered in this case is whether or not the respondent No.1 is eligible for maintenance under Sec-125 of the CRPC due to the fact that they are not married to the petitioner but are in a live-in relationship. As of the day the petition was submitted, the parties did not have a marriage that could be considered legitimate. There is no room for debate about the fact that the children who are born as a result of this connection are eligible to receive child support payments. As a result, this Court does not want to interfere with the amount of interim support that the Family Court has decided the children are entitled to receive from the other parent.

Inheritance Rights of Children

According to a decision made by India's SC, a man and a woman who have been living together for an extended length of time will be regarded as married and will be able to enjoy all of their rights. In addition, children

who are born to live-in partners will be considered legitimate. Section 16 of the HMA says that children in this situation have a legal right to the things their parents earned with their own work.

Children have the right to seek support under Sec. 125 of the Criminal Procedure Code, even if the laws of their religion do not guarantee that they will receive maintenance payments. Even "if the people who live together have fallen out of love with one another, they are still responsible for providing for their children." In Bharata Matha & Ors. Vs. R. Vijaya Renganathan & Ors.[6], the SC has also ruled that "a child born out of a live-in-relationship may be permitted to inherit a parent's property, but does not have any right to claim against Hindu Ancestral Coparcenary Property".

Right to Property

The right to one's own property is fundamental to the human condition. As a result of the widespread predominance of patrilineal inheritance practices all throughout the globe, property and other rights have found their way into the hands of males, and women have been continually battling for their right to property. Therefore, the issue that should be asked is not why women should have property rights; rather, the one that should be asked is why they should not have them. According to Article 300-A of the Constitution, it is both a human right as well as a constitutional right. The ownership of property is essential to economic activity. In addition, the ultimate objective of achieving gender balance can only be accomplished when there is also economic parity between the sexes. As we have seen, the rules governing property rights have always been quite rigid, so this holds true for married as well as single women. The law was overtly discriminatory against women right up until the point that it was updated with new acts and given more progressive interpretations. Whenever it comes to the property rights of a woman in a relationship in which she lives with her partner, the issue seems to become even more problematic. Even if the Apex Court of India has given legal standing to live-in relationships, the question remains: what happens when one of the partners who chooses to leave the relationship? Is it possible that the other spouse will be homeless? Will the law acknowledge the legitimacy of children born to parents who share living quarters? Will it provide women the right to inherit property, as well as the right to receive maintenance as well as the right to demand alimony payments?

Indian society and its eminent courts are still working to discover the right answers to these problems. According to what was said before, we are able to confirm that there is not a particular statute or rule in place that governs the live-in relationship. This was done with the intention of advancing the purpose or object of the statute. The Hindu Succession Act, which was first passed in 1956, was updated in 2005 to ensure that women's rights to inherit property are protected. Regardless of whether or not she is married, this grants her rights to self-acquired and inherited property in the same capacity as a son inherits property from his parents. Therefore, regardless of whether a woman is married or in a live-in relationship, she will automatically gain the right to parental property at the time of birth, but property that she earned by herself will be distributed in accordance with her wish.

Applicability of Various Laws on a Live-in Relationship

Live-in relationships, though not socially accepted in India, have never amounted to any offense under any law. In 2013, Supreme Court of India in Indira Sarma vs. V.K.V. Sarma[7] it declared that a Live-in or marriage-like relationship is neither a crime nor a sin though socially unacceptable in this country.

In this landmark judgment, a bench headed by Hon'ble Justice K. S. Radhakrishnan framed guidelines to take along the live-in relationship within the expression relationship in the nature of marriage for the protection of women from the Domestic Violence Act 2005. Being a new tradition and something which the framers of our constitution couldn't have thought of, there is no statute directly dealing with a live-in relationship.

However, the honorable Supreme Court and other learned courts have taken a progressive approach in reading the provisions related to married women liberally and interpreting the same to be applicable to women living in such relationships, provided certain checklists are fulfilled. Law is a social phenomenon and it should change with the changing needs of the society.

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.20

The Protection of Woman from Domestic Violence Act, 2005 (hereinafter referred to as PWDA) was legislated as an attempt to protect women living in a shared household from abusive partners and family. The expression shared household has been defined under section 2(s) of the PWD Act and, hence, needs no further elaboration. Section 2 (f) of the Act also states that it not only applies to a married couple, but also to a relationship in nature of marriage.

A woman under PWDV Act is entitled to claim remedy in case of physical, mental, verbal or economic abuse. In addition, remedies are conferred for alienation of a woman's property and restriction from the use of facilities to which the abused is entitled. The abused have been granted several rights and protections under this legislation. Therefore, it is established that there exists a relationship in the nature of marriage the woman in a live-in relationship can claim all the remedies available to her.

The honorable Supreme Court has conferred a wider meaning to the words aggrieved person under Section 2(a) of the said Act through the case of **D. Veluswamy v. D. Patchaiammal.**[8] It also enumerated five ingredients of a live-in relationship which are as follows:

1. Both the parties must behave as husband and wife and are recognized as husband and wife in front of society.
2. They must be of a valid legal age of marriage.
3. They should qualify to enter into marriage. Qualification here means none of the partners should have a spouse living at the time of entering into a relationship.
4. They must have voluntarily cohabited for a significant period of time.
5. They must have lived together in a shared household.

The Supreme Court also observed that not all live-in relationships will amount to a relationship like marriage to get the benefit of the Domestic Violence Act. Therefore, to get such benefit, the conditions mentioned above shall be fulfilled and shall be proved by evidence.

The Criminal Procedure Code, 1973: It is a secular provision and the main objective behind incorporating section 125 Criminal Procedure Code (hereinafter referred to as CrPc) was to avoid vagrancy and destitution for a wife/minor child/old age parents. It is therefore related to individual and social justice. It provides a speedy remedy for the supply of food, clothing and shelter to the deserted wife and the same has now been extended by judicial interpretation to partners of a live-in relationship. A female has been in a live-in relationship for a reasonable period of time, she ought to have the legitimate privileges as that of a spouse and can claim maintenance under Section 125 CrPC. Section 488 prescribes a forum of summary remedy for a proceeding to enable a deserted wife or a helpless child, legitimate or illegitimate, to get urgent relief. The live-in issue relationship was raised by the Malimath Committee for improving the changing environment of society and to prevent atrocities against women. It recommended several changes under the head offenses against women, the first and foremost recommendation was regarding the amendment of section 125 of the CrPC to cover live-in relationships under its ambit. In this case, the Court also referred to the term palimony which was coined by the US courts during the 1980s, which means grant of maintenance to a woman who has lived for a substantial period of time with a man without marrying and is then deserted by him.

The Indian Evidence Act, 1872: Section 114 of the Evidence Act, 1872, the court may presume the existence of any fact which it thinks likely to have happened, regard being given to the common course of natural events, human conduct and public and private business, in relation as to the facts of the particular case. 3 It can be used to recognize live-in relationships. If a man and woman are living under the same roof and cohabit for a considerable number of years. Continuous and prolonged cohabitation raises a presumption of marriage in accordance with section 50 and section 114 of the Indian Evidence Act, of 1872.

The Constitution of India: The Fundamental right under Article 21 of the Constitution of India grants to all its citizens the right to life and personal liberty which means that an individual is free to live the way he or she wants to.

Living in relationship may be immoral in the eyes of the conservative Indian society but it is not illegal in the eyes of law. A woman shall be the proper owner of her property as per her male counterpart as provided under Article 300A. After Maneka Gandhi, Articles 21, 14, 15 and 300A shall be read together stitching a just, fair, reasonable standard.

In the landmark judgment of S. Khushboov. Kanniammal[9] the Supreme Court held that there was no law that prohibits Live-in relationships or pre-marital sex. Living together is a right to life under Article 21 of the Constitution. Tulsa v. Durghatiya[10] the Supreme Court held that when a man and woman live together for a long time, there would be a presumption in favor of their having been married, unless rebutted by convincing evidence.

Judicial Response to Live-in Relationship

In **A. Dinohamy v. W.L.Blahamy**[11] the Privy Council took a stand that, *"where a man and a woman are proved to have lived together as man and wife, the law will presume, unless the contrary is clearly proved that they were living together in consequence of a valid marriage, and not in a state of concubinage."* And the same stand was also resorted to in the case of **MohammandIbrahim Khan v. Md. Ibrahim Khan**,[12] when the Privy Council stuck to their position that when a man and a woman cohabitated continuously for a number of years, the law presumes that they are a married couple and are not in a state of concubinage.

Badri Prasad v. Dy. Director of Consolidation[13] was the first case in which the Supreme Court of India recognized living in a relationship and interpreted it as a valid marriage. In this case, the Court gave legal validity to a 50-year live-in relationship of a couple. It was held by Justice Krishna Iyer that a strong presumption arises in favor of wedlock where the partners have lived together for a long term as husband and wife. Although the presumption is rebuttable, a heavy burden lies on him who seeks to deprive the relationship of its legal origin. Law leans in favor of legitimacy and frowns upon bastardy. In this case, the S.C. laced their judgment by observing that, *"The presumption was rebuttable, but a heavy burden lies on the person who seeks to deprive the relationship of legal origin to prove that no marriage took place. Law leans in favor of legitimacy and frowns upon a bastard."* In **Gokal Chand v. Parvin Kumari**[14]observed that even though it may tempt it to presume the relationship in the nature of marriage, certain peculiar circumstances do occur which may force the S.C. to rebut such a presumption.

Before 2000, no courts in the country ever uttered the word live-in-Relationship, but not thereafter. In 2001 **Payal Sharma vs. Superintendent**[15], Nari Niketan, Agra, C.M. Hab. Corp. the Bench consisting of justice M.Katju and justice R.B.Mishra of Allahabad High Court observed that "In our opinion, a man and a woman, even without getting married, can live together if they wish to. This may be regarded as immoral by society, but is not illegal. There is a difference between Law and Morality." The Supreme Court in the case of **Vidyadhari v. Sukhrana Bai**[16], issued a Succession Certificate in favor of the live-in partner, who was nominated by the deceased. In **Koppisetti Subbharao Subramaniam v. State of A.P**[17], the Supreme Court provided the protection cover against dowry under Section 498 A of the Indian Penal Code, 1860 by including a person who enters into a marital relationship under the color of the feigned status of the husband. No legislation has ever been enacted by Indian Parliament which denounces any live-in-Relationship 'as illegal. After 2010 various issues are discussed and clarified by the Supreme Court and High Courts by delivering various guidelines in numerous judgments on the validity of live-in-Relationship.

On 28 April, 2010 Special Bench of the Supreme Court of India consisting of K.G. Balakrishnan, Deepak Verma, and B.S. Chauhan in **Khushboo vs Kanniammal & Anr**[18] posted a question *"If two people, man and woman, want to live together, who can oppose them? What is the offense they commit here? This happens because of the cultural exchange between people.*" The S.C. held that live-in-Relationship is permissible. The court also held that living together is a part of the right to life u/Art.21 of the Indian Constitution and it is not a "criminal offense. The Supreme Court in this case dropped all the charges against the petitioner who was a south Indian actress. The petitioner was charged under Section 499 of the IPC and it was also claimed that the petitioner endorsed pre-marital sex and live-in relationships. The court held that living together is not illegal in the eyes of law even if it is considered immoral in the eyes of the conservative Indian society. The court stated that living together is a right to life and therefore not 'illegal'. The legal right to maintenance for women involved in live-in-Relationship has been adjudicated upon by the Supreme Court in the following two cases;

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.20

1. **Virendra Chanmuniya vs.Chanmuniya Kumar Singh Kushwaha and Anr**[19] -the facts of the case were that the appellant woman contended that she was re-married, as per the prevalent custom and usage, to the younger brother (Respondent) of her deceased husband. They lived together as husband and wife for a pretty long time. Thereafter, surprisingly and unfortunately the husband (respondent) started harassing the appellant's wife and also refused to provide her maintenance u/S.125 of CrPC. In this case, the High Court held that the appellant's wife was not entitled to maintenance on the ground that only a legally married woman can claim maintenance u/S.125 of CrPC. But the Supreme Court turned down the judgment delivered by the High Court and awarded maintenance to the wife (appellant) saying that provisions of Sec. 125 of CrPC must be considered in the light of Sec. 26 of the PWDVA, 2005.49 In brief, the S.C. held that women in live-in Relationship are equally entitled to all the reliefs which are available to legally wedded wife.
2. **Velusamy vs. D. Patchaiammal**[20] The judgment determined certain prerequisites for a live-in relationship to be considered valid. It provides that The couple must hold themselves out to society as being akin to spouses and must be of legal age to marry or qualified to enter into a legal marriage, including being unmarried. It was stated that the couple must have voluntarily cohabited and held themselves out to the world as being akin to spouses for a significant period of time.

The Supreme Court examined the definition of "aggrieved person" and "domestic relationship" taken together and opined that the expression "Relationship in the nature of marriage" which is included within the definition of domestic relationship has not clearly been defined in the PWDVA, 2005. Hence the Supreme Court said an authoritative decision is required to be taken to elucidate what is and what is not a relationship in the nature of marriage. The S.C. commented in the course of its judgment that the Indian Parliament while establishing the two distinct categories viz. The relationship of marriage and relationship in the nature of marriage intended that the enactment should protect and benefit women in both these relationships. Therefore the S.C. held that a "Relationship in the nature of marriage" is akin to a Common Law Marriage. Common Law Marriages require that although not being formally married:-

1. The couple must hold themselves out to society as being akin to spouses,
2. They must be of legal age to marry,
3. They must be otherwise qualified to enter into a legal marriage, including being unmarried,
4. They must have voluntarily cohabited and held themselves out to the world as being akin to spouses for a significant period of time."

The judgment further clarified the essentials of a Common Law Marriage and stated that not all "live-in relationships" will amount to "a relationship in the nature of marriage." The judgment notes by way of illustration that ―merely spending weekends together, "a one night stand" in a case where the man has a ―keep whom he maintains financially but uses her merely for sexual purposes and/or as a servant, would not qualify for protection under the Act within the definition of *`domestic relationship'*.

On 26th November 2013 a two-judge Bench of the Supreme Court constituting of K.S. Radhakrishnan and Pinaki Chandra Ghose, JJ in Indra **Sarma v. V.K.V. Sarma**[21] held that when the woman is aware of the fact that the man with whom she is having living-in-relationship and who already has a legally-wedded wife and two children, is not entitled to various reliefs available to a legally wedded wife and also to those who enter into a "relationship in the nature of marriage" as per provisions of PWDVA, 2005. But in this case, the Supreme Court felt that denial of any protection would amount to a great injustice to victims of illegal relationship who are poor, and illiterate and also to their children who are born out of such relationship and has no source of income of her own. Therefore, the S.C. remarked that there is a burning need to expand the connotation of Sec. 2 (f) which defines 'domestic relationship' in PWDVA, 2005 with a view to including there in victims of illegal relationships who are poor, illiterate along with their children who are born out of such relationship and who do not have any source of income. In this case, the appellant admittedly entered into a relationship with the respondent despite knowing that the respondent was a married man with two children born out of the wedlock who opposed the live-in relationship since the inception. The

Court further added, "If we hold that the relationship between the appellant and the respondent is a relationship in the nature of a marriage, we will be doing an injustice to the legally wedded wife and children who opposed that relationship.

Consequently, any act, omission or commission or conduct of the respondent in connection with that type of relationship, would not amount to "domestic violence" under Section 3 of the DV Act, as there is also no evidence of a live-in relationship between the appellant and the respondent as per the given guidelines". The Court held that the relationship between the appellant and the respondent was not a relationship in the nature of a marriage, and the status of the appellant was that of a concubine. Furthermore, the Domestic Violence Act does not take care of such a relationship which may perhaps call for an amendment of the definition of section 2(f) of the DV Act, which is restrictive and exhaustive.

During the course of its judgment, the Supreme Court has given the following guidelines based on which the Parliament may pass a new legislation:

(1) **Duration of relationship –** "Section 2(f) of the DV Act has used the expression "at any point of time", which means a reasonable period of time to maintain and continue a relationship which may vary from case to case, depending upon the factual situation.

(2) **Shared household –** The expression has been defined under Section 2(s) of the DV Act and, hence, needs no further elaboration.

(3) **Pooling of Resources and Financial Arrangements** supporting each other, or any one of them, financially, sharing bank accounts, acquiring immovable properties in joint names or in the name of the woman, long-term investments in business, shares in separate and joint names, so as to have a long-standing relationship, maybe a guiding factor.

(4) **Domestic Arrangements –** Entrusting the responsibility, especially to the woman to run the home, and do household activities like cleaning, cooking, maintaining or upkeeping the house, etc. Is an indication of a relationship in the nature of marriage.

(5) **Sexual Relationship –** Marriage-like relationship refers to sexual relationship, not just for pleasure, but for an emotional and intimate relationship, for the procreation of children, so as to give emotional support, companionship and also marital affection, caring, etc.

(6) **Having children** is a strong indication of a relationship in the nature of marriage. Parties, therefore, intend to have a long-standing relationship. Sharing the responsibility for bringing up and supporting them is also a strong indication.

(7) **Socialization in Public –** Holding out to the public and socializing with friends, relations and others, as if they are husband and wife is a strong circumstance to hold the relationship is in the nature of marriage.

(8) **Intention and conduct of the parties –** Common intention of parties as to what their relationship is and to involve and as to their respective roles and responsibilities, primarily determines the nature of that relationship."

In the case of ***Tulsa & Ors vs. Durghatiya &*****Ors**[22]**,** The Supreme Court provided legal status to the children born from living in a relationship. It was held that one of the crucial pre-conditions for a child born from a live-in relationship to not be treated as illegitimate are that the parents must have lived under one roof and co-habited for a considerably long time for society to recognize them as husband and wife and it must not be a "walk in and walk out" relationship. Therefore, the court also granted the right to property to a child born out of a live-in relationship.

Lalita Toppo v. State of Jharkhand[23], Recently, it is held that a woman in a live-in relationship has an efficacious remedy to seek maintenance under the Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005 even if it is assumed that she is not entitled to the same under Section 125 CrPC. In fact, under the Domestic Violence Act, the victim would be entitled to more relief than what is contemplated under Section 125 CrPC.

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.20

Conclusion

The Researcher fully agrees with the bold initiative taken by the Supreme Court in its judgment delivered in respect of the two cases namely **Velusamy vs. D. Patchaiammal**[24]and **Indra Sarma v. V.K.V. Sarm**[25]**a** ,which recommended to the Indian legislature broadening of the definition of domestic relationship contained in Sec.2 (f) of PWDVA, 2005, with a view to including therein victims of illegal relationships who are poor, illiterate and also their children who are born out of live-in-relationship and who do not have any source of income of their own. In addition to the above recommendations, the Researcher suggests that the Parliament passes a new legislation as suggested by the S.C. in its guidelines given in the course of its above-mentioned two judgments.

Criminal Procedure Code, 1973 (Section 125) The Researcher suggests that the definition of the term wife is contained in Section 125 of CrPC. should be amended so as to include a woman having a relationship in the nature of marriage for a reasonably long period of time. c) The Indian Evidence Act, 1872 (Section 112) Section 112 of the Indian Evidence Act, 1872 provides that legitimacy of a child is proved only if any person was born during the continuance of a valid marriage between his mother and any man. Muslim law also recognizes only those children as legitimate, who are the offspring of a man and his wife. Thus children born out of a live-in relationship were ―illegitimate in the eye of the then-existing law. However the Supreme Court in **Revanasiddappa & Anr. vs Mallikarjun & Ors.**[26] Remarked that irrespective of the relationship between parents, the birth of a child out of such a relationship has to be viewed independently of the relationship of the parents. It is as plain and clear as sunshine that a child born out of such a relationship is innocent and is entitled to all the rights and privileges available to children born out of valid marriages. This is the crux of Section 16 of the amended Hindu Marriage Act, 19.

References

1. (1973). The Code of Criminal Procedure.
2. (2005). The Protection of Women from Domestic Violence Act.
3. (1872). Indian Evidence Act.
4. (1860). Indian Penal Code.
5. (1955). Hindu Marriage Act.
6. (1956). Hindu Adoption and Maintenance Act.
7. (1956). Hindu Minority and Guardianship Act.
8. (2015). Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act.
9. The Constitution of India.
10. (2003). Justice V.S. Malimath Committee. Volume I. March. Report.

(Footnotes)

1. 1988 SCR (2) 809.
2. (2005) 3 SCC 636.
3. (1991) 2 SCC 375.
4. In the High Court of Judicature at Bombay Review Petition No. 19 of 2016 date of order June 7, 2017, available at: https://indiankanoon.org/doc/190616984/.
5. Ajay Bhardwaj v. Jyotsna and others, Criminal Revision No. (F) 166 of 2015(P&H), available at: https://indiankanoon.org/doc/182660125/.
6. AIR. 2010 SC 2685.
7. (2013) 15SCC755.
8. (2010) 0 1SCC 469.
9. (2010) 5 SCC 600.

10. (2008). 4SCC520.
11. AIR 1927 PC 185: (1928)1 MLJ 388.
12. AIR 1929 PC 135.
13. (1978) 3 SCC 527.
14. AIR 1952 SC 231.
15. AIR 2001, All.254.
16. AIR2008SC1420.
17. 29April, 2009.
18. ibid.
19. (2010) 01SCC 469.
20. ibid.
21. ibid.
22. ibid.
23. 30 October, 2018.
24. ibid.
25. ibid.
26. (2011) 11 SCC 1: (2011) 2 UJ 1342.

21

Encouraging Women Entrepreneurship- Current Policies and Programmes

Dr. Parul Malik
Assistant Professor, Department of Teacher Education
S.M.P. Govt. Girls (PG) College, Meerut
Email: malikparul80@gmail.com

Himanshu Sirohi
Research Scholar (Education)
Shobhit University, Meerut

Abstract

Entrepreneurship among women, no doubt improves the wealth of the nation in general and of the family in particular. Women today are more willing to take up activities that were once considered the preserve of men, and have proved that they are second to no one with respect to contribution to the growth of the economy. Entrepreneurs are playing an important role in the economic development of underdeveloped countries. Women's skills and knowledge, their talents and abilities in business and a compelling desire of wanting to do something positive are some of the reasons for the women entrepreneurs to organize industries. The inequalities and a huge gender gap persist in business in India, even though it has been well established through various research studies, worldwide, that female-founded and cofounded enterprises perform better than those managed by all males (s). Women secure higher than the Men in key skills related to a business enterprise e.g. teamwork, problem-solving and orientation. It was the realization of immense untapped women's potential that GOI has taken a large number of policy initiatives for mainstreaming women and to provide them with a level playing field so that they could put their best in the country's economic growth. Women's entrepreneurship is gaining importance in India in the wake of economic liberalization and globalization. The policy and institutional framework for developing entrepreneurial skills, and providing vocational education and training have widened the horizon for the economic empowerment of women.

Keywords

Women entrepreneurship, Status, SSI, policy, the government schemes for developing women entrepreneurs, Mainstreaming, Enterprises, Domestic.

Introduction

Women entrepreneurs may be defined as an individual or a group of women who commence, manage and control the business enterprise with their own ideas. The Micro, Small, and Medium Enterprises (MSME) play a vital part in the economy of every nation. It provides employment opportunities at a lower capital cost than large industries. If MSMEs develop automatically country's Gross Domestic Product rate (GDP) will increase. Women entrepreneurs are mostly the owners of small-scale units. So, the growth of MSMEs also indicates the success of women entrepreneurs. Indian entrepreneurship has been assumed as a contradiction with paradoxes. Women of India have

been striving hard to attain heights of leadership positions. Besides facing additional barriers of balancing responsibilities, access to entrepreneurial prospects, control over resources and many more, women have proved themselves equitable in many areas in order to achieve economic independence and respectable positions. Micro, Small and Medium Enterprises (MSMEs) are providing a sound base for economic development and growth in India. MSMEs are taken as foundation for all industrial endeavors of almost all countries including India. They are supporting in the contribution of huge businesses worldwide. As far as India is concerned, the economic development and progress of the country have been significantly flourishing due to these MSME's. With this background, the entrepreneurs, and the challenges faced by them, including the women of rural areas as the women in India constitute a major portion of the labor force in India. They are still exploring joining the mainstreams of economic development of the country through various means of their contributions. If tapped and polished properly, this segment can come up as very efficient and effective representatives and contributors of change in the country leading to a better lifestyle, better society and strong economy in the overall current global scenario. Entrepreneurship development and skill training are not the only responsibility of the Government and therefore other stakeholders need to shoulder the responsibility. In Hindu scriptures, woman has been described as the embodiment of Shakti but in real life, she is treated as Abla. Women are leaving the workforce in droves in favor of being at home. Not to be a homemaker, but a job-making entrepreneur. The increasing presence of women in the business field as entrepreneurs has changed the demographic characteristics of the business and economic growth of the country.

Polices and Schemes for Women Entrepreneurs in India

Women's entrepreneurship has been recognized as an important source of economic growth. Women entrepreneurs create new jobs for themselves and others and also provide society with different solutions to management, organization and business problems. Women's entrepreneurship can make a particularly strong contribution to the economic well-being of the family and communities, poverty reduction and women's empowerment, thus contributing to the Millennium Development Goals.

1. **Bharatiya Mahila Bank (BMB)**

Started as a bank that focused on providing finances to underprivileged women who wanted to start their own businesses. The business loan scheme was implemented by BMB which was later merged with the State Bank of India in 2017. As a public sector banking organization established in 2013, it offered women entrepreneurs business loans up to ₹ 20 crores for meeting working capital requirements, business expansion, or manufacturing enterprises. It also offers special business loans with a lucrative rate of interest and grants collateral-free loans up to ₹ 1 crore under CGTMSE (Credit Guarantee Fund Trust for Micro and Small Enterprises) cover. Women entrepreneurs are also offered a 0.25 percent concession in interest rate. It includes a combo of working capital and term loan. The repayment tenure is flexible and has to be repaid within seven years.

Some of the different plans under the scheme include:

- **BMB Shringaar**: This loan is applicable to self-employed women or homemakers who want to set up a parlor, purchase equipment, or meet daily business expenses. The loan doesn't require you to provide any collateral security.
- **BMB Parvarish**: This loan is for self-employed women or homemakers to set up daycare centers. The age limit for this Bharatiya Mahila Business bank loan is between 21 to 55 years without any collateral security under the Credit Guarantee Fund Trust for Micro and Small Enterprises (CGSTSM) scheme.
- **BMB Annapurna**: This loan is for food entrepreneurs, between 18 to 60 years. Those who are want to start or expand their small business can avail of this loan. No collateral is required for this loan by Bharatiya Mahila Bank.
- **BMB SME Easy:** This type of business loan for women helps those who are into small and medium-scale enterprises. Loans up to Rs 20 crore can be availed under this Bharatiya Mahila bank loan for women in SMEs. For a loan amount of more than Rs 1 crore, collateral is required, with a loan repayment tenure of up to seven years.

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.21

2. **Annapurna Scheme: Build Your Own Food Catering Unit**

Under this scheme, the Government of India offers women entrepreneurs in the food catering business, loans up to [1] 50,000. The loaned amount could be used for working capital requirements such as buying utensils, cutlery, gas connection, refrigerator, mixer cum grinder, hot case, utensil stand, tiffin boxes, working table, water filter and much more. Currently, this scheme is an offer by Bharatiya Mahila Bank, and State Bank of Mysore. The conditions are:

- Sanctions loans of up to[1] 50,000
- Collateral in the form of assets and a guarantor are required to avail of this scheme
- The loan must be repaid within three years
- Interest rates vary according to market rates

3. **Cent Kalyani Scheme: Empowering SMEs & Agriculture Entrepreneurs**

This scheme under the Central Bank of India can be availed by both existing and new entrepreneurs and self-employed women for micro/small enterprises like farming, handicrafts, food-processing, garment making, beauty, canteen, mobile restaurants, circulating libraries, day centers, STD/Xerox booths, tailoring and more. Basically, this scheme is ideal for women who manage SMEs or is involved in agricultural work or engage in retail trading.

- Loans up to **[1] 1 crore** are sanctioned with a margin rate of **20 percent**.
- No collateral or guarantors are required.
- Interest on loans depends on market rates.
- The loan tenure will be a maximum of seven years including a moratorium period of six months to one year.

5. **Dena Shakti Scheme: Business/MSME loans for Individuals**

This scheme is provided by Dena bank to those women entrepreneurs in the fields of Agriculture & allied activities, Retail Trade, Micro Credit, Education, Housing and retail & small business enterprises.

- It provides loans up to[1] 20 lacks for women entrepreneurs in agriculture, manufacturing, micro-credit, retail stores, or small enterprises.
- It also provides a concession of 0.25 percent on the rate of interest.
- Loans up to [1] 50,000 are offered under the microcredit category.

6. **Mahila Udyam Nidhi Scheme: Providing Financial Assistance at Concessional Interest Rates**

Offered by the Punjab National Bank and Small Industries Development Bank of India (SIDBI), this scheme aims to support women entrepreneurs to set up a new small-scale venture.

- Loans up to 10 lacks are sanctioned that have to be repaid in 10 years.
- SIDBI also includes a five-year moratorium period.
- The interest depends upon the market rates.

Under this scheme, SIDBI offers different plans for beauty parlors, daycare centers, the purchase of auto rickshaws, two-wheelers, cars, and more. It also assists with the upgrading and modernization of existing projects.

6. **Mudra Yojana Scheme: Promoting Entrepreneurship Among the New Generation Aspiring Youth**

This is a general scheme for small units that women entrepreneurs can avail of too. Offered by nationalized banks under the Pradhan Mantri Mudra Yojana, this can be used to set up a beauty parlor, tuition center, tailoring unit, and more. Loans between[1] 50,000 to[1] 50 lacks are sanctioned under this scheme. No collateral and guarantors are required for loans below[1] 10 lakh.

The scheme has three plans:

- **Shishu Plan**: Grants you loans up to a maximum limit of 50,000 for a new business with rate of interest is 1 percent per month or 12 per annum. The repayment period is up to 5 years.
- **Kishore Plan:** Grants loans from 50,000 up to 5 lakh for well-established businesses. The rate of interest varies with banks as it depends on the scheme guidelines and credit history of the applicant. The repayment period also depends on the discretion of the bank.
- **Tarun Plan:** Grants loans from 5 lacks up to 10 lacks for business expansion. The rate of interest is dependent on the bank as per the scheme guidelines and the credit history of the applicant. The repayment period depends on the discretion of the bank.

7. **Orient Mahila Vikas Yojana Scheme: Designed For Self-Employed Women & Those Who Want To Set Up a Beauty Parlor/Salon**

Launched by the Oriental Bank of Commerce, Orient Mahila Vikas Yojana aims at providing women with the capital they required for starting small businesses. Conditions are:

- Women participants, who hold a 51 percent share capital individually or jointly in a proprietary concern, are eligible for the loan.
- No collateral security is required for loans between 10 lakhs to 25 lakhs for small-scale industries.
- The repayment period is seven years.
- A concession of two percent on the rate of interest is offered.

8. **Stree Shakti Package for Women Entrepreneurs: Offering Concessions to Empower Women Entrepreneurs**

The Stree Shakti Package is a unique SBI-run scheme to support entrepreneurship among women by providing certain concessions. This scheme is eligible for women who have majority ownership (over 50 percent) in a small business. Another requirement is that these entrepreneurs have to be enrolled in the Entrepreneurship Development Programmes (EDP) organized by their respective state agencies.

- Loans of up to **50 lacks** are sanctioned.
- This scheme allows women to avail of an interest concession of **0.5 percent** on loans exceeding **2 la**cks.
- No security is required for loans up to **5 lacks** in the case of tiny sector units.

9. **TREAD (Trade Related Entrepreneurship Assistance and Development) Scheme: Economic Empowerment for Women through Credit, Training and More**

This scheme aims to empower women by providing credit to projects, conducting specific training and counseling, and eliciting information on related needs.

- The scheme provides for a government grant of up to 30 percent of the total project cost as appraised by lending institutions.
- These institutions would finance the other 70 percent.

Conclusion

The Indian woman even after facing many challenges she is now trying to become economically independent. The government has come forward with many facilities, concessions and incentives exclusively for women entrepreneurship. General measures can be adopted to encourage and develop women's entrepreneurship. As even illiterate women have the potential and determination to set up, uphold and supervise their own enterprises in a systematic manner. The right guidance from family, society and government can make women entrepreneurs a part of the mainstream of the national economy. Analyzing the different entrepreneurship schemes for women like Annapurna, and TREAD, we have observed that our India is very good at the implementation of government schemes. Through these schemes, women entrepreneurs in India will be tremendously increase and it will result in great

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.21

economic development and employment generations. Women entrepreneurs create new jobs for themselves and others and also provide society with different solutions to management, organization and business problems. However, they still represent a minority of all entrepreneurs. Women's entrepreneurship is essential for every nation. If we want to compete with well-developed nations, both men and women should participate in all activities on an equal basis. Men's performance is good, as an entrepreneur, women also should grow well as an entrepreneur. Government should introduce such schemes which facilitate to progress of women as an entrepreneur.

References

1. Sunder, K. (2019). Entrepreneurship Development. Vijay Nicole Imprints Private Limited.
2. Desai, Vasant. (2002). Dynamics of Entrepreneurial Development and Management. Himalaya Publishing House.
3. Arora, Renu., Sood, S.K. (2003). Fundamentals of Entrepreneurship and Small Business. Kalyani Publishers.
4. Vasudev, Jaggi. (2012). The 3 I mantras of entrepreneurs, Business Line, 2012.
5. Mahajan, S. (2011). Women Entrepreneurship in India, Global Journal of Management and Business Studies. Vol. 3. Issue 10. (2013). Pg. **1143-1148.**
6. Mehta, A., Mehta, C.M. (2011). Rural Women Entrepreneurship in India:-Opportunities and challenges. *International Conference on Humanities, Geography and Economics. ICHGE.* Pattaya.
7. Mishra, Kiran. (2014). Rural Women Entrepreneurs: Concerns & Importance. *International Journal of Science and Research (IJSR).*

22

Role of Stakeholders in HEIs

Neetu Gupta
Assistant Professor
Kanohar Lal Snatkottar Mahila Mahavidyalaya, Meerut
Email: ritika2008@gmail.com

Abstract

Stakeholders are all those people who affect the education system in any manner. Stakeholders thinking manner, their social aspect, philosophy towards education, aims of education according to the societical demand , Passion for all over the development, Awareness about integrated education system on international level, All things affect the education system. If stakeholders will go with development ideas, every institution can achieve its goal easily, because today's generation will be the future of the relevant country. So our motive should be unique for the development of any country. If all stakeholders will be uniform at all points without discrimination, then no any obstacle can stop us from developing. So stakeholders play a vital role in the field of development of education.

Many people who are related to the institution such as management, academic Council, principal, finance committee, internal Quality Assurance cell, Dean, Academic Planning and development cell, head of the department, Head, of the Centre for engineering education research, center for Innovation and entrepreneurship, Controller of Examination, administrative officer, account officer, librarian, physical director, academic in charge, class coordinator, faculty, and most important students affect the education system as a stakeholder.

All stakeholders affect the education system in a different manner at all educational levels. It becomes more challenging in the case of higher education institutions. Where students are much more aware of their careers and start to face the challenges of life. If they will get the right direction definitely they will give better shape in their life and will be responsible and more rationalized civilians for any country .Thank you

Keywords

Integrated, Stakeholders, Rationalize, Discrimination,: Subordinate, Instructional, Dimension, Implementation, Prejudice, Visionary, Implementation Optimum, Discrimination, Establish, Concurrent, Pecuniary, Incompetence, Extracurricular, Politely, Specialist.

Introduction

The stakeholder's primary role is to help the company meet its strategic objective by contributing its experience and perspective to a project. Stakeholders such as students, teaching staff, administrators, Directors, and government bodies, organizers, affect the education system. In reference to the higher education system, stakeholders get more responsive position. Here the Education system becomes quite different from Schooling. Now students become much

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.22

more aware and responsible towards their life. They can not satisfy with a simple equation. They measure everything before accepting .They want a critically career-oriented education. So Every Stakeholder plays a vital role to achieve such challenging aims of higher education. In the modern era, it becomes more difficult to pace with a rapid change environment. So Every Stakeholder plays a crucial and challenging role in the higher education system.

Different Role of stakeholders: A Stakeholder can be any person who affects the higher education system. In this manner, a wide list of stakeholders can be prepared on the basis of the different functions they do for higher education institutions. They play a vital role in what can affect the institution's development—As a base of the Institution, Stakeholders assure the availability of the Institution and for all equipment used in the institution. They make sure about the number of higher education institutions according to the number of learners present in currently. They must also be assured about the equipment available in higher institutions like Classrooms, Furniture, Well-equipped labs, Library and its completion with proper maintenance of books, Well sanitize Fresh room, Sports Ground for Physical Development of students and all, well-organized seminar rooms, Cultural activities classes, Smart Classes etc. According to NEP Vocational Course should be part of education at a higher level . So Basically they must aware of this type of program.

As a responsible authority: It is responsible to fulfill all legal, social and national responsibilities in reference to higher education institutions. It must be sure that all legal requirements have been fulfilled and all necessary documents are available. It is also responsible to develop the human values because it deals with humans. In simple words, tomorrow's future is based upon their acts, because they are making valuable human resources.

As a Centre: All activities of the institution go around the stakeholders. It affects all activities of a different group in a different manner. All Materialistic and non materialistic elements are based upon them, so they must balance to all institutional activities. All affected persons must be quite justified according to their designation.

As a decision-makers: they must take decision fair to all and must try to achieve high institutional goals through their policies. They can decide how the institutional Goal Cope with dynamic condition. They should assure about the fulfillment of national education policy and its best implementation. They must first move are not the followers to achieve Educational goals. They have to take the right decision timely, so they can justify it to all.

As the directors: The Stakeholders role is very important. It becomes more challenging when we expect to all affected people will cope with the institution peacefully and will follow all policies made by the administration. If directors are capable to give the right direction, there will not be any chaos among different parties. Nobody will interfere with anybody because there will be no any discrimination based on importance. Every person will be an important part of the whole system. So Directors play a very important role as stakeholders.

As the followers: We make sure that all work is done according to the plan. If we feel any difficulty in implementation, we can go to other channel to sort out our problems frankly and we do respect to all present in the institution. It means that if we agree to accept policies then we must not create problems in implementing them every time. We should give our best to institutions to achieve their goals. Followers can be clerical staff, Principals, Faculty Members, Fourth class employees, Librarians etc.

As the beneficiary: Stakeholders must concentrate not only on their own benefit but they have to focus on institutional growth by all means. If our organizational goal will be achieved then every group like students, teachers, clerks, and all other employees will be beneficiaries. And as being a part of society whole society will get benefit.

They make sure that the institution will grow definitely with the development of every group.

Let's Check the Credibility of Different Stakeholders

The role and responsibilities of Management: Management play a very crucial role in the institution. It plays a visionary and regulatory role in the field of Management. Their Vision should be based upon long-term vision and development of the institution with the development of whole parts of the Institution . Management as a

leader is must attach to all activities of all department heads of the institution. It must interact with all faculty members from time to time .It should arrange timely meetings with all other stakeholders to achieve the institution's goal in a proper manner.

Role of Administrator

Different kinds of problems arise before the Administration in its day-to-day functioning of the college where the administration has to take decisions. It is necessary for a pro-efficient administrator to take such decisions with justice and without prejudice. They should take into consideration various aspects of a situation including the objective which would be served by taking a particular kind of decision. He should also collect all related. information and statistical data for analysis and evaluate the available alternatives before taking the final decision.

Role of the Organizer

Organization is that part of Management that is Concerned with the

(a) Responsibilities by means of which the activities of the enterprise are distributed among the personnel employed and its service, and

(b) The forms of interrelations established among the personnel by virtue of such responsibilities. The function of the organizer-

1. Increase in managerial and administrative efficiency.
2. Moral restriction on corruption .
3. Motivation for specialization and classification.
4. Motivation to create work.
5. Increase in the speed of development .
6. Helpful for the development of Administration.
7. Easiness of coordination
8. Optimum use of resources.

Role of directors: Direction is a complex function that includes all those functions which are designed to encourage subordinates to work effectively and efficiently in both the short and long run. To achieve this directors can used the following techniques in the field of direction-

1. Delegation of authority: If directors will delegate their authority in a proper manner and without any discrimination, then it will be easy to determine accountability, and no any mistake will be there. In his work should be properly delivered according to the plan to achieve its objectives.
2. Communication: Communication must be transparent between different channels. It must be clearly delivered to its receiver , so they can give their best as per the direction. In HEIs communication should be clear to achieve its goal.
3. Order: Order should be given from one authority only to make conformity in work done. Otherwise, confusion creates many obstacles in implementation. In HEIs there must not pool of coordinators in such a way that it will create bias among implementers.
4. Leadership and Supervision : A leader should idol to others. Because everybody wants to follow their leaders. So In HEIs Educational reformers, student leaders, and principals as a leader must present the best example through their efforts and work.
5. Motivation: Motivation can change the path of anyone, In HEIs everyone needs the right motivation to give their best positively. HEIs must be clear about their educational goals and motivation to others in the same way.

The function of Directors

1. Inspect the work of the subordinate and order the subordinate.

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.22

2. Establish coordination among various functions .
3. Guide and train the subordinates from time to time.
4. Make control effective .
5. Raise the morale of the subordinates.
6. Make communication effective .
7. Provide able leadership to the subordinates and motivate them.

Role of Academic Council:- In the reference to HEIs, Academic Council play a very responsible role in the construction of academic regulations, curriculum, syllabus, instructional and evaluation arrangement methods, and the procedure relevant thereto. They have to make regulations regarding the students to different programs that as sports extracurricular activities, and proper maintenance of playgrounds and hostels. If they notice any weakness in the educational structure they must recommend it to the governing body.

Role of principal: As the head of the institution principal responsibilities are much Complicated today. It must fulfill the two dimensions of leadership , task achievements and social needs satisfaction. A scholar writes,It must not only be known by his staff and Scholars that he is their principal by appointment but it must be felt that he is their Principal by superior ability, energy and character. W.H.Ryburn observe, &quotes;As leader of this Cooperative group it is the principal duty to keep himself up to the mark, he must keep himself in touch with modern Movement in education. The principal is a very responsible authority on which the college ultimately depends. The spirit de Corps is the special responsibility of the principal. If the HEIs principal is aware of changes , then the whole institute will grow rapidly with new reforms.

Role of Teachers: John Newton says, &quotes;A doctor can kill only a relatively small number of patients and continue to practice and architects will not get many Commission if its building fall down and the result of a clergyman's efforts is not visible in this world ,but a teacher can wreckIncompetence cores of lines by Incompetence and still go on teaching until retirement.

In the reference to HEIs teachers play the role of a mentor, a friend, and an instructor. On At this stage, students face many problems , and they search for a true guide who can show the right path in their life.So teachers can be the best counselor for them.

Role of Faculty

1. Help the student in gain knowledge
2. Help the students to develop character and morality
3. Help in arranging the classes properly
4. Evaluate various aspects of the students including character, curricular and extracurricular activities etc.
5. Help the students for develop suitable values helpful to the society
6. Organise the co-curricular activities
7. Help the students to resolve their problems
8. Guide and advice the students as may be needed
9. Make the students able citizens of the nation
10. Development of social proficiency in the student
11. Train the students in leadership qualities
12. Arouse students interest in the professional ethics of teachers.

So an identical teacher as a professional person should not work with a pecuniary motive but with a sense of education for the cause of education. The teacher must follow a code of ethics which may bring credit to the entire profession.

Role of Students

As a stakeholders are supposed to be involved in the evaluation of courses and to participate in internal Quality Assurance via decision-making and Quality Management process at Higher Education institutions as equal partners. So Students should aware of technological changes in the modern era. They should be much more sincere in new research in the education field and search for a new methods to improve the current system.

They have to put their ideas politely and rationally before the authorities to be surely implementation for good. They must not use their energy in absurd revolution but in the improvement of society and finally in national development.

Role of Government

The Government orders services to get specialist-trained funds for the highereducation. Employers also take part in the management of HEIs and their study programs, and establish grants and placement for students. Government plays its role on three levels as central government, As state government and As concurrent government. On a different level, government plays a crucial role to develop the higher education system. Government has all authority to appoint a different commission and implement its recommendations. Government authorities should aware of all changes in society and they must bring necessary changes in the Education system for making it more relevant and useful.

Role of Communities

The community's role is to act as the watching dog and ensure that education serves people, industrial organizations and the planet. People engage in its development and education develops them as they involve themselves. The community provides necessary resources to the higher educational institutions for the betterment of society. Community must ensure the best use of resources, so the best product can obtain by HEIs.

So we can say Stakeholders in every country play a crucial and challenging role to strengthen the education structure in a dynamic era. So Stakeholders must fulfill every aspect through their actions and they must use multi-dimensional thinking for the betterment of Education.

References

1. Educational Administration and I.S.Sindhu.
2. Http://had.org.20 focus, Educational Administration and Management.

23

Right To Health in India: Constitutional and Judicial Perspective

Saroj Saini
Research Scholar
S.M.P. Govt.Girls PG College, Meerut
Email: saroj.saini796@gmail.com

Abstract

The right to health is always a debatable issue in Indian society as well as in Indian political institutions. Health is a state list subject in the 7th schedule of the Indian Constitution. The Directive Principles of State Policy enshrined in part fourth of the Indian Constitution reflects that India is a welfare state. Being a welfare state it is the responsibility of the Central and state government to provide an effective mechanism to protect the physical and mental health of the public at large. The framers of the Indian Constitution have rightly included various provisions regarding the health of the public. Further, the role of the Supreme Court of India is significant in protecting the health of people at large with the help of various decisions.The effective implementation of laws and policies such as National health policy 2017, Ayushman Bharat scheme, Janani Suraksha Yojana, National Ayushmission and other various schemes enacted based on constitutional provisions will control the present problem.

Keywords

Right to health, fundamental rights and health, directive principle and health.

Introduction

Health is the most basic requirement of human beings. The growth and development of a nation is depend on a healthy and skilled population but unfortunately, India, as well as the entire world, is facing severe problem of degradation of health due to various causes such as covid-19, global warming, climate change, different type of populations and so on. Various efforts and conferences are being made to improve human health at the National and international levels. According to World Health Organization, ***"Health is a state of complete physical mental and social well-being and not merely the absence of disease***."[1] From the definition itself, it is clearly signified that the conditions of life of the individual should incorporate physical, mental and social well-being and must be devoid of disease and infirmity.

In the modern era, every country has its own constitution to operate health facilities according to some fundamental rules. The constitution of India is the supreme law of the land. It aims to secure social, economic and political justice. Among the various rights under Indian Constitution, the 'Right to Health' is an important one. The basic law of the state safeguards individual rights and promotes National well-being. It is the duty of the state to provide an effective mechanism for the Welfare of the public at large. The founding fathers of the Indian Constitution rightly inserted the directive principle of State Policy (DPSP)with a view to protect the health of the public.

Following are the Important Provision in the Constitution of India for the Protection of the Right to Health

Right to Health Under Fundamental Rights

Part III of the Indian constitution deals with the fundamental rights. The fundamental rights are not absolute; they are subject to reasonable restrictions. The prime functions of the Supreme Court is to interpret the law. The term "right to health" is nowhere mentioned in the constitution yet the Supreme Court has interpreted it as a fundamental right under the 'Right to Life' enshrined in article 21. The Supreme Court has given the recognition to the right to health vide different techniques of interpretation. '*The government is under constitutional obligation to provide health facility.*'[2] Right to health is also the right which is implied under the right to life and personal liberty as guaranteed by the constitution of India.

Article 19 (1) (g)

According to article 19 (1)(g) all citizens shall have the right to practice any profession, or carry on any occupation, trade or business subject to restrictions imposed in the interest of the general public under clause (2) of article 19.*In Municipal Corporation v. Jan Mohammed,*[3] the court held that the expression in the interest of the general public in clause (2) of article 19 is of wide import comprehending public order, public health, public security, morals economic welfare of the community and the objects mentioned in part 4th of the constitution.

It can be said that reasonable restrictions as imposed on the freedoms are in the vide in sense that Court has the power to interpret the same in the interest of the general public. In the recent time on many occasions, the Supreme Court has highlighted the significance of public health while delivering many judgements.

Article-21: Protection of Life and Personal Liberty

The multidimensional view of article 21 is an important development in Indian constitution jurisprudence. The Supreme Court has come to impose positive obligations upon the state to take steps for ensuring for the individual a better enjoyment of his life and dignity under its comprehensive interpretations of article 21. The right to health as extended under Article 21 relates to the maintenance and improvement of public health, the improvement of the environment etc.

The Supreme Court in C.E.R.C vs. Union of India,[4] held that right to health, and medical aid to protect the health and vigour of workers while in service or post-retirement is a fundamental right under article 21. In some cases, the injured person die without getting medical aid due to pending the completion of legal formalities. In Parmanand Katara versus Union of India[5], the Supreme Court has considered a very serious problems existing in medical-legal field such as cases of accidents in which the doctors usually refuse to give immediate medical aid to the victim till legal formalities are completed. The court stated that the preservation of health is of paramount importance. Once life is lost it cannot be restored. Hence it is the duty of doctors to preserve life without any kind of discrimination.

Article 25 and Article 26:Freedom to Profess to Practice Religion and Freedom to Maintain Religious Affairs

Article 25 guarantees every person the right to profess and practice religion and Article 26 gives special protection to religious denominations. Both can be enjoyed by any person subject to public order, morality and health and other provisions of the respective part of the constitution. The person has the right to enjoy this freedom but it should not adversely affect the right of others including that of not being disturbed in their activities.

Right to Health Under Directive Principal of State Policies (DPSP)

Part- IV of the Indian constitution deals with the certain principles known as the Directive principles of the state. it signifies that India is a welfare state. Hence, it is the responsibility of the state to provide medical aid to its citizens. Although the directive principles are asserted to be fundamental in the Governance of the country but they are not legally enforceable. The state is under the duty to apply these principles while making policies for public well-being. There are several Articles in Part IVth of the constitution that indicate that it is the state's obligation to create

a social atmosphere befitting human dignity for citizens to live in. The following Directive Principles have relevant perspectives on the right to health:

Article 39 Certain Principles of Policy to be Followed by the State

This article secures the health and strength of the workers men and women. It also mandates that children be given the opportunities and facilities to develop in a healthy environment and in conditions of freedom and dignity.It enunciates that the working class is important in national building and therefore state government shall provide protection for their health.

Article 42 Provides for the Just and Humane Condition of Work and Maternity Relief

This article mandates that the state shall make provisions for securing just and humane conditions of work and Maternity relief. In **U.P.S.C Board versusHarishankar**,[6] Supreme Court has held that article 42 provides the basis of the larger body of labor law in India. Further referring to Articles 42 and 43 the Supreme Court has emphasized that the constitution expresses a deep concern for the Welfare of the workers.

The court may not enforce the Directive Principles as such, but they must interpret the law so as to further and not hinder the goal set out in the Directive Principle.

Article 47 duty of the State to Raise the Level of Nutrition and the Standard of Living and to Improve public Health

Article 47 says that the state shall regard the rising of the level of nutrition and the standard of living of its people and the improvement of public health as among its primary duties. The state shall endeavor to bring about prohibition of the consumption except for medical purposes of intoxicating drinks and drugs which are injurious to health.

The Supreme Court rightly stated while interpreting Article 47 that public health is to be protected for the betterment of the society. Further, it has been held that, in this welfare era raising the level of nutrition and improving in standard of living of the people are primary duties of the state.

Article 48-A: Protection and Improvement of Environment and Safeguarding of Forest and Wildlife

This article was inserted by the 42nd Amendment Act 1976. It obligates the state to endeavor to protect and to improve the environment and to safeguard the forest and wildlife of the country.

Fundamental Duties

Part 4-A of the Indian Constitution deals with the fundamental duties of citizens. It shall be the duty of the citizen of India:

i. To protect and improve the natural environment including forests, lakes, rivers and wildlife and to have compassion for living creatures.

It shows that every citizen is under the fundamental duty to protect and improve the natural environment since it is closely related to public health.

Local Self Government and Right to Health

The Indian Constitution adopted a federal political structure. There is a division of legislative power between the Union and the states and against certain matters are related to concurrent competence. In this system, the subject of Health has been left to the states. Article 243-W of the constitution provides that the legislature of the state may by law and the municipalities with such powers and authorities as may be necessary to enable them to function as Institutions of local self-government. This power is connected with the matters included in the Twelfth Schedule as Public Health, sanitation conservancy and solid waste management.

A similar provision is made for the Panchayats under Article 243-G in matters connected with the 11th schedule as health and sanitation, including hospitals, including primary health centers and dispensaries.

Conclusion

The term 'Right to Health' is nowhere mentioned in the Indian Constitution yet the Supreme Court has interpreted it as a fundamental right under Article 21 'Right to Life.' For achieving the constitutional obligations and also objective of Health Care for all there is a need on the part of the government to mobilize Non- governmental organizations and the general public towards their participation in monitoring and implementation of Healthcare facilities. It has rightly been said that nutrition, health and education are the three inputs accepted as significant for the development of human resources.

Reference

1. The preamble to the constitution of the World Health Organization as adopted by the international health conference, New York, 19-22 June.
2. State of Punjab v. Mahinder Singh Chawla AIR 1997SC 1225.
3. AIR 1986 SC 1205: (1986) . 3 SCC20.
4. AIR 1995 SC 922.
5. AIR 1989 SC 2039.
6. AIR1979SC65 (1978). 4 SC 16.

24

Role of Mother Tongue in Cognitive and Personality Development of Children

Dr. Mamta Agarwal
Assistant Professor, Department of Psychology
Kanohar Lal Snatkottar Mahila Mahavidyalaya
Meerut
Eamil: rmk9411@gmail.com

Mrs. Seema Verma
Department of Psychology
Kanohar Lal Snatkottar Mahila Mahavidyalaya
Meerut

Abstract

Mother tongue plays an important role in how people think and feel. Learning to communicate in your native language is very important for your child's overall development. Fluency in the mother tongue, usually referred to as the native language, has many advantages for the child. It connects him to his culture, guarantees improved cognitive growth, and encourages the learning of other languages. A child understands his surroundings only through the language his mother speaks to him throughout his life. This evolution progresses with age as the human perception and understanding of the world moves from in fancy to childhood and back to adolescence. This research is an attempt to find the significance of mother tongue in cognitive and personality development in children to ensure that children acquire strong abilities in their first language that is mother language.

Keywords

Mother tongue, Cognitive, Personality, Development, Language.

Introduction

God has given us a wonderful gift in language. It contributes to the whole humanity of man. In reality, according to Aristotle, man is a rational animal, and his capacity for reason—which is manifestly dependent on language—is what distinguishes him from other animals and elevates him above them. Communication is facilitated by language. The capacity to express and comprehend feelings is also supported. The development of a child's mind or cognitive abilities was considered in relation to language acquisition by the Swiss psychologist Jean Piaget. He made the case that a youngster must comprehend a notion before learning the specific language form that communicates that concept. Seriation is one of these things. Language plays a key role in shaping the personality of an individual, his thought processes and a larger view of the life and world around him. The language we first learn is that used in the home. The first language that is taught to a child, his mother tongue, sets the stage for his understanding of the world around him, for learning concepts and skills, and for his perception of existence. In a similar vein, a youngster uses his or her mother tongue to convey their first emotions, joys, fears, and words. The mother speaks to the child initially. Her native tongue, which is employed, is crucial for the development of the brain, the mind, and the personality. As a measure of brain development, cognitive development is evaluated using the level of conception, perception, information

processing, and language. The widespread consensus is that as a person's knowledge and comprehension of the environment grow from infancy to childhood, then again into adolescence, cognitive development advances with age. It helps the child in his/her mental, moral, and emotional development. Schick, de Villiers, and Hoffmeister (2002) explained that language delays typically observed in deaf children are causally related to delays in major aspects of cognitive development. They maintain, children who cannot understand complex syntactic forms like complements have difficulty understanding how their own thoughts and beliefs may differ from those around them. In fact, much of a child's future social and intellectual development hinges on the milestone of the mother tongue (Plessis, 2008). The mother tongue, therefore, has a central role in education that demands cognitive development. When children are learning through their mother tongue, they are learning concepts and intellectual skills that are equally relevant to their ability to function in their entire life. When a child speaks in first language, a direct connection is established between the heart, brain and tongue. how the brain differently absorbs and recalls languages learned in early childhood and later life.

Alice Mado Proverbio (Professor of cognitive electrophysiology)

Native languages trigger a series of associations within the brain that show up as increased electrical activity. Our mother tongue is the language we use to think, dream and feel emotion.

Several psychological, social and educational experiments proved that learning through the mother tongue is deeper, faster and more effective (Krishnaji, 1990). Much of a child's future social and intellectual development hinges on the milestone of the mother tongue (Plessis, 2008). Incomplete first language skills often make learning other languages more difficult (Jim Cummins, 2010).

Renowned researcher Jean Piaget stressed that students' intellectual development in educational settings demands an organized curriculum to lead their minds toward equilibration, creativity and knowledge expansion. The cognitive conflict has no place if this is to be ensured.

As language plays a key role in shaping the personality of an individual, his thought processes and his larger view of the life and world around him. The language we first learn is that used in the home. The first language that is taught to a child, his mother tongue, sets the stage for his understanding of the world around him, for learning concepts and skills, and for his perception of existence. Abhimanyu successfully penetrated the feared 'padmavyuha' as he learned it while in the womb of his mother as Arjuna explained the strategy to Subhadra. Sounds incredible? Renowned researcher Lev Vygotsky claimed that infants are born with abilities like attention, sensation, perception and memory. Our first language, the beautiful sounds of which one hears and gets familiar while in the womb, has an important role in shaping our personality, thoughts and life." (Vice President M Venkaih Naidu, Times of India dated 20 February 2021).

Mother tongue is critically essential for cognitive, psychological and personality development. Because the mother tongue's sound in the ear and its meaning in the heart inspire trust and confidence in us, our personality, character, behavior, and hidden features become fully disclosed through the mother tongue.

To ensure that their children acquire strong literacy abilities in their first language, parents must establish a strict home language policy and work consistently on this goal. By finding ways to inspire and support learning, parents should start by teaching their kids to love their native language. Keep the second language to the outside world and speak to children only in your mother tongue at home. Tell stories and discuss fascinating topics such as your childhood-children love to hear about parents' childhoods-your home country celebrations, because this will develop both their oral and vocabulary skills. Provide contexts where children can use their home languages such as visits to the place of origin, organizing picnics, cultural events, or celebrations with families from the same community.

Conclusion

In this way, language contributes to the entire human race. Children'smentalandcognitive development has been considered in relation to their native language. Thisisbecausewhenthe mother tongue is heard and the meaningisconveyedto the heart,itbuilds trust and confidence and reveals personality, character, behavior and hidden characteristics.

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.24

References

1. Cummins, J. (2000). Bilingual children's mother tongue: Why is it important for education? Retrieved August 5, 2008, from http://www.iteachilearn.com/cummins/mother.htm.
2. Krishnaji, S. (1990). Languages. Retrieved August 5. 2008. from http://www.education.nic.in/cd50years/g/T/EH/0TEH0C01.htm.
3. Plessis, S.D. (2008). Talk to your child cleverly. Retrieved August 5, 2008, from http://mainstreetmom.com/parenting/talk.htm.
4. Schick, B., de V"illiers J. de Villiers, P., Hoffmeister, B. (2002). Theory of mind: Language and cognition in deaf children. Retrieved July 30. 2008. from http://www.asha.org/about/publications/leader-online/archives/2002/ q4/f021203.htm.
5. United Nations Educational, Scientific and Cultural Organization. (UNESCO). (2008). The mother tongue dilemma. Education Today: The Newsletter of UNESCO's Education Sector. RetrievedAugust5,2008from http://www.unesco.org/education/education_today/ed_today6.pdf.
6. Vygotsky, L. (1978). Mind in society: The development of higher psychological processes. Harvard University Press: United States of America.
7. Vygotsky, L. (1986). Thought and language. The Massachusetts Institute of Technology: London.

25

The Role of Music in Managing Stress and Depression

Dr. Baby Dalal
Assistant Professor
Kanohar Lal Snatkottar Mahila Mahavidyalaya, Meerut
Email: babylok375@gmail.com

Abstract

This research work aims to find the effects of Music therapy in managing stress & depression.The power of music reduces stress & depression .In this research work we find that how music affects our health.

Keywords

Music therapy , Depression, Stress.

Introduction

Music is symbol of the culture & artistic development of human beings from the evolution of the universe music is inherited in all the particles of the universe. The nuisance of mind & heart can be best expressed through the language of music. Music signifies a blend of song,dance & instruments. The richness of music depends on balance among its three vital components, language, rhythm & melody.

On every aspect of human life music affects.The knowledge & education of music created positive attitudes in human beings. It helps to maintain values in behavior humanity, kindness, selflessness, self-respect & truth can stand in human life through music only . It is helpful for humankind not only in a quantitative manner but also.

The use of music for the treatment of physical ailments & psychological disorders is known as music therapy. It defined as "Music therapy is the use of music & or its musical elements (sound, rhythm,melody,& harmony)by a music therapist & client or group ,in a process designed to facilitate & promote communication, relationship, learning, mobilization, expression and organization (physical, emotional, mental, social & cognitive) in order to develop or restore functions of the individual so that he or she can achieve better intra & or interpersonal integration & consequents,a better quality of life .Music therapy is the unique application of music to enhance personal lives by creating positive change in human behaviour.It is the use of music & musical interventions in order to restore,maintain & improve emotional, physical, psychological & spiritual health & well-being.

Studies have shown that music therapy can be effective at promoting relaxation, relieving anxiety, and stress & treating depression. It has been applied to hospitalized patients with burns,heart disease ,&cancer.Music therapy allows people with emotional problems to explore feelings , make positive changes in mood ,practice problem solving & resolve conflicts.There is a famous saying "Music soothes the savages beast.''And most of us know how relaxing & emotionally refreshing listening to music can be .It can help us to cope with sadness & even help us to fall asleep.

Music has the potential to influence us both psychologically & physiologically,it is an important area of

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.25

therapy for stress management. Music therapy can make use of biofeedback,guided imagery, & other established techniques to play an important role in the treatment of people with stress-related disorders.But due to the dramatic effects, music can have,a trained &knowledgeable music therapist always is required. When used in combination with biofeedback techniques, music can reduce tension & facilitate the relaxation response. It may be more compatible with relaxation than verbal stimuli, which may be distracting.Music is processed mainly in nonverbal areas of the brain .Music may help people to identify & express the feelings associated with their stress . In a music therapy session, the client can express these emotion,providing an important cathartis release. Producing music in an improvisational way, & discussing pieces of music & lyrics in a group, can also help us become more aware of our emotional reactions & share them constructively with the group.

Depression is a common cause of psychiatry. according to WHO 2005 ''Depression is a state where one loses connection to one's own self and often feels separation from all.(Kaufman 1999) depressed people hold extremely negative views of themselves (Gable and shean 2000) and they suffer from lots of emotional, motivational, behavioral and cognitive disabilities (Come,2004).

Depression is as old as man .It has accompanied him throughout the history & the world's literature has chronicled it with as much intensity & care ,as this so ancient &so widespread a condition warrants. Depression is a universal experience the emotions of sadness & grief are an intrinsic fact of the human condition.The central symptoms of depression are sadness ,pessimism, and self-dislike,along with a loss of energy , motivation & concentration .The word 'Depression''is used in many ways; to describe a mood ,a symptom a syndrome as well as a specific group of illnesses.The multiple uses of terms & the looseness of definitions can be very confusing.In definitions of depression,a distinction is drawn between a feeling of rejection, sadness & unhappiness which may be brief in duration & a clinical syndrome characterized by persistent sadness,profound discouragement or despair which persists for two weeks or more & is associated with a change from persists two weeks or more & is associated with a change from previous functioning.

Stress is a normal psychological & physical reaction to the ever-increasing demands of life. Surveys show that most Americans experiences challenges with stress, so remember that your protection.When your brain perceives a threat, it signals your body to release a burst of hormones to fuel your capacity for a response .This has been labeled the ''fight-or-flight response.Once the threat is gone ,your body is meant to return normal relaxed state. Unfortunately,the nonstop trace of modern life means that your alarm system rarely shuts off. That's why stress management is so important. Stress management gives you a range of tools to reset your alarm system.Without stress management, all too often your body is always on high alert. Over time, high levels of stress lead to serious health problems. Don't wait until stress has a negative impact on your health, relationships or quality of life. Start practicing a range of stress management techniques today.

Stress is the condition that results when personal environment transactions lead the individual to perceive a discrepancy whether real or not between the demands of a situation and the resources of the person's biological, psychological and social system. Stress can be defined as a state we experience when there is a mismatch between perceived demands and our perceived ability to cope everyone whether men , women or child suffers from stress at one or another point in their lives .We feel stress when we are dealing with our family problems.We feel stress when we are facing financial or health problems.The /meaning of stress is any affair requiring mental or physical energy.It is a condition which causes perturbation of both mental & physical health of individual.It is a demand of circumstances on the mind when the mind tries to adjust to continual changes in life . Stress is not synonymous with negative conditions.

Stress is a common problem affecting about 121 million people worldwide and is characterized by persistent low mood,which leads to changes in appetite,sleep pattern and overall functioning (WHO 2000; Moussavi 2007) The disorder is characterized by a marked lowering of self-esteem and feelings of worthlessness and guilt. Symptoms further include anhedonia,fatigue and impaired concentration (WHO1992).Stress is projected to become the leading

cause of disabilities and the second leading contributor to the global burden of disease by the year 2020 (WHO2000,Moussavi 2007). It occurs in persons of all genders,ages and backgrounds (WHO2001).The huge personal and economic impact of stress implies a need for systematic reviews of the evidence for efficacy for all current treatment modalities.

Music is especially helpful in relaxation and stress management because it can be used in the following ways:

- ❖ Music and physical relaxation.
- ❖ Music as in aid in stress relief activities.
- ❖ Music and a meditative state
- ❖ Music to promote a positive focus
- ❖ Music and affair nation

Stress relief through music therapy is a universal phenomenon.Each individual reacts differently to different sounds .The music that a calming to one might not be quite so for another. Listening to soothing music induces deep breathing and increases the production of serotonin.It reduces heart rate and promotes higher body temperature an indication of the onset of relaxation.It affects the primary brain of humans the limbic brain. This is the part of the brain responsible for the physical condition of the body or maintaining the internal balance which keeps us alive.

- ❖ Listening to music on headphones reduces stress and anxiety in hospital patients before and after surgery.
- ❖ Music can help reduce both the sensation and distress of both chronic pain and postoperative pain.
- ❖ Listening to music can relieve depression and increase self-esteem ratings in elderly people.
- ❖ Music therapy significantly reduces emotional distress and boosts quality of the life among adult cancer patients.

Conclusion

Brain Waves: Music with a strong beat can stimulate brainwaves to resonate in sync with the beat, with faster beats bringing sharper concentration and more alert thinking , and a tempo promoting a calm , meditative state.

Breathing and Heart Rate: With alteratiosin brainwaves come changes in bodily function . Those governed by the autonomic nervous system, such as breathing and heart rate can also be altered by the changes music can bring.

State of Mind : Music can also be used to keep to bring a more positive state of mind, helping to keep depression and anxiety at bay.

Other Benefits : Music has also been found to bring many other benefits such as lowerings blood pressure (which can also reduce the risk of stroke and other health problems over time), boosting immunity, easing muscle tension , and more.

Listening to music can help the brain by the improving learning and memory skills , always useful when we are in under stress .This has come to be known as “The Mozart Effect.”Many hospitals are using music therapists for pain management and other uses. ‘’Our findings suggest music listening may be beneficial for heart disease patients,’’ says Joke Bradt, who works at the Arts and Quality of Life Research Center at Temple University in Philadelphia.

Finally, music can affects the body in many healthy-promoting ways, however , you can use music in your daily life and achieve many stress relief benefits on your life.

References

1. Bartlett, D., Kaufman, D., Smeltekop, R.(1993). The effects of music listening & perceived sensory experiences on the immune system as measured by interleukin-1& cortisol. *Journal of Music Therapy*. 30. Pg. **194-209.**

Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.25

2. Burns, D.S. (2001). The effect of the bonny method of guided imagery & music on the mood & life quality of cancer patients. *Journal of Music Therapy*. Vol.38. Spring. Pg. **51-65.**
3. Carson., Butcher., Mineka. (2006). Abnormal psychology & modern life. Pearson Education, Inc .& Dorling kinders ley publishing inc. Pg. **233.**
4. Coleman, James C. (1998). Abnormal psychology & modern life. D.B.Taraporeval a sons & co. private limited. Pg. **254-255.**
5. Elizabeth scott, M.S. (2008). Music relaxation: A Healthy & convienient stress Management tool. 08 Nov.
6. Hanser, S.B., Thompson, L.W. (1998). Effects of music therapy strategy on depressed older adults.Standard university School of Medicine. *Journal of Gerontology.* Vol. 49. November. Pg. **265-69.**
7. Walden, E.G. (2001). The effects of group music therapy on mood states & cohesiveness in adult oncology patients. *Journal of Music Therapy.* Vol.38 Fall. Pg. **212-38.**

26

Mobile: As A Risk Factor For Today's Children

Dr. Monika Garg

Assistant Professor, Department of Psychology

Kanohar Lal Snatkottar Mahila Mahavidyalaya, Meerut

Email: moni.garg82@gmail.com

Abstract

With the development of science and technology, more and more people have mobile phones. Mobile phones play an important role in our lives and are an integral part of today's life but it is becoming more harmful to our life. It quickly attracts the student's attention by its small and convenient, rich sources, and many other characteristics. Mobile phones bring convenience, entertainment and other functions, news and other information, but also produced a series of negative effects. This research is an attempt to find the significance of the negative effect of mobile use on children. The result of the light on mobile addiction and indicated that children's mind is soft and can easily accept the unrestricted or irrelevant content being served by mobile, as a result, irritability, insomnia, tumors, loss of eyesight and many other biological, behavioral, psychological problems are increasing day by day.

Keywords

Mobile addiction, Insomania, epilepsy, obesity, Alzheimers disease.

Objective

To find the significance of the negative effect of mobile use on children's biological and psychological health.

Hypothesis

There is negative effect of mobile use on children's biological and psychological health.

Introduction

Mobile today has become an integral part of the life not only for urban but also for rural children. The increasing craze of children towards mobile is the story of every house today. Keeping eyes on the mobile throughout the day and sticking to the mobile is becoming an integral part of their daily routine. During use, mobile phones emit radiofrequency radiation. The greater absorption of radiation per unit of time, the greater sensitivity of their brains, and the longer lifetimes risk to develop a brain tumor or other health effects. Hardwell (2017) studied on the effect of mobile phones on Children's and adolescents health and explain mobile phones and cordless phones emit radiofrequency radiation. As a result neurological diseases, physiological addiction, cognition, sleep, behavior problems like epilepsy, irritability, insomnia, stress and obesity and even cancer problems are increasing rapidly in children. The researcher attempts to through a light on the negative effect of excessive mobile use so that parents could be aware and parents, counselors, mental health professionals, the health worker can plan strategies to make appropriate distances for mobile at a young age.

From a biological perspective, excessive use of mobile is being a risk factor for epilepsy. 300,000 people in India have become victims of epilepsy due to watching mobiles. According to experts, watching mobiles is itself an addiction.

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.26

Scientists call it mobile hypnosis in which one loses track of time and responds automatically to stimuli. Olson, Veissiere and Stendel (2020) found a positive correlation between hypnotisability and smartphone addiction. The malignancy that develops from mobiles stalls the functioning of the brain. Children's brain is unable to tolerate and once the brain becomes numb, the eyes get fixed on the screen of the mobile. In this way, the mobile takes the children under hypnosis, their energy becomes disorganized and it becomes the cause of epilepsy. Such epilepsy is called psycho motive. According to the World Health Organisation (WHO), epilepsy is a chronic disorder characterized by recurrent seizures which may vary from a brief lapse of attention or muscle jerks, to severe and prolonged convulsions. A. K. Sahani, senior consultant of Neurology at the Indian Spinal Injuries Centre (ISIC) said that radiation that emits from a mobile while used for a long duration plays an important role in increasing the risk of seizures. Such epilepsy is not easily detected because it does not cause foam in the mouth. If this disease is caught in time, its treatment is possible.

Excessive use of mobile increases the risk of obesity which is emerging among children today due to mobile addiction, they have gone away from sports and exercise, and their body fat keeps getting sour while sitting, A study cross-sectional designed to investigate the association between excessive smartphone use on the physical activity of 110 Chinese international students aged 19–25 years old shows that smartphone dependence may affect physical health and thus result in an increase in one's fat mass by reducing physical activity . according to experts, 2 hours of Continuous watching of mobile increases cholesterol in the blood due to which obesity increases the chances of heart disease and diabetes.

Research has proved that very dangerous radiation comes out from mobile phones. This dangerous radiation emanting from mobile phones can cause tumors in the brain of young children, which can later turn into fatal diseases like cancer. Actually, the development of the head of children of two-three years is not complete. Their head is small and the thickness of the bones near the brain is very less. The tissues inside the head are very delicate, in such a situation, more than 60% of the radiation emitted from the mobile phone has adverse effects on the brain of children and in this way causes terrible damage to the nervous system of children. The World Health Organization (WHO) has included this radiation in the possible causes of cancer.

Almost 95 percent of Americans own cell phones and 77 percent own smartphones. Around the world, smartphones were used by 1.85 billion people in 2014 which is expected to be 2.32 billion in 2017 and 2.87 billion in 2020.Cha and Seo (2018). In the context of Psychological and behavior impact the research found that mobile phone has a significant negative impact on executive function. addicts to certain online app show more social anxiety, emotional deficit, and impaired prefrontal cortex-related inhibitory control.(Dieter et.al, 2017). Though Few researchers believe that smartphone usage and gender are not significantly associated Nishad and Rana, (2016) but Mobile has a negative impact on the subconscious mind of the children, the soft mind of the children without any argument accepts the transmitted visuals and signals of the mobile as correct and copies them. Similarly, mobile is considered to be a major reason for increasing child crimes, unabated violence, crime and sexual excitement being served on mobile, and how deadly it is affecting the child's mind. Mobile has become the most powerful medium of providing information and entertainment. Excessive use of mobile also increases insomnia and stress at a young age. Once children start watching short videos and mobile games coming day and night without any hindrance on mobile, then they go on watching like an addiction and they think that after this, just a little and just a little. While doing this, he spends the whole night or 3 to 4 hours comfortably in the night, so that the children's Insomnia has started to flourish in me and when there is insomnia, he is not able to complete his work on time also, due to which he has to face stress. Alzheimer's disease and memory loss are also seen in children from mobile. Excessive use of smartphones paired with negative attitude and feelings of anxiety and dependency on gadgets may increase the risk of anxiety and depression Rosen et al., (2013) Thomée et al.(2011). Jones (2014) conducted a survey about Elon Students' behavior along with an online survey and found that students seemed to be addicted to their mobile phones. Nevertheless, it was concluded that the excessive smartphone use had a negative psychological effect. Reinecke et al. (2017) investigated the psychological health effects and stimulators of digital stress. He surveyed 1,557 German internet users aged 14 to 85 and reported that communication load was positively related to perceived stress and had an indirect impact on depression and anxiety too. Boumosleh & Jaalouk (2017) investigated whether anxiety and depression independently

contributed to smartphone addiction. Their sample was 668 random Lebanese undergraduate students. Their cross-sectional study proposed that depression and anxiety were also a positive predictors of smartphone addiction. They also revealed that with depression scores were a more powerful predictor as compared to anxiety.

Parents should be aware and take steps to prevent their children from this addiction within the modern society. The parents should involve their children in the daily work along with them, such as on any festival, the children can be given the task of decorating the house or the dusting can be given to the children or responsibilities of cleaning a special room like it is their only room, clothes responsibilities of deciding Such small tasks can be given to the children, which will keep the children busy for maximum time. If the guardians are able to maintain it cautiously, then the infants can be kept safe to some extent from the harmful effects of mobiles on their health balance and character.

Conclusion

It is confirmed that children's mental health and physical health are associated with mobile phone addiction. Mobile phone usage badly affects the mental health of children and they look anxious, depressed and angry or sometimes commit suicide. Parents, social worker and counselor should give their concerns and make strategies to overcome this problem.

References

1. Boumosleh, J., Jaalouk, D. (2018). Smartphone addiction among university students and its relationship with academic performance. *Global J Health Sci.*10. Pg. **48–59.**
2. Boumosleh, J.M., Jaalouk, D. (2017). Depression, anxiety, and smartphone addiction in university students- a cross-sectional study. *PLos ONE.* 12(8).
3. Cha, S-S., Seo, B-K. (2018). Smartphone use and smartphone addiction in middle school students in Korea: prevalence, social networking service, and game use. *Health Psychology Open.* Pg. **1–5.**
4. Dieter, J., Hoffmann, S., Mier, D., Reinhard, I., Beutel, M., Vollstädt-Klein, S., et al. (2017). The role of emotional inhibitory control in specific internet addiction – an fMRI study. *Behav. Brain Res.* 324. Pg. **1–14.** DOI: 10.1016/j.bbr.2017.01.046
5. Hardell, L. (2017). Effects of Mobile Phones on Children's and Adolescents' Health: A Commentary. *Child development. 89.* Pg. **3-4.** http://dx.doi.org/10.1111/cdev.12831.
6. Kim, S-E., Kim, J-W., Jee, Y-S. (2015). Relationship between smartphone addiction and physical activity in Chinese international students in Korea. *J Behav Addict.* 4(3). https://doi.org/10.1556/2006.4.2015.028.
7. Nishad, P., Rana, A.S. (2016). Impact of mobile phone addiction among college going students: A literature review. *Adv Res J Soc Sci.*7(1). Pg. **111–115.**
8. Olson, J.A., Stendel, M., Veissiere, S. (2020). Hypnotized by Your Phone? Smartphone Addiction Correlates with Hypnotisability. *Brief Research Report 25 June 2020.* http//doi.org/10.3389/fpsyt2020.00578.
9. Reinecke, L., Aufenanger, S., Beutel, M.E., Dreier, M., Quiring, O., Stark, B., et al. (2017). Digital stress over the life span: the effects of communication load and internet multitasking on perceived stress and psychological health impairments in a German probability sample. *Media Psychol.* 20. Pg. **90–115.**
10. Rosen, L.D., Whaling, K., Carrier, L.M., Cheever, N.A., Rokkum, J. (2013). The media and technology usage and attitudes scale: an empirical investigation. *Comput Human Behav.* 29. Pg. **2501–2511.**
11. Schoeni, A., Roser, K., Röösli, M. (2015). Symptoms and cognitive functions in adolescents in relation to mobile phone use during the night. *PLoS ONE.* 10(7).
12. Thomée, S., Härenstam, A., Hagberg, M. (2011). Mobile phone use and stress, sleep disturbance, and symptoms of depression among young adults-a prospective and cohort study. *BMC Public Health.* 11. Pg. **66.**
13. Epilepsy: Avoid talking on smartphones for a long duration; prolonged use can trigger epileptic seizures - The Economic Times https://m.economictimes.com/magazines/panache/avoid-talking-on-smartphones-for-long-duration-prolonged-use-can-trigger-epileptic-seizures/articleshow/74081767.cms.

27

Effect of Environment on Loneliness in Boys and Girls of Divorced Parents

Dr. Vinita Gupta
Associate Professor
Kanohar Lal Snatkottar Mahila Mahavidyalaya
Meerut
Email: vinitagupta122002@gmail.com

Dr. Kavita Gupta
Lecturer
Kanohar Lal Snatkottar Mahila Mahavidyalaya
Meerut

Abstract

The study of loneliness and Impulsiveness is attracting the attention of an ever-increasing number of psychologists in all parts of the world and is becoming important to the development of personality. Nowadays individual is feeling more strained, more lonely and more suffocated. Early investigators have tried to study the different variables of loneliness and impulsiveness but the field is still full of contradictory findings and conflicting opinions and loyalties. Not only this, most of the studies have to conduct in the field of divorce but very few have been conducted with a view to see the impact of divorce on the psychological development of personality. All these tempted me to select a problem from this field and so here it is ——

Keywords

Loneliness, Impulsiveness, Variables, Divorce, Environmental Psychology, MULN Scale, Linkert Method, Adolescent.

Environmental Psychology had its beginning in the year 1960s in the United States. This development was a combination of social and political forces but it made psychologists more aware to study the impacts of the environment on behaviour. There was a time when an environmental movement occurred and it uncovered such facts which could prove to be a threat to human existence. This field though developed recently but can prove a better branch of psychology to understand human behaviour as we all are aware of the fact that though human behaviour is always inherited it reaches the highest peak of development through involuntary. Kaplan (1972) proposed evolution but in 1987 he has consistently found that humans usually like to choose a natural environment in preference to one that is modified by humans. Burnett 1974 was the first to describe a constructed environment that was physically compatible with the psychological development of children but in families where children have divorced parents, they are not able to get a healthy structured environment which is essential for the normal growth of the personality of children. Divorce directly affects more than I million children a year in the united states.

Hetherington has studied the circumstances of divorce over long periods (Hetherington, Cox & Cox 1976, 1978, 1979). She found that the circumstances produced a situation where the mothers felt trapped and the fathers

felt as though they were shut out. As a result, the mothers would become overly strict toward the children while the fathers tended to become much more permissive. Both parents felt incompetent, lonely, alienated and depressed. Mothers feel so trapped that their incomes are sharply reduced so they are forced to work and care for the children simultaneously. Weitzman (1985) found that the average divorced mother's income is reduced by 73% while the divorced father's income increases by 42%.

In a meta-analysis of 72 students on the effects of divorce on children, Amato and Keith (1991) showed that children of divorced parents achieve lower scores than those in nondivorced families. The reason behind this is that the children of divorced parents according to the Hetherington studies, showed much less affection and less social compliance than children of nondivorced parents. The relationship between mothers and sons becomes particularly strained. As the mother becomes more strict, the son tends to rebel.

Kulpa and Weingarten (1979) attempted to study the long-term effect on adults who had been affected due to divorce. In general, they could not find as many differences as they expected from those of non-divorced families.

Franklin, Janoff, Bulman, and Roberts (1990) echoed these findings when they asked college students of divorced versus nondivorced parents about their chances of future marriage prospects. Children of divorced parents were less optimistic and had less trust in future spouses than those from non-diverced but this was affected by whether there was the continuous conflict in the family.

Hillevi (1988) studied adolescents (ages 15-16 years). He found that subjects in divorced families and in families of discord experienced more distress symptoms and loneliness than subjects in intact families. Ostrov & Offer (1978) Weiss (1973) found the transformation of the attachment bond to parents has been pinpointed as a critical antecedent of loneliness in adolescence. Beer (1992) found children of divorced parents scored higher on aggression, resentment and assault than did children of non-divorced parents.

Holdnack Mazur (1992) found that a lack of family closeness after divorce may affect the children's long-term psychological adjustment.

Elizabeth Mazur (1992) found girls scored higher than boys on the scale of negative cognitive errors for divorce events and reported more symptoms of depression, anxiety and low self-esteem than did boys.

So the present study was designed to find out the "EFFECT OF ENVIRONMENT ON LONELINESS OF BOYS AND GIRLS OF DIVORCEE PARENTS" and a few such problems have been selected for further investigation. These problems are as follows:

1. The first problem of the study is that adolescents really feel more lonely due to the unhealthy environment caused by divorce.
2. The second problem of the study is Do the girls really feel more lonely than boys due to the unhealthy environment caused by divorce?

On the basis of the above-mentioned problems the following hypotheses were formulated:

1. Adolescents having divorced parents feel more lonely than non-divorced.
2. Girls feel more lonely than boys having divorced parents.

Method

In this study the effect of environment on loneliness between two groups namely the adolescent of divorced parents and the adolescent of non-divorced parents.

Sample

80 adolescents responded to the questionnaire out of which 40 were divorced and 40 were non-divorced. The number was divided equally among males and females. They were of the age group 16-18 years.

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Jan.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.783
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.27

Design

A 2X2 factorial design was used and was analysed with the help of the Likert method and the measuring tool is the MULN scale constructed by Dr S. N. Rai & Dr S. P. Pandey.

Scoring

This scale contains 25 items in all out of them 13 items are in the favourable direction and 12 items are in the unfavourable direction. All these items are scored by Likert Method. According to the Likert method.

The scores are given on unfavourable statements i.e. 1,2,3,4 on often, sometimes, rarely, and never responses respectively and 4,3,2,1 on favourable statements. At last, the score of each item is added and thus in this (MULN) scale the minimum score can be 25 and the maximum score 100.

Result Table

There are two tables of results table no. 2 shows a comparison between divorced and non-divorce adolescents and table no. 2 shows the comparison between girls and boys of divorced parents.

Table No. 1

Comparison Between Divorced and Non-Divorced Adolescents

	Mean	S.D.	T value
Divorced	15.24	8.54	3.01
Non-Divorced	9.95	7.21	

Table No. 2

Comparison Between Boys and Girls of Divorced Parents

	Mean	S.D.	T value
Divorced	10.70	2.25	1.07
Non-Divorced	11.48	4.03	

Result and Interpretation

The result reveals of the present study in fact after the statistical analyses of this study that adolescents of divorced parents feel more lonely in comparison to non-divorced parents, because they do not get a healthy atmosphere, which is essential for the normal development of personality. The above findings were confirmed in a study conducted by Spigelman (1991) and established finding that subjects with divorced parents had higher levels of hostility, aggression and anxiety, Spielberger (1970) already has established the fact that anxiety is probably more basic and is frequently one of the important components to create the more complex feeling of loneliness in adolescent.

The experimenter found in the present study that girls felt more lonely than boys and the difference was found to be significant. Hillevi (1988) confirmed the above findings because the girls reported the lowest self-esteem in comparison to boys.

References

1. Aro, Hillevi. (1988). Parental Discord, Divorce and Adolescent Development. *European Archives of Psychiatry and Neurological Sciences.* Vol. 237. (2). Pg. **106-111.**
2. Beer, Joe., Beer, John. (1992). Aggression of youth as related to parental Divorce and eye colour, perceptual and motor.
3. Bradburn, N. (1969). The Structure of Psychological wellbeing. Chicago Aldine.
4. Holdnack, James A. (1992). The long effects of Parental Divorce on Family Relationships and the effects on Adult Children's Self Concept. *Journal of Divorce and Remarriage*. Vol. 18. (3-4). Pg. **137-155.**

5. Mazur, Elizabeth., Wolchik, Sharlene A., Sandler, Irwin N. (1992). Negative Cognitive errors and Positive illusions for Negative Divorce Events: Predictors of Children's Psychological Adjustment. Vol. 20(6). 5230542.
6. Ostrov, E., Offer, D. (1978). Loneliness and the Adolescent. *Adolescent Psychiatry.* 6. Pg. **34-50.** (from Psychological Abstracts, 1981, 66 Abstract no. 1329.)
7. Perlman, D., Gerson, A.C., Spinner, B. (1978). Loneliness among senior citizens. *An empirical report essence*. 2. Pg. **239-248.**
8. Spielberger, C.D., Gorsuch, R.L., Lushene, R.E. (1970). Manual for the state trait Anxiety. Inventory. Polo Alto Calif: Consulting Psychological Press.
9. Spigelman, Gabriella., Spigelman, Ami., Englesson, Irmelin. (1999). Hostility, Aggression and Anxiety levels of Divorce and non-divorce children as manifested in their responses to projective tests. *Journal of Personality Assessment*. vol. 56(3). Pg. **438-452.**
10. Stevenson, M.R., Black, K.N. (1988). Parental absence and Sex-role Development. *A meta-analysis child development*. 59. Pg. **793-814.**
11. Weiss, R.S. (1973). Loneliness. The experience of Emotional Social Isolation. Mass. MIT Press: Cambridge.

SOCIAL SCIENCES	SINCE	ISSN (P)	ISSN (E)	PERIOD	IMPACT FACTOR
Research Journal of Philosophy & Social Sciences	1974	0048-7325	2454-7026	Half Yearly June-Dec.	8.904
Review Journal of Philosophy & Social Sciences	1975	0258-1707	2454-3403	Half Yearly Mar-Sept.	8.749
Review Journal of Political Philosophy	2003	0976-3635	2454-3411	Half Yearly Mar-Sept.	8.734
Journal Global Values	2010	0976-9447	2454-8291	Half Yearly June-Dec.	8.808

Arts & Humanities	SINCE	ISSN (P)	ISSN (E)	PERIOD	IMPACT FACTOR
Notions: A Journal of English Literature	2010	0976-5247	2395-7239	Half Yearly June-Dec.	8.832
Artistic Narration: A Journal of Performing Art	2010	0976-7444	2395-7247	Half Yearly June-Dec.	8.851

Science	SINCE	ISSN (P)	ISSN (E)	PERIOD	IMPACT FACTOR
Voyager: A Journal of Sciences	2010	0976-7436	2455-054X	Yearly	8.005

Multidisciplinary	SINCE	ISSN (P)	ISSN (E)	PERIOD	IMPACT FACTOR
Shodhmanthan (शोधमंथन) in Hindi	2010	0976-5255	2452-339X	Quarterly Mar-Sept.	8.783

* All Journals are available in Print and online (Open Access)
* Plagiarism: Check for similarity to prior published works through Ithenticate (Turnitin)
* Double blind peer reviewed.

Crossref doi International Innovative Journal Impact Factor (IIJIF) OPEN ACCESS Scientific Journal Impact Factor

Published By :

Journal Anu Books
In Support of KIET

Shivaji Road, Near Petrol Pump, Meerut, UP (india)
E-mail : kietjournals@gmail.com
journalanubooks@gmail.com
Website : www.anubooks.com, www.kiet.asia
Phone : 0121-4007472
Mob. : 91-9997847837, 8279743450

₹ 1000/-